Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जुलाई-अगस्त, 2015

अक्षरा

139

33 वाँ वर्ष

साहित्य की द्वैमासिकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अक्षरा के विभिन्न विशेषांक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अक्षरा

जुलाई -अगस्त 2015

139

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

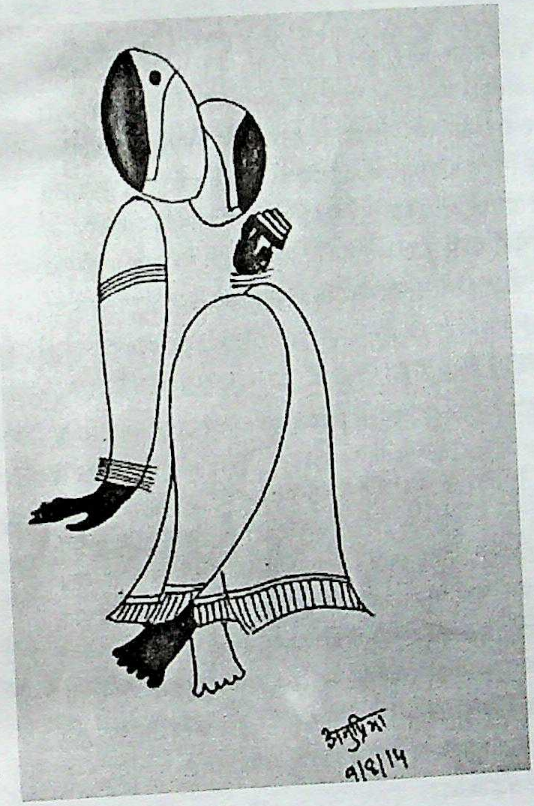

कैलाशचन्द्र पन्त
प्रधान सम्पादक

डॉ. सुनीता खत्री
सम्पादक

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
No. 4550
Dated 18.12.2023
केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से सहयोग प्राप्त

मूल्य: एक प्रति : 25 रुपए/ वार्षिक शुल्क : 150 रुपए/ आजीवन : 2000 रुपए
विदेशों के लिए : एक अंक : 6 डॉलर, वार्षिक : 30 डॉलर
चेक या ड्राफ्ट 'म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति- 'अक्षरा'' के नाम देय
सम्पर्क : म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल - 462002 (म.प्र.)
दूरभाष : 0755- 2660909, 2661087, ई-मेल - hindibhawan.2009@rediffmail.com
वेबसाइट - www.madhyapradeshrashtrabhasha.com

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

यदि सकारात्मक दृष्टि हो और बिना किसी चश्मे के वस्तुपरक समीक्षा की जाये तो कहना होगा कि दुनिया के देशों में भारत की प्रतिष्ठा बढ़ी है। विदेशों में रहने वाले भारतीयों में ही नहीं, भारतवासियों को भी गर्व की अनुभूति हो रही है। इसका सीधा प्रभाव उस पूरे चिंतन पर हो रहा है जो अब तक विदेशी विचारों से आक्रांत था। हम अधिक भारतीय हो रहे हैं। क्या इसका संकेत उलेमाओं की प्रधानमंत्री से भेंट में नहीं दिखाई देता? धर्मगत भेदभाव को भूलकर यदि मुसलमान दिल से यह स्वीकार करते हैं कि भारत उनका भी देश वैसे ही है जैसे हिन्दुओं का तो फिर मनोमालिन्य दूर होने में कितनी देर लगेगी? खटास का कारण तो यही था कि एक हजार वर्षों से भारत में बस जाने के बाद भी मुसलमानों ने अपने लिये अलग देश की मांग की। पाकिस्तान बना। काफी संख्या में मुसलमानों ने भारत में ही रहना उचित समझा। जो यहाँ रहे उन्होंने यह तो महसूस किया ही होगा कि हिन्दू समाज उनके प्रति किसी तरह का दुर्व्यवहार नहीं करता। तभी तो उसी समाज के बीच रहना उचित समझा। लेकिन कालांतर में जब मुस्लिम समाज ने अपने लिये विशेषाधिकार की मांग शुरू की तो लगने लगा कि वे अभी भारतीय नहीं हुए हैं। अपनी अलग हैसियत कायम रखना चाहते हैं। इस स्थिति के कारण ही देश में हिन्दू-मुस्लिम तनाव बना था। यह पहली बार है कि मुसलमान उलेमाओं ने खुल कर कहा है कि भारत उनका भी देश है और वे भारतीय हैं। यह भाव जैसे ही पूरे मुस्लिम समाज में व्यापक होगा देश में सौहार्द्र का वातावरण तैयार हो जायगा। यह उस भारत की प्रगति का मूलाधार होगा जिसकी संतान हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी। जो मार्क्सवादी विदेशी विचारधारा से प्रभावित होकर भारत की मनीषा का माखौल उड़ाने की फूहड़ता का परिचय देते रहे, इस आरोप से बच नहीं सकते कि भारतीय समाज के विखंडन के सारे कृत्यों के लिए वे उत्तरदायी हैं। उनके कर्मों से सांप्रदायिक तनाव बढ़े। कम्युनिस्ट पार्टी के वे दस्तावेज मौजूद हैं जिसमें उन्होंने भारत के विभाजन की मांग का समर्थन किया था। साथ ही राजनीतिक महत्वाकांक्षा से प्रेरित कुछ नेताओं ने देश को जातिवाद में बांटा। इस परिप्रेक्ष्य में जातिवाद, संप्रदायवाद के बंधनों से मुक्त होकर भारतीय होने का जो भाव जनता में दिखाई दे रहा है उसे मोदी सरकार के एक वर्ष के कार्यकाल की उपलब्धि माना जा सकता है। कुछ तत्व हैं जो योग का विरोध यह मानकर कर रहे हैं कि वह हिन्दुओं के धर्म का अंग है। दुनिया के १७७ देशों ने (जो हिन्दू देश नहीं हैं) संयुक्त राष्ट्र संघ में २१ जून को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप मे आयोजित करने का समर्थन किया है। किसी ने नहीं कहा कि यह हिन्दू धर्म से जुड़ी चीज है। लेकिन मुसलमानों के कुछ कट्टरवादी नेताओं ने योग का विरोध शुरू कर दिया है। सेक्युलर कांग्रेसियों ने और कम्युनिस्टों ने परोक्ष रूप से उनका समर्थन किया है। उन्हें पता होना चाहिये कि भारत का एकमात्र धर्म सनातन धर्म है। सनातन धर्म उन सिद्धातों को मानता है जो मनुष्य के विकास के लिये हर काल और हर देश में सदा-सर्वदा शुभदायी हैं। इसीलिये वे शाश्वत और सनातन हैं। भारत में रह कर भारत की सनातन परंपरा का विरोध करने वालों को भारतीय कैसे माना जा सकता है। यह ठीक है कि ऐसे तत्व थोड़े ही बचे हैं, पर बीमारी के लक्षण मौजूद हैं। फिर भी प्रधानमंत्री के विदेशी दौरों से भारतीयों में भारतीय होने का गौरवपूर्ण भाव जाग्रत हुआ है।

भारतीयता का यह भाव विकसित करने वाली योजना के अन्तर्गत ही स्वच्छता अभियान शुरू किया गया। सड़कों और कालोनियों में झाडू हाथ में लेने वालों के मन से यह भावना निकल जायगी कि सफाईकर्मी होने का अर्थ निम्न जाति का होना है। सामाजिक समरसता का व्यावहारिक प्रयोग करना प्रधानमंत्री की अनूठी सूझ है। वैसे महात्मा गाँधी ने वर्धा आश्रम में आने वाले प्रत्येक कार्यकर्ता और नेता को अपना शौचालय स्वयं साफ करने का नियम बना रखा था। वे भी जाति व्यवस्था को तोड़ना चाहते थे। डॉ. राममनोहर लोहिया ने तो 'जाति तोडो' अभियान ही चलाया था। पर नरेन्द्र मोदी ने पूरे राष्ट्र को ही एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

झटके में झकझोर दिया। गंगा शुद्धिकरण का कार्यक्रम भी स्वच्छता अभियान की कड़ी है जो समुन्नत सांस्कृतिक दृष्टि है।

अपने निर्वाचन के तुरंत बाद एक सभा को संबोधित करते हुए मोदी जी ने कहा था कि देश के विकास को एक आंदोलन बना पड़ेगा जिसमें प्रत्येक नागरिक की भागीदारी हो। इसके पहले चरण में योजना आयोग को भंग कर नीति आयोग बना दिया। अब सभी राज्यों के मुख्यमंत्री राज्यों के विकास की परियोजनाओं को पूरे देश के परिप्रेक्ष में बना सकेंगे। इस काम को वे सही ढंग से तभी कर सकते हैं जब वे अपने राज्यों में कुछ इसी ढंग की प्रक्रिया प्रारंभ करें। इसका अर्थ है कि योजनाओं का निर्माण और क्रियान्वयन विकेन्द्रित होगा। जन-भागीदारी बढ़ती जायगी। ये कुछ बड़े और व्यापक लक्ष्य हैं जिनके परिणाम निकट भविष्य में दिखाई देंगे।

आर्थिक क्षेत्र में कुछ आधारभूत कार्यक्रम शुरू कर दिये गये हैं। उनका उद्देश्य उत्पादन और निर्यात बढ़ाने के साथ आयात पर निर्भरता कम करना है। सड़क, बिजली और पानी को प्राथमिकता दी जा रही है। गरीबों के लिये जन-धन योजना, अटल सुरक्षा योजना बीमा योजना जैसे कामों की प्रशंसा करनी होगी। सबसे बड़ी बात है कि सभी मंत्री अपने अपने कामों में गंभीरता से लगे हैं। अधिकारियों को भी अब अलसाने का मौका नहीं मिल रहा है। वे अब मंत्रियों के सिफारिशी फोनों से परेशान नहीं हो रहे। प्रधानमंत्री से सीधा संवाद संभव है।

लेकिन जनता प्रत्यक्ष में कुछ महसूस करना चाहती है। सरकारी आँकड़े जो दावे करें, सचाई यह है कि महंगाई कम नहीं हुई। रेल यात्राएं सुविधापूर्ण नहीं हो रहीं। सुरक्षा भी नहीं है। शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन की दिशा पर संवादहीनता दिखाई देती है। विपक्षी दलों के साथ सामंजस्य का अभाव क्यों है? प्रजातंत्र के भविष्य के लिये परस्पर टकराव हितकारी नहीं होता। देश को आधुनिक बनाने के लिये बुलेट ट्रेन शायद जरूरी लगती हों, पर आज ज्यादा जरूरत अधिक और सुरक्षित रेलगाडियों की है। डाक विभाग, जो किसी समय सबसे विश्वसनीय था, आज ध्वस्त होता दिखाई दे रहा है। कुशल-क्षेम वाला गरीब का पोस्टकार्ड उसके रिश्तेदार तक समय पर पहुँचाना क्या सरकार की जवाबदारी नहीं है। स्मार्ट सिटी बनाने की अपेक्षा स्मार्ट गाँव बनाने पर सरकार क्यों नहीं सोच रही। भारत गाँव में बसता है। उसे सुविधा पहुँचाना प्राथमिकता होनी चाहिये। लगता है हमारी सोच से गाँव बाहर होता जा रहा है। भूमि अधिग्रहण अध्यादेश कानून की शक्ल ले इस पर जिन्हें आपत्ति है उनकी मंशा राजनीतिक है यह जानते हुए भी कहना चाहेंगे कि औद्योगिकीकरण की अधोसंरचना के लिये जमीन का अधिग्रहण भले ही किसान को आत्महत्या की स्थिति से उबारने वाला हो, लेकिन उसके साथ ही गाँवों की अधोसंरचना की अवधारणा भी प्रस्तुत की जाती तो विपक्ष को भ्रम फैलाने का अवसर ही नहीं मिलता। इतना कह लेने के बावजूद हमारी मान्यता है कि दीर्घकालीन योजनाओं का लाभ देश-वासियों को जरूर मिलेगा और उसके लिये मोदी सरकार ने ठोस आधारभूमि एक वर्ष में तैयार कर ली है। इसीलिये नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व के प्रति जनता का विश्वास कम नहीं हुआ है। वह उनकी निष्ठा, ईमानदारी और परिश्रम से आश्वस्त है कि मोदीजी ने भारत की डगमगाती नौका की पतवार सही समय पर थाम ली है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अक्षरा

जुलाई-अगस्त 2015

139

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय-

आलेख -

- सोवियत और अमेरिकी मॉडल की शिक्षा : **शंकर शरण : 8**
- जब कुछ भी, कहीं, कभी भी नहीं था तब.... : **मोहन बांडे : 15**
- भागवत चेतना का संस्कारण : **सुरेन्द्र बिहारी गोस्वामी 'चैतन्य' : 21**
- क्या ध्वस्त मलबे या नींव पर ही सैकड़ों मस्जिदें निर्मित हैं? : **हरिकृष्ण निगम : 29**
- आपके व्यक्तित्व का दर्पण है आपकी आभा : **विजय कुमार उपाध्याय : 36**
- स्वतंत्रता संग्राम के सिद्ध महात्मा : लोकमान्य तिलक : **अनामिका प्रकाश श्रीवास्तव : 39**
- साहित्य वह धर्म है जिसका ईश्वर मनुष्य है : **श्रीराम परिहार : 42**

संस्मरण

- वयोवृद्ध चाचा : **न्यायमूर्ति देवदत्त माधव धर्माधिकारी : 47**

साक्षात्कार

- वरिष्ठ रचनाकार सूर्यबाला से पद्मजा शर्मा की बातचीत : 50

जीव-जगत

- पोतकृमि : **परशुराम शुक्ल : 56**

प्रवासी कलम से

- सोच (कहानी) : **अनिल पुरोहित : 59**

कहानी -

- गर्भगृह : **क्षमा कौल : 61**
- एक और भीष्मप्रतिज्ञा : **स्वाति तिवारी : 68**
- अपने-अपने हिस्से का कबाड़ : **निरुपम : 74**
- ढीली होती बुनावट : **शीला मिश्रा : 83**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघुकथा

- ♦ मुद्दतों बाद, ममता : **नीता श्रीवास्तव : 87**
- ♦ किसी का कौन हुआ उम्र भर फिर भी : **ऋचा शर्मा : 88**
- ♦ पड़ोसी : **पूरनचन्द गुप्ता : 89**
- ♦ प्राणिनाम् आर्तनाशनम् : **भारती राउत : 90**

कविताएँ -

- ♦ **केशव शरण / 92**
- ♦ **रमेशचन्द्र पन्त/ 93**
- ♦ **वन्दना नाइक/ 94**
- ♦ **राजेन्द्र निशेश/ 95**
- ♦ **शुभदर्शन/ 96**

गीत/नवगीत

- ♦ **प्रेमशंकर रघुवंशी/ 97**
- ♦ **अरविन्द अवस्थी /99**
- ♦ **मुनि देवेन्द्र सिंह/100**
- ♦ **हरिशंकर सक्सेना/101**
- ♦ **संजय शुक्ल/101**

पुस्तक चर्चा-

- ♦ सगोत्री विधाओं का 'अकेला मेला' : **केशव प्रथमवीर : 102**
- ♦ एक अविस्मरणीय स्मारिका : **कैलाशचन्द्र पन्त /106**

समीक्षा -

- ♦ विकल्पों के बीच विकल्प की कथा : (सुखदेव प्रसाद दुबे) **रमेश दवे/107**
- ♦ समीक्षा के अभिनव सोपान-एक दृष्टि (सं.-पशुपतिनाथ उपाध्याय) : **भगवान दास जैन /110**
- ♦ जीवन-सागर से मोती चुनती गैरहाजिर स्त्री : **मैथिली साठे /111**
- ♦ लिखि लिखि कागद कोरे : **माताचरण मिश्र /115**
- ♦ नमि मेरी आँखें : (राज हीरामन) **गोवर्धन यादव /116**
- ♦ 'माँ और बचपन' : (कशिश और कश्मिक): **राधारानी चौहान /118**

पत्रांश-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

सोवियत और अमेरिकी मॉडल की शिक्षा

-शंकर शरण

भारतीय संसद में मानव संसाधन मंत्री ने बताया कि दिसंबर तक नई शिक्षा नीति बनेगी, जिसके लिए राज्यों से तथा निचले स्तर तक विमर्श चल रहा है किन्तु इसमें 'नया' क्या होने वाला है, इसका संकेत नहीं मिला है।

नया शिक्षा दस्तावेज बनाने से पहले यह समीक्षा जरूरी है कि पिछले शिक्षा दस्तावेजों, अनुशंसाओं का क्या हुआ? उनका आद्योपांत विश्लेषण होना चाहिए, ताकि विगत साठ वर्षों का अच्छा-बुरा, सकारात्मक-नकारात्मक, उपयोगी और बेकार की पहचान करने में मदद मिले। अच्छे उद्देश्य पूरे क्यों नहीं हुए? बुरे उद्देश्य, जैसे शिक्षा का राजनीतिकरण, दस्तावेजों में कैसे घुस आए? शिक्षा में सरकार की और समाज की भूमिका क्या और कितनी हो? शिक्षा और रोजगार के बीच बन गए अभिन्न संबंध को कैसे लेना चाहिए? क्या शिक्षा की परिभाषा बदल देने का समय आ गया है? यदि नहीं, तो शिक्षा का बुनियादी उद्देश्य, जो रोजगार कभी, कहीं, नहीं रहा है, पाने के लिए क्या होना चाहिए? देश में शुद्ध ज्ञान, स्वतंत्र चिंतन को बढ़ावा देने यानी सांस्कृतिक उत्थान के लिए क्या किया जाना चाहिए? क्या भारतीय भाषाओं के सहज विकास के लिए कुछ किया जा सकता है?

ऐसे अनेक बुनियादी प्रश्नों को पूरी गंभीरता से लेना और अनुभवी, अग्रणी लोगों की राय जानना आवश्यक है। तभी कोई नया दस्तावेज या पाठ्यचर्या आदि बने। उसे ऐसा कचरा नहीं होना चाहिए, जिसमें असम्बद्ध विचार, लफ्फाजियाँ और रंग-बिरंगी, अटपटी, अंतर्विरोधी परिकल्पनाएं भरी मिलें। जिनसे न किसी को दिशा मिले, न प्रेरणा। इसीलिए जो यों ही गोदामों, अलमारियों में पड़ी खत्म हो जाएं। जैसा पिछले दस्तावेजों के साथ हो चुका है। अत: नई नीति का नयापन केवल औपचारिक न रहे, वह वास्तविक रूप से प्रेरक बने। इसकी गारंटी का प्रयत्न होना चाहिए। हम न तकनीक-व्यापार में दुनिया से पीछे रहें, न स्वतंत्र बौद्धिक चिन्तन में। ज्ञान-संस्कृति ही शिक्षा का प्रथम तत्व है, मानवता की यह अनमोल थाती हमें भूलनी नहीं चाहिए। वस्तुत: सदियों से भारत की मुख्य गौरवशाली पहचान भी महान चिन्तन ही रही थी। उसे पुन: स्थापित करना सरल कार्य नहीं है, किन्तु इससे कतराना भी शोभनीय नहीं होगा।

यह सब हो सके, इस के लिए देश की शिक्षा प्रणाली में सोवियत-नेहरूवादी मॉडल की जमी बीमारियाँ पहचाननी और दूर करनी जरूरी हैं। यह बीमारी सर्वप्रथम इस मान्यता में है कि सब कुछ सरकार करेगी। फिर इसमें कि किसी वैज्ञानिक, प्रगतिशील, राजनीतिक विचारधारा को फैलाना शिक्षा-नीति का पुनीत उद्देश्य है। वह विचारधारा जिसमें कारखानों को 'मंदिर' कहा जाता था और मंदिरों को अंधविश्वास। वह बीमारी इस तरीके में भी थी कि ऐसी विशेष विचारधारा में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पगे लोगों को ही महत्वपूर्ण भार देना चाहिए। तब इस प्रवृत्ति में कि साहित्य, इतिहास, शोध आदि में पूर्व-निर्धारित निष्कर्षों के अनुरूप सामग्री खोज कर प्रचारित करनी चाहिए। अंततः इस बात में कि घोषित कार्यों को पूरा करने तथा उनका मूल्यांकन करने में कागजी खानापूर्ति ही पर्याप्त है।

संक्षेप में, यह सब यहाँ सोवियत मॉडल की शिक्षा की पहचान, परिणाम रहे हैं। इसमें स्वयं अपनी पीठ थपथपा कर, कागजी उपलब्धियाँ गिना कर और आपस में एक-दूसरे को सम्मान, पुरस्कार देकर शिक्षा में प्रगति का आश्वासन दिया जाता रहा है। इस गहरे पैठे रोग को पहचानना और दूर करना इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि गैरकांग्रेसी, गैरवामपंथी लोगों में भी उपर्युक्त रोग आ चुके हैं। यदि सावधानी न बरती गई, तो रोग नए कलेवर में बना रह जा सकता है।

अतः नकली शिक्षाशास्त्रियों, कामों, प्रवृत्तियों की पहचान कर उन्हें नमस्कार करना जरूरी है। विगत दशकों में जिन्हें शिक्षाविद मान कर शिक्षा दस्तावेज बनाने से लेकर, सरकारी संस्थाएं चलाने, पाठ्य-चर्या और पाठ्यपुस्तकें तैयार करवाने आदि कार्य दिए जाते रहे हैं, वे अधिकांश सुयोग्य नहीं रहे हैं। उनमें कई तो सोवियत, नेहरूवादी रोग से ग्रस्त साधारण राजनीतिक प्रचारक मात्र थे जो अपनी ही खामख्यालियों को शिक्षा की चिंता मानते थे। इस क्रम में ठीक पिछला संस्करण एक ऐसे कथित शिक्षाशास्त्री के हाथों संचालित हुआ जो जल्द ही आम आदमी पार्टी के एक कर्णधार बने और चार कदम भी सधे पैर नहीं चल सके। उनके द्वारा बनवाई गई समाज विज्ञान पाठ्य-पुस्तकों में जो विध्वंस किया गया है, वह किसी सच्चे जानकार के लिए कल्पनातीत होगा। यह हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक दुरावस्था का परिचायक है कि बरसों से चल रहे उस विध्वंस को किसी महत्पूर्ण व्यक्ति ने नहीं देखा, न आवाज उठाई। संभवतः हमारा वैचारिक-राजनैतिक स्तर इतना गिर चुका है कि हम शैक्षिक विध्वंस को पहचानने योग्य भी नहीं बचे हैं।

इसकी परख होनी चाहिए और राजनीतिक एक्टिविस्टों को शिक्षाशास्त्री मानने की भूल दुहराई नहीं जानी चाहिए। सोवियत युग का रूसी अनुभव था कि प्रतिभावान छात्र विज्ञान की ओर चले जाते थे, साहित्य, इतिहास, दर्शन आदि की ओर नहीं। इन विषयों में कम्युनिस्ट पार्टी-नियंत्रण था और इसीलिए प्रतिभाओं के विकास का अवसर ही नहीं बचता था। इसीलिए सात दशकों के सोवियत शासन में रूस में कोई बड़ा चिंतक, दार्शनिक, लेखक, कवि, इतिहासकार आदि प्रायः नहीं हुआ। जबकि भौतिकी, रसायन, गणित, इंजीनियरिंग, तकनीकी आदि क्षेत्रों में वैज्ञानिक और आविष्कारक वहाँ नियमित होते रहे। इस का कारण था कि सामाजिक, मानविकी विषयों में मार्क्सवादी विचारधारा का कड़ा पहरा था, जिस से सच्ची प्रतिभाएं उस दिशा में जाने से परहेज करती थीं। जो गईं भी, सो मारी गईं।

काफी हद तक हमारे देश में भी वही हुआ है। अपनी पीठ स्वयं थपथपाने वाले अनगिनत 'एमिनेंट हिस्टोरियन' जैसे लफ्फाजों के अलावा उन विषयों में कुछ दिखाने लायक हमारे पास नहीं है। सामाजिक, मानविकी विषयों में पूरा रेगिस्तान फैल गया है। इस लज्जास्पद दुरावस्था को बदलने का उपाय गंभीरता से सोचा जाना चाहिए। यह तभी हो सकता है, जब स्कूली से लेकर विश्वविद्यालयीन शिक्षा तक राजनीतिक प्रचार के कीटाणुओं का नाश किया जाए। विगत दशकों में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शैक्षिक दस्तावेजों, पाठ्यक्रमों, पाठ्य-चर्याओं, पाठ्य पुस्तकों तथा समाज विज्ञान एवं मानविकी विषयों के अध्ययन-अध्यापन, शोध, विमर्श आदि में विशिष्ट राजनीतिक प्रेरणा, निर्देश, दबाव, आदि विभिन्न रूपों में लगातार बढ़ते गए हैं। इन का पूर्ण खात्मा आवश्यक है, ताकि शिक्षा, चिन्तन, शोध को सचमुच स्वतंत्र बनाया जा सके।

यह हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक दुरावस्था का परिचायक है कि बरसों से चल रहे उस विध्वंस को किसी महत्पूर्ण व्यक्ति ने नहीं देखा, न आवाज उठाई। संभवतः हमारा वैचारिक-राजनैतिक स्तर इतना गिर चुका है कि हम शैक्षिक विध्वंस को पहचानने योग्य भी नहीं बचे हैं।

यूजीसी, यूपीएससी तथा एलबीएस नेशनल अकादमी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन जैसे सभी महत्वपूर्ण प्रशिक्षण संस्थानों के पाठ्य-निर्देशों, सामग्रियों की तदनुरूप समीक्षा भी जरूरी है क्योंकि इन जगहों को भी विचारधारा-ग्रस्त बनाया गया है। इसके बिना सोवियत मॉडल मुकम्मिल न होता। अतएव, महत्वपूर्ण प्रतियोगी परीक्षाओं, प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थानों के सिलेबस आदि भी इस तरह से गढ़े मिलते हैं कि हरेक प्रतियोगी परीक्षार्थी और भावी प्रशासक को वामपंथी, हिन्दू विरोधी पाठों से लैस होना ही पड़े। विशेष प्रकार के लेखक, पुस्तक, पाठ, प्रश्न, समस्याओं का चयन तथा दूसरे प्रकार के विद्वानों, ग्रंथों, विषयों की उपेक्षा द्वारा युवा प्रशासकों, नीति-निर्माताओं को उसी राजनीतिक झुकाव में ढालने का खुला और सफल यत्न होता रहा है। उन संस्थानों में भी उपयुक्त सुधार होना चाहिए ताकि स्वतंत्र चिन्तन, देश-हित, सामाजिक एकता और न्याय भावना के अनुरूप नई पीढ़ी को प्रशिक्षित किया जा सके।

उपर्युक्त बिन्दुओं से ही जुड़ा एक जरूरी कार्य यह भी है कि समाज विज्ञान वाले विषयों की शिक्षा में दशकों से जारी भारत संबंधी उस तमाम प्रस्थापनाओं की कड़ी विद्वत-समीक्षा की जाए, जिनसे यहाँ भेदभाव, दुराव वाली राजनीतियों को बल पँहुचाया जाता रहा है। जैसे, 'आर्य-द्रविड़', 'पूर्वोत्तर नस्ल', 'ब्राह्मणवाद', 'अगड़ी-पिछड़ी जातियों का संघर्ष', 'वर्ग संघर्ष', 'साम्राज्यवाद-विरोध' आदि। इनमें से कई अवधारणाएं मुख्यतः काल्पनिक और राजनीतिक हैं, जिनका शिक्षा से उतना संबंध नहीं, जितना एक भारत विरोधी राजनीति को बल पहुँचाने से। कई विश्वविद्यालय विभागों और उनके सिलेबस आदि के सरसरी परीक्षण से भी यह सरलता से दिख जाता है।

अतः उन सब की कड़ाई से जाँच होनी चाहिए और परिणामों को खुले रूप में सबके सामने लाना चाहिए। तदनुरूप जिन प्रस्थापनाओं में मनमानियाँ, अतिरंजनाएं या निराधार तत्व पाए जाएं, उन की सटीक आलोचनाओं को भी शिक्षा और शोध में उतना ही महत्व देकर बताया जाए। उदाहरण के लिए, यदि रोमिला थापर, बिपनचंद्र, वेंडी डोनीजर की पुस्तकें विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती हैं, तो अरुण शौरी, राजीव मल्होत्रा की पुस्तकें भी साथ ही जोड़ी जाएं। यह स्वतंत्र चिंतन को बढ़ावा देने के साथ-साथ देश-हित के सबसे जरूरी कार्यो में से एक है।

हमारे देश में शिक्षा की विडंबना में एक विचित्र बात यह है कि विचारों में हम सोवियत, तथा संरचनाओ में अमेरिकी मॉडलों के अनुगामी बने रहे हैं। लगभग दोनों ही मामलों में विचारहीनता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ही अधिक झलकती रही है। यह मानने में शायद ही किसी को उज्र होगा कि कई मामलों में संयुक्त राज्य अमेरिका हमारा आदर्श बन गया है। शिक्षा दर्शन और पद्धति में भी इसीलिए हम यूरोप के अधिक सधे तरीकों को छोड़ कर सह-शिक्षा, सेमेस्टर, क्रेडिट तथा बेशुमार विषयों के विकल्प, आदि की अमेरिकी पद्धति की ओर चले गए हैं। क्यों गए? यह आज तक किसी दस्तावेज में नहीं बताया गया है। इस से हमारे कथित शिक्षा शास्त्रियों की मतिहीनता का अनुमान हो सकता है। दूसरी ओर, यह अनुकरण कितना लाभकारी या हानिकर था और है, इसे स्वयं अमेरिकी चिंतकों, शिक्षा प्रशासकों के अवलोकनों, अनुभवों से जान सकते हैं। जैसे, रॉबर्ट हचिन्स, विल ड्यूराँ, आदि के अनुभव अवलोकन। मगर आज के भारत में शायद ही किसी नीति-निर्माता या कथित शिक्षा-विदों को यह सब जानने-समझने के लिए अवकाश है। जो भी अमेरिका में बन रहा है, चल रहा है, वह सब स्वत: उत्कृष्ट और अनुकरणीय है, इस बचकानी मानसिकता से भारतीय उच्च वर्ग, प्रशासकीय वर्ग चल रहा है। शिक्षा संरचनाएं, उनका कार्यचालन, आदि इसके सबसे दु:खद उदाहरण हैं। मानो उन्हीं संरचनाओं, तरीकों से अमेरिका महान, धनी और शक्तिशाली बना!

मगर स्वयं अमेरिकी अनुभव ही रेखांकित करते हैं कि वे शिक्षा व्यवस्था में स्वयं को कई यूरोपीय देशों की तुलना में दुर्बल, दोषपूर्ण मानते हैं। इस में सर्वप्रमुख बात है कि शिक्षा को रोजगार मात्र से जोड़ कर देखना एक भारी भूल रही है। भरपूर रोजगार और वस्तुएं, खूब आर्थिक-तकनीकी-व्यापारिक उन्नति आदि हासिल हो जाने के बावजूद व्यक्ति और समाज दिग्भ्रमित, क्षुब्ध, समस्याग्रस्त, निरुपाय से होते जाएंगे। यह हानि मुख्यत: गलत शिक्षा यानी अशिक्षा का ही परिणाम होती है। इसलिए, समय रहते भारतवासियों को भी अपनी शिक्षा-चिंताओं में सुधार कर लेना चाहिए।

इसके लिए एक तात्कालिक, कामचलाऊ रास्ता ज्ञान और विज्ञान के बीच संतुलन रखना हो सकता है। युवाओं को रोजगार की जरूरत है सही, किन्तु उस से पहले उन्हें मनुष्य बनना जरूरी है। शिक्षा यही होती है। स्वास्थ्य, जीवन, परिवार, समाज, मानवीय मूल्य, प्रकृति और विश्व की समझ होना ही ज्ञान है। तकनीकी विज्ञान और रोजगार का प्रशिक्षण बाद की वस्तु है। इस मूल बिन्दु के प्रति नासमझी ही सारी शिक्षा को विकृत कर उसे पूर्ण अशिक्षा में बदल रही है। जैसे भी हो धनार्जन के मंत्र ने शिक्षा को ही पदच्युत कर दिया है। इसीलिए हजारों छात्रों और सैकड़ों प्रोफेसरों से भरा, हलचल से गुंजार विश्वविद्यालय भी वास्तव में विचारों से वीरान नजर आता है। वे कागजी प्रमाणपत्र देने वाले यांत्रिक कारखाने भर हो गए हैं। पढ़ाई के बदले परीक्षा असली चिंता बन गई है, जिससे वह कागज मिलता है।

इसीलिए हजारों छात्रों और सैकड़ों प्रोफेसरों से भरा, हलचल से गुंजार विश्वविद्यालय भी वास्तव में विचारों से वीरान नजर आता है। वे कागजी प्रमाणपत्र देने वाले यांत्रिक कारखाने भर हो गए हैं। पढ़ाई के बदले परीक्षा असली चिंता बन गई है, जिससे वह कागज मिलता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जैसे-तैसे वह कागज पाना और देना ही विश्वविद्यालयों का एक मात्र काम हो गया है। यानी, सामूहिक आत्मप्रवंचना! आश्चर्य है (या कि कोई आश्चर्य नहीं) कि सबकी आँखों के सामने होते इस दुर्भाग्यपूर्ण खेल को 'उच्च शिक्षा' कहा जाता है। इस मतिहीनता, शिक्षा संस्थानों से शिक्षा के निष्कासन, का ही एक लक्षण यह भी है कि स्वयं रोजगारी प्रशिक्षण भी विचित्र रूप से संकीर्ण और एकांगी होकर रह गया है।

किसी केंद्रीय सरकारी संस्था का मात्र अंग्रेजी में चलना भाषा-नीति का उल्लंघन ही नहीं, इस का खुला संकेत है कि मुख्य भाषा विदेशी है। यह असंवैधानिक और समाजघाती कार्रवाई कैसे चल रही है?

उदाहरणार्थ, सारे बच्चे तो इंजीनियर, व्यवसायी, बैंकर नहीं बनेंगे। तब शेष, जैसे किसान बच्चों की शिक्षा का क्या हो रहा है? आम स्कूली पाठ्यक्रम में विषय ऐसे संयोजित हैं जो केवल इंजीनियर, डॉक्टर, व्यापारी आदि बनने की रोजगारी तैयारी के संकेत हैं। तो क्या हमें किसान, लिपिक, प्रशासक, सैनिक, ड्राइवर, रसोइये, लेखक-चिंतक आदि नहीं चाहिए! यदि चाहिए तो उनकी रोजगार-तैयारी शिक्षा क्या वही है जो इंजीनियर बनने की ओर बढ़ने वाले की है? निस्संदेह, इतना बड़ा प्रमाद शिक्षा-शून्यता का ही प्रमाण है।

फिर, सेंट्रल बोर्ड ऑफ स्कूल एक्जामिनेशन (सीबीएसई) से जुड़ने की शर्त में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा अनिवार्य है। अत: देश भर के स्कूल दिनों-दिन सीबीएसई से जुड़ने की इच्छा से मातृभाषा में पढ़ाई को नष्ट-प्राय कर रहे हैं। इस से नई पीढ़ी का भाषा ज्ञान बुरी तरह प्रभावित हुआ है। अपने देश के साहित्य-संस्कृति से उनका परिचय तक टूटता जा रहा है। यह भयावह स्थिति दरअसल पूर्ण अशिक्षा ही है!

इस का दूसरा प्रमाण यह भी है कि किसी को नहीं दिख रहा कि किसी केंद्रीय सरकारी संस्था का मात्र अंग्रेजी में चलना भाषा-नीति का उल्लंघन ही नहीं, इस का खुला संकेत है कि मुख्य भाषा विदेशी है। यह असंवैधानिक और समाजघाती कार्रवाई कैसे चल रही है? किसी जोर-जबर्दस्ती से अधिक यह सब घोर नासमझी के कारण चल रहा है। हमें समझना चाहिए कि शिक्षा के अर्थ को एक बार विकृत कर लेने के बाद फिर अंतहीन गड़बड़ियों की कोई सीमा नहीं रह जाती!

हमारी परीक्षा-प्रणाली की यांत्रिकता इस का अन्य उदाहरण है। चालू प्रणाली पढ़ने-जानने-सोचने के बजाए नंबर लाने की तरकीब खोजने को प्रेरित करती है, जबकि परीक्षा-पद्धति एक तय ढर्रे पर चलती है। लेकिन ढर्रे पर चलती परीक्षा-प्रणाली एक वैचारिक दिवालियापन और कामचोरी, दोनों है। परीक्षा में कोई ढर्रा होना ही उसे विफल कर देता है। इस का सबसे खुला प्रमाण यह भी है कि कथित पाठ्यपुस्तकों को एक बार भी कभी देखे बिना भी परीक्षार्थी मजे से स्कूल, कॉलेज की परीक्षाएं पास कर सकते हैं! विविध कुंजिका, गाइड, हेल्प-बुक, आदि के सहारे यह होता है। तब सोचें - उन पाठ्यपुस्तकों को कोर्स में लगाने का क्या मतलब था? और जिनके दर्शन किए बिना तक यदि कोई परीक्षार्थी उत्तीर्ण हो सकता है, तब वह कैसी परीक्षा हुई?

फिर, टिक लगाने (ऑब्जेक्टिव) जैसी परीक्षाओं के चलते छात्रों की अभिव्यक्ति, भाषाई क्षमता के साथ जो विध्वंस हुआ है, वह अलग करुण कथा है। जो छात्र एक पैराग्राफ शुद्ध-शुद्ध

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोई भाषा नहीं लिख सकता, वह बेहतरीन ग्रेड या अंकों से माध्यमिक शिक्षा पास कर सकता है! इस विचित्र परीक्षा-पद्धति की परीक्षा आज तक क्यों नहीं हुई?

निजी स्कूल खोलने में व्यापार-उद्योग चलाने की प्रवृत्ति पर रोक लगनी चाहिए। शिक्षा (और चिकित्सा भी) ऐसा क्षेत्र है, जिसे केवल मुनाफे का व्यवसाय समझना गलत है। इस पर समाज व सरकार को कड़ी नजर रखनी चाहिए। मात्र पैसा बनाने की चाह रखने वालों को इस क्षेत्र में आने से हतोत्साहित करें। अभी जो स्थिति है, उस में लोग असहाय नजर आते हैं। निजी स्कूलों के प्रबंधन की मनमानियाँ लोग झेलते रहते हैं। बार-बार न्यायालयों को हस्तक्षेप करना पड़ता है।

एक महत्वपूर्ण बिन्दु यह भी है कि साइंस वाले विषय पूरी दुनिया में एक जैसे हो सकते हैं, किन्तु भाषा, साहित्य, इतिहास आदि संबंधी ज्ञान सभी जगह एक हो ही नहीं हो सकते। अतः पाठ्य-सामग्री के चयन में अपने भाषा-साहित्य की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों को प्रमुख स्थान देना चाहिए। उन्हें तैयार करने में सर्वोत्तम विद्वानों, शिक्षकों की भूमिका मुख्य होनी जरूरी है। यह कितना महत्वपूर्ण है, यह इस से समझ सकते हैं कि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपने शान्ति निकेतन के लिए स्वयं पाठ्य पुस्तकें लिखीं।

पाठ्यपुस्तकें सदैव सर्वोत्तम शिक्षकों द्वारा लिखवाने की चिन्ता होनी चाहिए। साथ ही, हमारे राज्यों में पाठ्यपुस्तकें नहीं, बल्कि पाठ्यक्रम एक रहे। तदनुरूप विभिन्न उत्कृष्ट पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने को प्रोत्साहन मिले। संभवतः इस प्रतियोगी भावना में उन की गुणवत्ता में कुछ सुधार हो सकता है। यदि परीक्षा-प्रणाली ढर्रे वाली यांत्रिकता से मुक्त हो, तब एक पाठ्यक्रम की विभिन्न पुस्तकें शिक्षा और मूल्यांकन में कठिनाई पैदा नहीं करेगी।

लेकिन इसके लिए जरूरी है कि शिक्षकों के चयन, नियुक्तियों के भी सही मानदंड बनें। शिक्षक कम भी हों, मगर अच्छे, निष्ठावान ही हों। शिक्षा का स्तर बनाने, संभालने में यह बुनियादी बिंदु है। मजदूरों, क्लर्कों जैसी थोक नियुक्ति जैसी लापरवाह मनोवृत्ति बिलकुल गलत है। शिक्षा में छोटी-बड़ी सभी नियुक्तियों तक वही गंभीरता रहे, जैसे राष्ट्रीय सुरक्षा संबंधी विषयों में रहती है। दोनों का एक जैसा बुनियादी महत्व है। उनमें सावधानी, लापरवाही के परिणाम उतने ही लाभकारी या घातक होते हैं। अंतर यह है कि एक देर से दिखता है, दूसरा जल्दी।

उसी से जुड़ी बात है कि निजी स्कूल खोलने में व्यापार-उद्योग चलाने की प्रवृत्ति पर रोक लगनी चाहिए। शिक्षा (और चिकित्सा भी) ऐसा क्षेत्र है, जिसे केवल मुनाफे का व्यवसाय समझना गलत है। इस पर समाज व सरकार को कड़ी नजर रखनी चाहिए। मात्र पैसा बनाने की चाह रखने वालों को इस क्षेत्र में आने से हतोत्साहित करें। अभी जो स्थिति है, उस में लोग असहाय नजर आते हैं। निजी स्कूलों के प्रबंधन की मनमानियाँ लोग झेलते रहते हैं। बार-बार न्यायालयों को हस्तक्षेप करना पड़ता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह सब इसीलिए हो रहा है क्योंकि समाज और सरकार ने अपनी जिम्मेदारी नहीं निभाई। सरकारी शिक्षा दस्तावेजों में खोखली लफ्फाजियों का भंडार दिखेगा, जबकि ऐसी वास्तविक, प्रत्यक्ष समस्याओं पर विराट मौन, जैसे ये सब अस्तित्वहीन हों! यह भी उदाहरण है कि हमारे शिक्षा-दस्तावेज कितने घटिया बनते रहे हैं। जबकि उस में शिक्षा संबंधी सभी वास्तविक प्रश्नों पर स्पष्ट नीतियों, व्यावहारिक कदमों का उल्लेख और उपयुक्त प्रस्ताव आदि अंकित होने चाहिए थे। ताकि सरकार किसी भी बिन्दु पर मौन दर्शक न रहे।

शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों, पाठ्यचर्या में सुधार भी जरूरी बिंदु है। शिक्षक बनने हेतु उत्साही तथा सेवा-भाव के रुझान के युवाओं का ही चयन होना चाहिए। तब उन्हें उपयुक्त प्रशिक्षण मिले, जो यांत्रिक नहीं बल्कि रचनात्मक हो। जैसे सैनिक बनने के लिए शारीरिक योग्यताओं को जाँचा जाता है, वैसे ही शिक्षक बनने के लिए चरित्र, भावनात्मक, मनोवृत्ति संबंधी योग्यताओं की परख होनी चाहिए। अभी कागजी प्रवृत्ति है, मानो कोई भी शिक्षक बन सकता है! यह बच्चों के साथ घोर अत्याचार है। इसे दूर कर शिक्षक चयन-प्रशिक्षण को सार्थक बनाने के उपाय सोचने चाहिए।

यह है हमारे देश की शिक्षा-व्यवस्था में दशकों से सोवियत और अमेरिकी मॉडलों की मतिहीन नकल से बना परिदृश्य। यदि हम इन सभी बिन्दुओं पर ढंग से सोच-विचार न करें, तो नई शिक्षा नीति में किसी सकारात्मक नएपन की आशा नहीं करनी चाहिए। यह सोच-विचार सरकार को नहीं, समाज को करना है।

के - 1, विक्रमबाग,
महाराजा सायाजीराव विश्वविद्यालय,
बड़ौदा - 390002

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

जब कुछ भी, कहीं, कभी भी नहीं था, तब वह प्रभो, वह परमेश्वर ....

- मोहन बांडे

मन को उद्विग्न कर देने वाली शहर की कृत्रिम सभ्यता और भीड़भाड़ से दूर, अमावस की घनघोर रात्रि में, दूर तक फैले मरुस्थल के एकांत में अपनी स्वयं की आत्मा की शांति के साथ एकाकार हुए, जगमगाते असंख्य तारागणों से भरे विस्तीर्ण आकाश की ओर और साथ ही साथ अपने ही पैरों के पास खिले छोटे-छोटे पुष्पों पर दृष्टिपात करने वाले किसी भी संवेदनशील व्यक्ति के अंत:करण में यह ब्रह्मांड और उसमें उसके अपने अस्तित्व को लेकर जिज्ञासापूर्ण, बाह्यत: सरल प्रतीत होने वाले, परंतु अत्यंत गूढ़ ऐसे कुछ मूलभूत प्रश्न उठना स्वाभाविक ही माना जाएगा । यह सारा कुछ क्या है? यह कब निर्माण हुआ? कहां से आया? इसका विस्तार कितना है? सजीव यानी क्या? निर्जीव यानी क्या? इस सब का भविष्य क्या है? और अंतत: इस संपूर्ण विश्व में मेरा स्वयं का क्या स्थान है? किसी पर्वत शिखर पर खड़े होकर विचार करने वाले आदिमानव के मन में भी ऐसे ही प्रश्न उठे होंगे । मानव के मन में इस प्रकार के प्रश्न उठना यही मानव सभ्यता के इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी इसमें शंका नहीं है । इसी क्षण अपने चारों ओर की प्रकृति और अपने पशुतुल्य पूर्वज इनके पार जाकर मानव ने वैज्ञानिक चिंतन के प्रदेश में प्रवेश किया । इसी क्षण दर्शन और धर्म का भी प्रादुर्भाव हुआ और तीनों का संगम भी । उस आदिकाल से ही वैज्ञानिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक, चिंतक, सभी लोग अपनी अपनी रीति से इन प्रश्नों के समाधानकारक उत्तर देने का प्रयास करते आए हैं और यह खोज ऐसी ही चलते रहने वाली है ।

ऊपर ऊल्लेख किया गया उन अनेक प्रश्नों में से एक प्रश्न यानी इस संपूर्ण ब्रह्मांड का मूल क्या है? यह सब कहां से आया? इसका विस्तार तो असीम है परंतु क्या यह असीम विश्व प्रारंभ से ही इतना विशाल है, या प्रारंभ में यह छोटा था और धीरे-धीरे विस्तारित होता गया? गत अनेक शतकों की वैज्ञानिक खोज के फल स्वरूप आज विज्ञान का मत है कि यह व्यक्त ब्रह्मांड अनादि नहीं है । यह करीब पंद्रह बिलियन अर्थात पंद्रह सौ करोड़ वर्ष पुराना है । इस ब्रह्मांड की उत्पत्ति के संदर्भ में, विज्ञान जगत में अधिकतर लोगों द्वारा स्वीकृत, जो 'महाविस्फोट' का (Big Bang) का सिद्धांत प्रतिपादित किया जाता है उसके अनुसार अपनी प्रारंभिक अवस्था में यह संपूर्ण ब्रह्मांड एक अतिसघन (Ultra-Dense), अतिसूक्ष्म (Ultra Small) आद्य परमाणु (Primeval Atom) अथवा आद्य केंद्रक (Primeval Nucleus) में घनीभूत था । यह आद्य केंद्रक कहां से और कैसे निर्माण हुआ और इस असीम ब्रह्मांड का पदार्थ मात्र उस कल्पनातीत सघनता वाले अतिसूक्ष्म अणु में कैसे समाया हुआ था, इसका उत्तर कम से कम आज तो विज्ञान के पास नहीं है ।

संपूर्ण ब्रह्मांड का उद्भव जिसमें से हुआ, ऐसे इस सूक्ष्म आद्य परमाणु में पंद्रह सौ करोड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

वर्ष पूर्व जो महाविस्फोट (Big Bang) हुआ उसी में से ऊर्जा (Energy) , पदार्थ (Matter), स्थान (Space) तथा काल (Time) का निर्माण हुआ । विज्ञान द्वारा प्रतिपादित महाविस्फोट का यह सिद्धांत और भारत के आर्ष वैज्ञानिक चिंतकों द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धांत में आश्चर्यजनक साम्य है जिसके अनुसार इस विश्व के प्रारंभ में केवल एकमात्र हिरण्यगर्भ (प्रारंभिक केंद्र, समस्त ऊर्जा का मूल स्त्रोत) था। इस हिरण्यगर्भ में 'ॐ' का नाद होकर एक महाविस्फोट हुआ और उसी में से ब्रह्मांड की निर्मिति हुई। महाविस्फोट के इस सिद्धांत के साथ विज्ञान यह भी प्रतिपादित करता है कि विस्फोट के 10^{-43} सेकंड के पश्चात (अर्थात् एक सेकंड का 1 पर 43 शून्य रखने पर जो संख्या आएगी उतना भाग) इस असीम ब्रह्मांड का व्यास था 10^{-23} सें.मी. (एक सेंटीमीटर का 1 पर 23 शून्य रखने पर जो संख्या आएगी, उतना भाग)। इसके पश्चात ब्रह्मांड का विस्तार अतिशय तीव्र गति से होता गया और आज भी वह प्रक्रिया चल ही रही है । आधुनिक विज्ञान की सीमा इस महाविस्फोट तक आकर समाप्त हो जाती है । इस महाविस्फोट के पश्चात क्या क्या होता गया इसकी जानकारी विज्ञान के पास है, परंतु इस महाविस्फोट के पूर्व मूलतः क्या था इसका उत्तर विज्ञान के पास नहीं है । कारण विज्ञान ही प्रतिपादित करता है कि ऊर्जा (Energy), पदार्थ (Matter), स्थान अथवा देश (Space) तथा काल (Time) इनकी निर्मिति इस महाविस्फोट के पश्चात हुई और विज्ञान का कार्य क्षेत्र इन चार तक ही सीमित है । विज्ञान का यह सिद्धांत स्वीकार करें तो एक महाप्रश्न निर्माण होता है कि ''जब कुछ भी (Matter), कहीं भी (Space), कभी भी (Time) नहीं था तब क्या था? इस समस्त का मूल क्या है'' विज्ञान के पास तो इसका उत्तर नहीं है और इसी कारण इस प्रश्न का उत्तर खोजना हो तो हमें विज्ञान की कक्षा पार कर अध्यात्म के प्रदेश में प्रवेश करना आवश्यक हो जाता है। अतिप्राचीन काल से मनुष्य के मन को आंदोलित करने वाले इस प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयास भारत के प्राचीन ऋषियों - महर्षियों ने किया है और अब हम उसी का कुछ विचार करेंगे ।

> ***ऊर्जा (Energy), पदार्थ (Matter), स्थान अथवा देश (Space) तथा काल (Time) इनकी निर्मिति इस महाविस्फोट के पश्चात हुई और विज्ञान का कार्य क्षेत्र इन चार तक ही सीमित है। विज्ञान का यह सिद्धांत स्वीकार करें तो एक महाप्रश्न निर्माण होता है कि ''जब कुछ भी (Matter), कहीं भी (Space), कभी भी (Time) नहीं था तब क्या था? इस समस्त का मूल क्या है''***

केवल संस्कृत साहित्य में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व के साहित्य में इस प्रश्न पर गहन चिंतन तथा स्वयं की आध्यात्मिक अनुभूति के आधार पर अपने विचार व्यक्त करने वाली सर्वाधिक प्राचीन रचना यानी **'नासदीय सूक्त'** । लोकमान्य तिलक ने अपने 'गीता रहस्य' ग्रंथ में इस सूक्त का सुंदर निरूपण किया है । तिलकजी का तो यह मत है कि इस सूक्त में सृष्टि की निर्मिति किस प्रकार हुई होगी, इस संबंध में जो विचार प्रकट किये गये हैं, उनके समान प्रगल्भ, मूल को ही स्पर्श करने वाले, तत्व ज्ञान के मार्मिक विचार अन्य किसी भी धर्म के ग्रंथ में देखने को नहीं मिलते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इतना ही नहीं, इस प्रकार के अध्यात्म विचारों से परिपूर्ण इतनी प्राचीन रचना भी अभी तक अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं हुई है । यह सूक्त ऋग्वेद के दसवें मंडल में 129 वें क्रमांक पर आता है तथा सूक्त के प्रथम शब्द के कारण इसे **'नासदीय सूक्त'** कहा जाता है। इस सूक्त का ऋषि परमेष्ठि प्रजापति और देवता परमात्मा है तथा इसमें त्रिष्टुप वृत्त की अर्थात ग्यारह अक्षरी चार चरणों की सात ऋचाएं हैं । इस सूक्त की रचना हुई उस काल में भी इस सृष्टि के प्रारंभ में मूल तत्व क्या था, इस संबंध में अनेक मत रहे होंगे। इसी कारण इस संबंध में सत्य बीज अर्थात सत्य क्या है वह बताते हुए इस सूक्त का ऋषि कहता है-

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं
नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्म -
न्नम्भः किमासीग्दहनं गभीरम् ॥1॥

तब अर्थात मूलारंभ मे असत् नहीं था और सत् भी नहीं था । अंतरिक्ष नहीं था और उसके पार का जो आकाश वह भी नहीं था । (ऐसी स्थिति में) किसने (किस पर) आवरण डाला?(ऐसा कहें) कहाँ? किसके सुख के लिए? अगाध और गहन जल (भी) था क्या?

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि
न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं
तस्माध्दान्यन्न परः किंचनाऽऽस ॥2॥

तब मृत्यु अर्थात मृत्युग्रस्त नाशवंत दृश्य सृष्टि नहीं थी और इस कारण (दूसरा) अमृत अर्थात अविनाशी नित्य पदार्थ (यह भेद) नहीं था । (वैसे ही) रात्रि और दिवस यह भेद जानने का कोई साधन (=प्रकेत) नहीं था। (जो कुछ था) वह एक अकेला स्वधा अर्थात स्वयं की शक्ति से वायु के बिना श्वांसोच्छ्वास कर रहा था अर्थात स्फुर रहा था । उसके अतिरिक्त अथवा उसके परे अन्य कुछ भी नहीं था ।

तम आसीत्तमसा गूढ़मग्रेऽ -
प्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छयेनाभ्वपिहितं यदासीत्
तपसस्तन्महिनाऽ जायतैकं ॥3॥

अंधकार था, आरंभ में यह सारा अंधकार से व्याप्त (और) भेदाभेद विरहित जल था, (अथवा) आभु यानी सर्वव्यापी ब्रह्म (आरंभ में ही) तुच्छ से अर्थात् झूठी माया से आच्छादित था-ऐसा (यत्) जो (कहते हैं), वह (तत्) मूल एक (ब्रह्म ही) तप की महिमा से (रूपांतरण) प्रकट हुआ था।

कामस्तदग्ने समवर्तताधि
मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सतो बन्धुमसति निरविन्दन्
हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥4॥

(इसके) मन का जो रेत अर्थात बीज प्रथमतः निकला वही आरंभ में काम (अर्थात) सृष्टि निर्माण करने की प्रवृत्ति अथवा शक्ति बना । यही मूल परब्रह्म में अर्थात विनाशी दृश्य सृष्टि का (प्रथम) संबंध है, ऐसा ज्ञाताओं ने अंतःकरण में विचार कर बुध्दि द्वारा निश्चय किया है ।

तरश्चिनो विततो रष्मिरेषाम्
अद्यः स्विदासीदुपरि स्विदासीत् ।
रेतोधा आसन् महिमान आसन्
स्वधा अवास्तात् प्रयतिः परस्तात् ॥5॥

(यह) रश्मि यानी धागा अथवा किरण इनमें आड़ा फैल गया; और नीचे था कहें तो ऊपर भी था। (इसमें से कुछ) रेतोधा अर्थत् बीजप्रद बना, (वृद्धि पाकर) बड़ा हो गया । उसी की स्वशक्ति इस पार और प्रयति यानी प्रभाव उस पार (व्याप्त) होकर रहा ।

को अद्धा वेद क इह प्रवोक्ता
कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः ।
अर्वाग देवा अस्य विसर्जनेना -
थ को वेद यत आबभूव ॥6॥

(सत् का) विसर्ग अथवा यह विस्तार किससे और कहाँ से आया, यह (इससे) यानी विस्तारपूर्वक यहाँ कौन कहेगा? कौन निश्चय पूर्वक जानता है? देवता भी (सत् सृष्टि के) विसर्ग के पश्चात के। फिर वे जहाँ से उत्पन्न हुए उसे कौन जानेगा?

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव
यदि वा दधे यदि वा न दधे ।
थो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्
सो अंगः वेद यदि या न वेद ॥7 ॥

(सत् का) यह विसर्ग यानी विस्तार जहाँ से हुआ, वह निर्मित हुआ या नहीं हुआ, वह परम आकाश में निवास करने वाला इस जगत का जो अध्यक्ष (हिरण्यगर्भ) वही जानता होगा या नहीं भी जानता होगा! (कौन कह सकता है?)

आँखों को अथवा सामान्यतः हमारी इंद्रियों को गोचर होने वाले विकारी और विनाशी नाना रूपात्मक भिन्न दृश्यों के जाल में ही फँसे न रह कर इसके परे कुछ न कुछ एकमेव और अमृत- तत्व है इसे ज्ञान दृष्टि से पहचानना, यही संपूर्ण वेदांत शास्त्र का रहस्य है; और इस मक्खन के गोले तक उपरोक्त सूक्त के ऋषि की बुद्धि एकदम प्रथम कूद में ही अचूक पहुँच गयी, इससे उसका अंतर्ज्ञान कितना तीव्र था यह स्पष्ट दिखाई देता है। मूलारंभ में अर्थात् सृष्टि के भिन्न-भिन्न पदार्थ अस्तित्व मे आने के पूर्व जो कुछ था वह सत् था या असत् मर्त्य था या अमर; आकाश था या जल; प्रकाश था या अंधकार; इत्यादि अनेक प्रश्न करने वालों के साथ विवादों में न उलझते हुए,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025 Grant

एकदम इस सब के आगे दौड़ लगाकर यह ऋषि पूछता है कि सत् और असत् अंधकार और प्रकाश, आच्छादित करने वाला और उससे आच्छादित, सुख देने वाला और सुख का अनुभव करने वाला, यह द्वैत की परस्पर सापेक्ष परिभाषा दृश्य सृष्टि निर्माण होने के पश्चात की है, और सृष्टि के ये द्वंद्व उत्पन्न होने के पूर्व, यानी जब एक और दूसरा यह भेद ही नहीं था, तब कौन किसे आच्छादित करेगा? इस कारण मूलारंभ के एकरूप (homogeneous) द्रव्य को सत् अथवा असत्, आकाश अथवा जल, प्रकाश अथवा अंधकार, अमृत अथवा मृत्यु इत्यादि परस्पर सापेक्ष कोई भी नाम देना योग्य नहीं; जो कुछ था वह इन सारे पदार्थों से विलक्षण था और वह एकमात्र अकेला ही आरंभ मे सर्वत्र अपनी अपरंपार शक्ति से स्फुर रहा था, उसके साथ अथवा उसे आच्छादित करने वाला अन्य कुछ भी नहीं था, ऐसा आरंभ मे ही निर्भयतापूर्वक इस सूक्त का ऋषि कह रहा है । नासदीय सूक्त का विस्तारपूर्वक निरूपण करना यह इस लेख का विषय नहीं है, परंतु अचिंत्य वस्तुओं के गहन वन में मनुष्य की बुद्धि सात्विक और निर्मल प्रतिभा के बल पर सिंह के समान निर्भय विचरण करते हुए उसमें की अतर्क्य बातें किस प्रकार सुनिश्चित कर सकती है। इसका यह सूक्त एक उत्कृष्ट उदाहरण है और ऋग्वेद समान अतिप्राचीन ग्रंथ में यह आया है यह तो वास्तव में आश्चर्यकारक है !! तिलकजी द्वारा 'गीता रहस्य' में किया गया 'नासदीय सूक्त' का यह विवरण पढ़कर मुझे पचास से भी अधिक वर्ष पूर्व माध्यमिक पाठशाला में पढ़ते समय पढ़ाई गयी एक सुंदर कविता का स्मरण हो आया । मूल मराठी कविता का शीर्षक है - 'नवे पान उघडले' - (नया पृष्ठ खुला) और मेरी स्मृतिनुसार उसके रचनाकार हैं श्री. द. कों घाटे (कवि दत्त) । मूल कविता का भावानुवाद कुछ इस प्रकार होगा-

थी यह सृष्टि कहाँ, प्रकाश अथवा था यह तमस कहाँ
था बस केवल जगज्जनक वह यह काल भी था कहाँ
जब कुछ भी, कहीं, कभी भी नहीं था तब वह प्रभो वह परमेश्वर
महाग्रंथ निर्माण किया बस इच्छा ही साधन लेकर ॥1॥
कोरा ग्रंथ प्रथम निर्माण किया आकाश जिसे कहते
विभिन्न तारापुंज लिखे उस पर जिनको ना गिन पाते
'होवे यह' कहते ही सारे हुए प्रकट सोचा जैसे ॥2॥
महाग्रंथ जो पूर्ण हुआ वह विश्व नाम से कहलाए
पढ़ने बैठा प्रभु स्वयं पढ़ पृष्ठ पलटता वह जाए
उसने अब तक कितने पृष्ठ पढ़े यह तो जाने वह ही
शेष हैं कितने पृष्ठ अभी इसका ज्ञाता भी मात्र वही ॥3॥
आजन्म देख पाया थोड़े से पृष्ठ वे भी ऊपर ऊपर
नहीं जानता देख सकूंगा और कितने इस धरती पर
पूर्ण हुआ एक पृष्ठ आज एक नूतन है सम्मुख आया
शुभाशुभ और पढ़े वह कितना कौन इसे है जान पाया ॥4॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आठवीं - नौवीं में पढ़ते समय इस कविता का गहन आशय कितना समझ में आया होगा? परंतु आज यह कविता और 'नासदीय सूक्त' के बीच का विलक्षण साम्य ध्यान में आता है । नासदीय सूक्त के ऋषि के ही समान यह कवि भी प्रारंभ में ही प्रश्न करता है कि जब यह सृष्टि नहीं थी, प्रकाश अथवा अंधकार नहीं था, यह काल भी नहीं था, अर्थात् जब 'कुछ भी, कहीं भी, कभी भी नहीं था' तब क्या था अथवा कौन था? नासदीय सूक्त का ऋषि अगम्य, अतर्क्य ऐसा कुछ था, इस प्रकार कहता है। परंतु कवि श्रद्धावान है । इसलिए उस समय एकमात्र जगज्जनक परमात्मा था और उसी ने केवल 'इच्छा साधन' लेकर यह जगतरूपी महाग्रंथ निर्माण किया ऐसी कल्पना कवि ने की है, परंतु कवि यहीं पर रुक नहीं जाता । परमेश्वर यह ग्रंथ सतत पढ़ रहा है, एक के बाद दूसरा पृष्ठ आगे आता जाता है। हम में से प्रत्येक व्यक्ति इनमें से कुछ पृष्ठों का साक्षी बनता है और फिर भूतकाल में समा जाता है। आज तक वह जगज्जनक परमेश्वर कितने पृष्ठ पढ़ चुका यह भी वही जानता है और इस महाग्रंथ में अभी कितने पृष्ठ शेष हैं, यह भी वही जानता है ।

विज्ञान की सहायता से इस दृश्य जगत की उत्पत्ति की अर्थात 'जब कुछ भी, कहीं, कभी भी नहीं था तब क्या था?', इसकी खोज करने वाला कोई वैज्ञानिक हो, अपनी आध्यात्मिक अनुभूति के आधार पर इसी प्रश्न का उत्तर खोजने वाला नासदीय सूक्त का ऋषि हो, या परमेश्वर पर श्रध्दा रखने वाला कोई सात्विक वृत्ति का कवि हो, सभी इस मूलभूत प्रश्न का उत्तर खोजते रहते हैं। इनमे से किसी को भी इसका अंतिम उत्तर मिल पाना संभवनीय नहीं है , परंतु फिर भी मनुष्य इस गूढ़ प्रश्न पर सतत चिंतन करता आया है और करता रहेगा, परंतु सतत चलनेवाली इस चिंतन की प्रक्रिया के बीच यह सारा चिंतन करने वाला 'मैं कौन' यह प्रश्न अनुत्तरित ही रह जाता है, और 'मैं कौन' इस प्रश्न के उत्तर में ही 'जब कुछ भी, कहीं, कभी भी नहीं था तब क्या और कौन था?' इस प्रश्न का उत्तर भी छिपा हुआ है ।

13, नारायण बाग
इंदौर 452007 (म.प्र.)
मो. 9926600124

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आलेख

भागवत चेतना का संस्कारण

-सुरेन्द बिहारी गोस्वामी 'चैतन्य'

मनुष्य का जीवन दुर्लभ और क्षणभंगुर है, यह कहावत अनेक बार कही-सुनी गई है। चिंतन के क्रम में इसके सहज विश्लेषण की इच्छा जाग्रत हुई कि मानव तन और जन्म इतना दुर्लभ और अमूल्य क्यों?

जहाँ ज्ञान की सीमा समाप्त होती है वहाँ से विज्ञान प्रारम्भ होता है और जहाँ विज्ञान की सीमा समाप्त होती है वहाँ से अध्यात्म प्रारंभ होता है। अध्यात्म 'सत्यं परम धीमहि' की आधारशिला पर स्थित होता है। अध्यात्म निरपेक्ष भाव से धनात्मक विचार के साथ सत्य स्वरूप ईश्वर के पथ पर अनवरत गतिशील बने रहने की प्रक्रिया है। अतएव दुर्लभ जीवन का आध्यात्मिक विश्लेषण स्वस्थ-चिंतन का सहज भाष्य प्रस्तुत करने में अधिक युक्तिपूर्ण प्रयोग सिद्ध होगा। अध्यात्म की भाषा में मनीषियों ने शरीर का सुंदर और वैज्ञानिक वर्णन किया है। कहते हैं ये शरीर है क्या ?

अस्थिस्तभ स्नायुबद्धं माँस शोणित बिम्प्यते।
चर्मावनबद्धं पात्रं दुर्गंधं मूत्रपूरीषयते।।

हड्डियों के स्तंभ में अँतड़ियों को बाँध दिया है, उसमें माँस और रक्त का लेप कर उसे चमड़े से सुंदर स्वरूप में आबद्ध कर दिया है किंतु महज ये पात्र है, बर्तन है जो मल-मूत्र से भरा हुआ दुर्गंध युक्त है। यह सत्य है कि इस शरीर की बाहरी सुंदरता का आकर्षण हमें भुलाये रखना है कि हम महज हाड़-माँस के बने पुतले ही तो हैं। इस शरीर के निर्जीव हो जाने पर इसकी तीन ही गति होती हैं:-

कृमि विडभस्म संज्ञान्तं शरीरभिति वर्णितम्।
अस्थिरेण स्थिरं कर्म कुतोऽयं साधयेन्न हि।।

इसे गाड़ दिया जाए तो ये कृमि (कीड़ों) के पेट में जाता है। कहीं जल, थल, नभ में छोड़ या बहा दिया जाए, तो पशु-पक्षी का आहार बन उनका बीट (अपशिष्ट) बन जाता है और जला दिया जाए तो भस्मीभूत हो जाता है क्योंकि यह इस मृत्युलोक का परम सत्य है कि ये सुंदर तन मृत्यु की अमानत है। यहाँ जो भी इस चर्मचक्षु से दिखता है वह नष्ट हो जाता है। 'यद्दृष्टं तद्नष्टं', किंतु इस नाशवान शरीर से कर्मशील जीवन अपनी असर कथा लिख सकता है।

हमारा जीवन अधिकतम कितने दिनों का है, इस पर भी आध्यात्मिक दृष्टि से गणितीय विश्लेषण का प्रयास श्री चैतन्य ने सुंदर ढंग से किया है। सामान्यतया परम्परा और व्यवहार से यह एक सर्वमान्य सत्य है कि मनुष्य का जीवन सौ वर्षों का है। कुछ अपवाद को छोड़कर इस मान्यता के आधार पर एक जीवन 36500 (100 X 365) का हो सकता है, किंतु यहाँ विचारणीय है कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इस जीवन चक्र में कर्मशील दिवस कितने हैं ? जीवन का कुछ समय तो कब बीत जाता है मालूम ही नहीं चलता और कुछ समय बीतेगा या नहीं यह निश्चित नहीं होता। यथा-बालपन, किशोर अवस्था और यौवन तो जैसे पंख लगाये होता है। बेगाना बचपन कब बावला यौवन तक पहुँच जाता है इसका भान तक नहीं होता। उम्र के 30 वर्ष तक का समय सूचकांक अत्यंत गतिशील होता है अर्थात 10950 दिन (30 X 365) जैसे खेल-खेल में ही बीत जाता है। हाँ इसके उत्तरार्द्ध तक अध्ययन, विवाह और रोजगार के प्रारंभ का लक्ष्य हम जरूर पूरा कर लेते हैं। अब हमारे पास शेष होते हैं (36500-10950) 25550 दिन।

एक स्वास्थ्य विश्लेषण के अनुसार 70 वर्ष के पश्चात् स्वस्थ शरीर से जीवन जीने की संभावनाएं केवल 20 प्रतिशत ही हैं अर्थात जिन्हें शुगर, ब्लड प्रेशर, हृदय, किडनी, लीवर और हड्डी आदि की व्याधि या बीमारी न हों ऐसे लोगों की संख्या महज 20 प्रतिशत ही होती है और इनमें से शतायु की उम्र यात्रा में चलने वाले लोगों की संख्या भी 20 प्रतिशत से कम ही होती है अर्थात 70 वर्ष की उम्र के बाद का समय सहज स्वस्थ बीतेगा या नहीं ? इसकी संभावना बहुत कम ही होती है। इस प्रकार उतरार्द्ध के ये 30 वर्ष लगभग अनिश्चित उपयोगी हैं अर्थात अब हमारे पास इस जीवन में कुल कर्मशील समय 14600 दिन ही शेष होते हैं (25550-30 X 365) वो भी उन कर्मठ जीवनधारी के लिए जो प्रात: से लेकर शयन तक सृजनशील और क्रियाशील हैं ? उनके लिये नहीं जो दिन में सो कर ही उठते हैं 12 बजे। इस जीवन की एक विडम्बना है कि इसमें रिवर्स गेयर जैसा कुछ नहीं होता। यहाँ प्रत्येक क्षण पहली बार आता है और आखिरी बार भी। 'कालौ न यातौ वयमेव यातो' हमारा यह जीवन प्रत्येक क्षण कदम बढ़ाता है मृत्यु की ओर, जिसकी यह अमानत है।

इस आध्यात्मिक भाव के वैज्ञानिक विश्लेषण से यह सुस्पष्ट है कि यह जीवन कितना क्षणभंगुर और दुर्लभ है इस शरीर में स्थित मन। वैसे भी यदि हम सहज मानव स्वभाव को देखें तो उसके लिये महत्वपूर्ण है - तन,मन और धन, जिसके समन्वित स्वरूप से वह जीवन में सुखद अनुभूति प्राप्त करता है।

अध्यात्म के मूल में है मन और यही वह कड़ी है जहाँ विज्ञान आत्मसात करने विवश होता है - अध्यात्म को। एक यात्रा में मेरे सामने की सीट पर एक वैज्ञानिक महोदय बैठे थे। मुझे एकाग्र भाव से धर्म ग्रंथ पढ़ते देख कुछ बेचैन हुए। मुझसे सीधा प्रश्न किया उन सज्जन ने 'क्या आप भगवान को मानते हैं ? मैंने भी 'हाँ' में अपना सहज उत्तर दिया। आपने कभी भगवान को देखा है? उनका दूसरा प्रश्न था, अब मैं थोड़ा असहज हुआ और 'नहीं' का प्रत्युत्तर उपेक्षा भाव से देकर अपना ध्यान फिर पढ़ने से लगाने लगा।

उन महानुभाव की अनावश्यक छेड़छाड़ से उत्तेजित हुए बिना मैंने वार्तालाप का क्रम बदलना उचित समझा। मैंने उनसे प्रतिप्रश्न करते हुए पूछा कि महोदय आप क्या करते हैं? मैं पुरातत्व विभाग में वैज्ञानिक विश्लेषण का कार्य करता हूँ और उन्हीं तथ्यों का विश्लेषण करता हूँ जो दिखती हैं, होती हैं, वास्तविकता से जुड़ी रहती हैं। एक साँस में उत्तर व्यंग्य सहित दिया वैज्ञानिक महोदय ने। मैंने उन वैज्ञानिक महोदय से यह जानना चाहा कि क्या विज्ञान 'मन' को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मानता है। बल्कि उसका व्यापक विश्लेषण 'मनोविज्ञान' के स्वरूप में अध्ययन, अध्यापन एवं प्रभावी व्यवहार में प्रचलित है, जिसके विश्लेषण से अनेक उपयोगी योजनाएं कार्यरूप में सफलता के साथ परिणित होती है।

अब प्रश्न पूछने की बारी मेरी थी। मैंने वैज्ञानिक महोदय से पूछा आपने 'मन' को देखा है? शरीर के किस भाग में होता है? ठिठक गए, हकलाते हुए कहने लगे, मन तो विचारों की अनुभूति है वो दिखता नहीं, महसूस होता है। मैंने कहा आपका धन्यवाद जो आपने जीवन की इस अनबुझी पहेली का हल इस यात्रा-चर्चा में खोज निकाला कि ईश्वर कहाँ रहता है? मेरा ईश्वर अनुभूति का सत्य या सत्यानुभूति है। बेचारे वैज्ञानिक एक गंभीर मुस्कान के साथ मौन रहे।

वैसे यहाँ यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि मन ही विज्ञान का यह चरम अध्ययन है जो इसे अध्यात्म से जोड़ता है – जैसे ज्ञान के सिद्धांत प्रयोग की सीमा पर विज्ञान से जुड़ते चले जाते हैं। यदि परमात्मा की इस सुंदर कृति को कम्प्यूटर के रूप में विभाजित करें तो तन इसका हार्डवेयर और मन इसका सॉफ्टवेयर होगा। बहुत से तन जैसे एक रंग के दिख सकते हैं लेकिन प्रत्येक तन का मन भिन्नात्मक अनुभूति लिये होता है।

यदि हम मानव रचित कम्प्यूटर और ईश्वर रचित मानव के सॉफ्टवेयर का तुलनात्मक अध्ययन करें तो इनमें रोचक समानताएँ प्राप्त होंगी। कम्प्यूटर के सॉफ्टवेयर की तरह इस मन में भी वायरस का खतरा होता है। मन में छः प्रकार के वायरस (विकार) अध्यात्म के विश्लेषण में वर्णित हैं यथा – काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मत्सर। इन्हें षट्राग भी कहा जाता है। ये प्रकृति प्रदत्त हैं मन के साथ ही रहते हैं। जब तक इनमें समन्वय बना रहता है ये साम्य बिन्दु पर रहते हैं किन्तु सामन्जस्य के अभाव में ये असंतुलित होकर अपना प्रतिकूल प्रभाव दिखाने लगते हैं, जिसकी झलक हार्डवेयर रूपी तन में भी दिखाई पड़ने लगती है। जैसे – क्रोधी का तमतमाया हुआ चेहरा, अपशब्द युक्त वाणी, इसका चीखना-चिल्लाना या लोभी का लाभ अथवा कामी के काम की भावना उसकी आँखों में तैरती दिखाई पड़ने लगती है।

मन रूपी सॉफ्टवेयर में स्क्रीन केवल उसे ही दिखती है, जिसका मन होता है अर्थात मन दर्पण केवल आप ही देख सकते हैं दूसरा नहीं। तभी तो आपका असत्य या झूठ सहजता से प्रगट नहीं हो पाता है, आपके मन की बात और वाणी से निकली बात का अंतर कोई समझ नहीं पाता है। मन रूपी सॉफ्टवेयर को बंद या शुरू करने की आवश्यकता नहीं यह स्वचालित है। आपकी सुसुप्त अवस्था में भी सक्रिय रहता है, जैसे-आप गहरी नींद में सो रहे हैं, किंतु स्वप्न लोक में भ्रमण कर रहे हैं अर्थात हमारा ये मन रूपी सॉफ्टवेयर इस तन रूपी हार्डवेयर से सहजता से निकल कर भ्रमण कर सकता है और अपने स्क्रीन में तस्वीर उकेर सकता है जबकि हार्डवेयर रूपी तन की आँखें दुनिया की तस्वीर में स्थिर होती हैं, है ना कमाल का कम्प्यूटर ये मानव तन-मन। ऐसा अनेक बार होता है जब हम अध्ययन, रोजगार या व्यापार में कार्य का चिंतन करते रहते हैं। तब हमारा तन कहीं और होता है और मन कहीं और। 'सामने में है और कोई, सोच में है और कोई' ऐसी अवस्था को हम चिंता या चिंतन की दशा कहते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मन के यही वायरस (षट्राग) हमें सकारात्मक या नकारात्मक अनुभूति देते हैं, जिसे हम सुख या दुख कहते हैं। वास्तव में मन से उत्पन्न ये मन के मानस पुत्र सुख और दुख वास्तविक नहीं केवल षट्राग (काम, क्रोध लोभ, मद, मोह, मत्सर) के विकारों का प्रतिफल मात्र हैं अर्थात हमारी सोच की दशा और दिशा तय करती है कि यह अनुभूति सुख है या दुख। जैसे एक सहज रूप से दिनचर्या में लगे व्यक्ति को खबर मिले कि उसके पड़ोसी (जिससे उसका दुराभाव है) ने एक कार ले ली है तो वह दुखी हो जायेगा क्योंकि द्वेषवश (मत्सर) उसकी अनुभूति नकारात्मक रहेगी, जबकि प्रत्यक्षत: उसके जीवन में इसका कोई प्रभाव नहीं। तथापि मन के विकारग्रस्त होने के कारण यह दुखी हो गया। इसी के विपरीत स्थिति में उसे यह खबर मिलती है कि पड़ोसी की कार दुर्घटनाग्रस्त हो, खराब हो गई तो कदाचित अंतर्मन में हर्ष की अनुभूति होगी क्योंकि उस व्यक्ति के संदर्भ में संबंधित का दृष्टिकोण पूर्वाग्रह युक्त है और वह सुख की स्थिति में आ जायेगा। आपने देखा कि वास्तव में प्रत्यक्षत: उस व्यक्ति के जीवन में कोई घट-बढ़ नहीं हुआ। पर मन के अनुलोम, प्रतिलोम होने के फलस्वरूप ही उसने सुख और दुख की अनुभूति की। मन को यही विकार संतुलन के अभाव में पीड़ा देते हैं जो व्यक्ति की दैनंदिनी को प्रभावित करते रहते हैं और आदमी सुख-दुख के इस सागर में बहता-डूबता अपने क्षणिक जीवन को व्यतीत करता जाता है।

श्रीमद्भगवत के अध्याय 2 के श्लोक 62 एवं 63 में इन षट्रागों के विचलन से उत्पन्न होने वाले विकारों का परस्पर सम्बन्ध बहुत ही सरल ढंग से वर्णित है-

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गत्सऽयते कामः कामत्क्रोधोऽभिजायते।।

विषयों का चिंतन करने वाले पुरुष को उन विषयों में आसक्ति हो जाती है, आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामना में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है।

क्रोधी व्यक्ति की दशा बिल्कुल उस व्यक्ति की तरह हो जाती है जिसे गाँव के लोग अपनी भाषा में 'भूत-प्रेत' बाधा से ग्रस्त मानते हैं, उसे अपने-पराये का होश ही नहीं होता। शब्द-अपशब्द में, आचरण-कदाचरण में, भाव-कुभाव में कब बदल जाते हैं, ऐसे आदमी को महसूस ही नहीं होता। कंठ सूखने लगता है। ऐसी दयनीय दशा में क्रोध रूपी बीमारी के ताप से लाल आँखें किये वह बकवाद कर मर्यादाओं का हनन करता चला जाता है, फिर-

क्रोधद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृति विभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

क्रोध से अत्यंत मूढ़ भाव उत्पन्न हो जाता है, मूढ़ भाव (सम्मोह) से स्मृति में भ्रम हो जाता है, स्मृति में भ्रम हो जाने से बुद्धि अर्थात ज्ञान शक्ति (सोचने, विचारने, समझने की ताकत) का नाश हो जाता है और बुद्धि का नाश हो जाने से यह पुरुष अपनी स्थिति से गिर जाता है।

अर्थात मति का हरण हो जाता है और 'प्रज्ञाऽपराधो मूलं सर्वरोगाणां मुक्तम' बुद्धि का नाश होना ही सारे रोगों की जड़ है। गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं-

जाको प्रभु दारुण दुःख दीन्हीं, ताकि मति पहले हर लीन्हीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अब आप ही विचार करें कि ये षट्राग कितना गंभीर मनोरोग उत्पन्न करते हैं और बनाते हैं आपको एक मनोरोगी। इस विवेचन से दो बातें स्पष्ट हैं मानव जीवन दुर्लभ है और मनुज तन क्षणभंगुर है। साथ ही जीवन के विषाद के मूल में है मन। हमारे जीवन में शांति है, यदि मन तृप्त है नहीं तो मानसिक असंतोष गंभीर मनोरोग उत्पन्न कर सकता है। अब प्रश्न ये उत्पन्न होता है कि मृत्युलोक के हम प्राणी इस नश्वर दुर्लभ काया से क्या अपेक्षा रखते हैं। हमें वास्तव में चाहिए क्या? यदि एक सहज उत्तर 'सुख' है तो इतने सुखी लोग तृप्त क्यों नहीं है।, क्यों बेचैन हैं दिन-रात। शायद सुखी व्यक्ति आशंकित है कि सुख कहीं चला न जाये और दुखी अधीर हैं कि सुख कब आये, किंतु पूर्व विश्लेषण से स्पष्ट है कि सुख और दुख एक सापेक्ष अनुभूति है तभी तो किसी का दुख दूसरे को सुख देता है और दूसरे का सुख किसी को दुखी करता है। हम जीवन का एक परम सत्य भूल जाते हैं कि दिन के बाद रात और रात के बाद दिन को आना ही है। सुख और दुख तो अनुभूति रूपी अतिथि हैं। आवागमन जीवन में बना ही रहता है किंतु ये हमें पूर्ण तृप्ति नहीं देते और न ही हमारा शुद्ध अंतर्मन इनके लिये बैचेन है। हमारी बेचैनी की वजह और ही है। शायद हमें कुछ ऐसा चाहिए जिसके आने के बाद, मिल जाने के बाद हमें स्थायी शांति, संतोष और तृप्ति मिले। तो वह क्या है ? इसे समझने के पूर्व यह समझना आवश्यक था कि हम एक दुर्लभ क्षणभंगुर और मनोमय जीवन के यात्री हैं जो अनवरत चलते जा रहे हैं अपनी मंजिल की ओर, और पड़ाव है सुख-दुख। पर ठिकाना तो मृत्यु ही है।

श्रीमद्भागवत ग्रंथ की रचना ही इस प्रश्न के उत्तर में हुई है कि हमें करना क्या है जबकि जन्म की तरह हमारे जीवन में मृत्यु ही परम सत्य है। श्रीमद्भागवत में महाराजा परीक्षित परमयोगी शुकदेवजी से प्रश्न करते हैं कि-

अतः पृच्छामि संसिद्ध योगिना परमं गुरुम्।
पुरुषस्येह यत्कार्य म्रियमाणस्य सर्वथा।।36।। (प्रथम स्कंध अध्याय 19)

हे गुरुवर, कृपया मुझे ये बतायें कि जो मनुष्य सर्वथा मरणशील है उसे क्या करना चाहिये? श्रीमद्भागवत वास्तव में समाधि भाषा में लिखा हुआ जीवन प्रबंध का उत्कृष्ट ग्रंथ है। यह पुराण समस्त वेदों का सार और समस्त पुराणों में कौस्तुभ मणि की तरह सुशोभित स्थान रखता है। इसके रचयिता श्रीवादरायण व्यास और वक्ता ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मरत श्री शुकदेवजी हैं। यह धर्म, जाति, वर्ण की सीमाओं से परे विशुद्ध अध्यात्म चिंतन की शुद्ध कृति है। यह जीवन को विषय रूपी विष से मुक्त कर भागवत चेतना की अमृतमयी सरिता से सराबोर कर देती है। इसकी भाषा 'समाधि' है संस्कृत में इस भाषा शैली का उपयोग लक्षणा, भावाटकी और दृष्टान्त के माध्यम से सहज सरल रूप में तथ्यात्मक विश्लेषण के लिये किया जाता है। भय, शोक, हर्ष, सुख, दुख इत्यादि मन की मलिनता से ही उत्पन्न होता है। हमारे जीवन में कर्म की आधारशिला मन ही होता है, इस मन को पुष्ट, स्वस्थ और शुद्ध करने का एक मात्र प्रमाणित, उत्कृष्ट साधन श्रीमद्भागवत पुराण ही है। भागवत महात्म्य में व्यासजी लिखते हैं-

एतस्मादपरं किञ्चिन्यमनः शुद्धैय न विद्यते।
जन्मान्तरे भवेत्पुण्यं तदा भागवतं लभेत्।

मन की शुद्धि के लिये इससे बढ़ कर कोई साधन नहीं है। जब मनुष्य के जन्म-जन्मान्तर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

का पुण्य उदय होता है तभी उसे इस भागवत शास्त्र की प्राप्ति होती है। एक बार यदि मनुष्य का मन इस कथा रस-सागर में रम गया तो मन के सारे कल्मष धुल जाते हैं। मन के निर्मल होते ही वह भय-शोक से मुक्त सत्य स्वरूप आत्मानंद की अनुभूति करने लगता है। भागवत हमें 'सत्यं परं धीमहि' अर्थात परम सत्य रूप परमात्मा के ध्यान की विद्या सिखाता है।

भागवत कथा के मूल श्रोता परीक्षित, अभिमन्यु के पुत्र और अर्जुन के पौत्र हैं वो परम ज्ञानी शुकदेवजी से जानना चाहते हैं - पुरुषस्येह यत्कार्य म्रियमाणस्य सर्वथा' अर्थात क्षणभंगुर जीवन वाले मनुष्य को कौन सा कार्य महज 36500 दिन या कर्मशील 14600 दिन में करना चाहिये ताकि उसकी पहचान, उसकी स्मृति और उसका सृजन एक जीवंत कहानी के रूप में इस धरती पर अशेष रहे, अमर रहे।

परीक्षित के लोकहितकारी प्रश्न से प्रसन्नचित्त शुकदेव जी सबसे पहले इस सर्वथा मरणशील व्यक्ति की दिनचर्या का चिंतन करते हैं।

निद्रया छिद्रयते नत्कं व्यावयेन च वा वयः।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्ब भरणेन वा।। (श्रीमद्‌भागवत 2/1/3)

अर्थात उनकी रात नींद या स्त्री-संग से कटती है और दिन धन की हाय-हाय या कुटुम्बियों के भरण-पोषण में समाप्त हो जाता है। विवेक का दम्भ भरने वाला मनुष्य इतना मूढ़ हो गया है कि वह जीविका को ही जीवन समझ बैठा है। उसने न तो कभी जीवन पर विचार किया और न ही जीवन के मूल लक्ष्य को समझने की कोशिश की है। इस संसार में व्यक्ति, खाने, कमाने, परिवार बसाने, उसे पालने, गृहस्थ-सुख भोगने, भोग विलास आदि के लिए ही नहीं आया है; केवल ये ही मनुष्य जीवन की अनिवार्यता नहीं है, इसके अतिरिक्त भी जीवन का कोई मुख्य उद्देश्य है किंतु यह बहुत बड़ी विडम्बना है मनुष्य उस ओर तो कोई ध्यान ही नहीं देता। अनेकानेक अवसर आते हैं जीवन में, जब मोह और स्वार्थ के गहरे जख्म, माया की जंजीरें हमें झकझोरती हैं पर हम तो बस सोते ही रहते हैं। जो नींद के आगोश में सो रहा है उसे तो जगाया जा सकता है किन्तु जिसने सोने का बहाना कर आँखें बंद कर रखी हों उसे कैसे जगाएँ ?

भागवत धर्म स्वयं की खोज, यात्रा की विश्रांति है, जहाँ हम मन के विचलन से मुक्त आत्मानंद के आत्मनगर में आत्मदेव के रूप में स्थित हो जाते हैं-'ये वै भगवताप्रोक्ता उपाया आत्मलब्ध्यै' ये वो उपाय हैं जो स्वयं परमात्मा ने बताये हैं अर्थात स्वयंसिद्ध हैं, सत्य के अनावरण के लिये। भागवत पथ जीवन को सुख शांति से परिपूर्ण और मृत्यु को मंगलमय बनाने की दिशा की ओर ले जाती है।

किसी व्यक्ति के जीवित रहने का सहज प्रभाव उसकी चलती हुई सांसें हैं। यदि सांस रुक जाए, बंद हो जाए तो शरीर मृत हो जाता है और ये सांस हम नहीं लेते, वो इस शरीर की प्राकृतिक प्रक्रिया है अर्थात ये कार्य कोई और करता है। इस अर्थ में हम इस संसार में अपनी इच्छा से नहीं, किसी पर (अन्य) की इच्छा से जीवन जी रहे हैं तो फिर हम सब परीक्षित ही हैं ना।

एक राजा परीक्षित है जिसे शाप है कि सात दिन में सांप के काटने से मर जायेगा और वह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वीतरागी होकर सज्जनों के मध्य बैठा यही चिंतन कर रहा है कि ऐसे मनुष्य को क्या करना चाहिए? मैं समझता हूँ हम सभी परीक्षितों (पर इच्छा पर जीवन है जिनका) यह सत्य समझ जाना चाहिये कि सात दिनों (सप्ताह) में सांप (काल) का ग्रास बनना हमारा सुनिश्चित भविष्य है और इसे समझ लेना ही भागवत धर्म।

इस प्रकार मृत्यु के भय से आक्रांत मनुष्य को निर्भय बनाने की कला है भागवत धर्म। 'मरना जरूर होगा, करना जो चाहे कर ले' सर्व समर्थ मानव देह प्राप्त कर यदि तू सोता रहा, विषयासक्ति में समय गंवाता रहा तो प्रायश्चित के आँसू लिये यहाँ से अलविदा होगा एक टीस के साथ कि तुझे जन्म तो मिला पर मानव जीवन की पूर्णता नहीं। तुम मनुष्य तो हुए मनुष्यता नहीं पाई, तुम व्यक्ति तो रहे पर व्यक्तित्व नहीं बना पाये। भागवत धर्म की पूजा मंदिर जाना, तिलक लगाना, कर्मकांड करना अथवा धर्म विशेष से जुड़ना नहीं है। भागवत धर्म में पूजा का अर्थ है परमात्मा को इस दुर्लभ जीवन के लिये शुद्ध मन से धन्यवाद देना और इस संसार समर में कर्मवान बन युद्धरत (कर्मशील) रहना, फिर लौकिक और पारलौकिक दोनों आनंद स्वमेव सिद्ध होंगे। श्रीमद्भगवत गीता में अर्जुन को यही बात श्रीकृष्ण समझाते हैं-

तस्यात्सवेसु कालेषु मामनुस्मर युद्ध च।
मय्यर्पितनोबुद्धिर्मामे वैष्यस्य संशयम्। (गीता 8/7)

आपके हथेली पर जल की बूंद का नगण्य अस्तित्व होगा किंतु यहाँ बूंद यदि सागर में मिल जाए तो वह सागर बन जायेगी। भागवत-चेतना यहीं पर सत्य आपको बताती है कि यदि आप सृजनशील बन स्वहित को परहित के स्वरूप में समन्वित कर सकें तो आत्मा-परमात्मा रूपी समुद्र में समाहित हो जायेगी। संत कबीर कहते हैं-

हेरत हेरत हे सखी, हैरत गयो हिराय।
बूंद समानी समुद्र में, तू कत हेरी जाय।।

भागवत धर्म मृत्यु पर विजय नहीं बल्कि मृत्यु के भय पर विजय है, किंतु मृत्यु भय नहीं सत्य है। जैसे व्यस्त कारोबारी अपनी आकस्मिक यात्रा के लिए अपना सूटकेस, अटैची हमेशा तैयार रखता है कि पता नहीं कब दिल्ली, मुंबई, मद्रास जाना पड़ जाये वैसे ही भागवत चेतना से युक्त व्यक्ति त्याग भाव से कर्मफल प्राप्त करते हुए सत्य रूपी मृत्यु के लिये तैयार रहता है। भागवत कर्मशील जीवन के साथ भयमुक्त मंगलमय मृत्यु की तैयारी सिखाती है क्योंकि ऐसा चिंतक व्यक्ति अपने सफलतम पूर्व व्यक्तित्व का निर्माण सहजता से कर लेता है। वह रोते हुए तो संसार में आता है, पर एक सहज मुस्कान के साथ संसार को रुलाते जाता है और संसार कहता है अहा! क्या जीवन पाया। भागवत मृत्यु के भय के त्रास से मुक्त करता है-

काल व्याल मुख ग्रास त्रास निर्णाशा हेतवे
श्रीमद्भगवतं शास्त्रं कलौ कीरेणः भाषितम्। (महात्म्य 11)

एक सुंदर सा दृष्टान्त श्री चैतन्य कहते हैं, एक संत की कुटिया के सामने एक पिंजरे में तोता बंद था, आते-जाते लोगों से कहता था 'बोलो तोता राधेश्याम, बोलो तोता सीताराम' सुन कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

श्रद्धालुजन आनंदित होते थे। एक दिन संतजी ने प्रवचन में कहा कि जो प्राणी एक बार मन से ईश्वर का नाम कहे तो वह भवबंधन से मुक्त हो जाता है। एक जिज्ञासु युवक ने संतजी से प्रश्न किया कि आपकी कुटिया में ये तोता दिन भर ईश्वर का नाम रटता है फिर इस पिंजड़े के बंधन से मुक्त क्यों नहीं हो रहा है? संत ने बड़ी सहजता से युवक से कहा कि बेटे सुनो ध्यान से वह तोता क्या कह रहा है। युवक ने ध्यान से सुना और कहा संतजी वो रटता है 'बोलो तोता राधेश्याम बोलो तोता सीताराम' संत ने मुस्कुराते हुए कहा बेटे यहाँ उसके भाव को ध्यान में रखो वो आने-जाने वालों को तोता मानता है और इन्हें नाम स्मरण करने को कहता है। उसे ये नहीं पता कि तोता तो वह स्वयं है और ये नाम ईश्वर के हैं, जो उसे बोलना हैं। जिस दिन उसे ये सत्य मालूम हो जाएगा उसी क्षण वो इस पिंजड़े क्या भवबंधन से मुक्त हो जाए। बस भागवत का मनोविज्ञान यही है कि व्यक्ति अपने भीतर की यात्रा करे। अपने वास्तविक स्वरूप को समझे। अपनी नश्वर काया से अमृतमय सृजनात्मक कार्य करे ताकि सत्य पथ पर शुद्ध चित्त (मन) से आनंदस्वरूप ब्रह्म की अनुभूति करे, तभी तो श्रीमद्‌भागवत के परमेश्वर हैं, सच्चिदानंद और इसकी वंदना है 'सत्यं परं धीमहि'।

हमारे मन में मृत्यु का भय न हो, क्योंकि हम जान चुके हैं कि नश्वर शरीर श्रेष्ठ कर्म के लिये मिला था, फिर तो इसे त्यागना ही होगा और हम त्याग भाव से जीवन को भोग करते हुए नैतिकता से भौतिकता का सुख प्राप्त कर आनंद सागर में विलीन हो जाएं यही भागवत चेतना का श्रेष्ठतम संस्कारण होगा।

ए ३९३, शाहपुरा
भोपाल (म.प्र.)

विनम्र अनुरोध

'अक्षरा' के सुधि पाठकों एवं रचनाकारों से विनम्र अनुरोध है कि अपना पूरा पता स्पष्ट शब्दों तथा पिनकोड नम्बर के साथ कार्यालय को अवश्य प्रेषित करें।

स्पष्ट पते के अभाव में 'अक्षरा' समय पर आपको उपलब्ध नहीं हो पाती है।

सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

(राडार इमेजिंग व लेजर किरणों के भूमिगत सर्वेक्षण द्वारा त्रिकोणीय चित्रांकन/परीक्षण सम्भव)

क्या ध्वस्त मलबे या नींव पर ही सैकड़ों मस्जिदें निर्मित हैं?

-हरिकृष्ण निगम

आज के दौर में की गई कुछ अद्यतन वैज्ञानिक खोजों के कारण सहसा विश्व भर के पुरातात्विक संगठनों एवं जग-प्रसिद्ध पुरातत्वविदों व इतिहासकारों को अनेक देशों में प्रचारित अनेक दुराग्रहों एवं मान्यताओं के धुंधलेपन को दूर कर समस्त इतिवृत्त के कालक्रमों या विजयी आक्रान्ताओं अथवा विजित देशों के मूल निवासियों को पुरानी हीनता ग्रंथियों को दूर करने का एक आकस्मिक वरदान जैसा भी प्रदान किया है।

फिर भी इन नई खोजों ने भारत को एक यथोचित वैज्ञानिक तथ्यपरक दृष्टिकोण देकर भी कदाचित देश के दशकों पहले से मुस्लिम-परस्त इतिहासकारों के बौद्धिक प्रपंच का अभी तक पूरी तरह भण्डाफोड़ नहीं किया है। वर्तमान सरकार का इस क्षेत्र में एक छोटा कदम भी हमारे विकृत इतिहास-लेखन में एक दूसरा ही नया अध्याय खोल सकता है जो सेकुलरवादी राजनीतिक पाखण्ड द्वारा ही अब तक रचा गया था।

आज के वैज्ञानिक उपकरण चाहे भूमिगत दबी हुई प्रस्तर अथवा धातुओं की प्रतिमायें हों, उत्कीर्ण प्रागैतिहासिक चित्रकारी या लिपि, शिलालेख अथवा मुद्रायें हों अथवा हिन्दू-जैन मन्दिरों की नींव या भग्नावशेषों पर आक्रान्ताओं द्वारा मस्जिदें खड़ी की जाने की गुत्थियाँ हों, उनका अभिलेखीय अध्ययन त्रियामी- थ्री डाइमेंशनल-चित्रों द्वारा विज्ञान-सम्मत दृष्टि से किया जा सकता है। जब से कार्बन डेटिंग प्रणाली के साथ-साथ भूतल की पर्तें भेदते हुए तीन आयाम वाली लेज़र अथवा राडार प्रणाली का उपयोग दुनिया भर के भूगोल और इतिहास के विश्वविख्यात संगठनों व अपनी पहल पर समर्पित पुरातत्वविदों को उपलब्ध हुआ है, बिना किसी उत्खनन या खुदाई के बहुमूल्य पुरातात्विक धरोहरों के बारे में यह पता लगाना सम्भव हो गया है कि उनके भीतर के प्रस्तर खण्ड या ईंटें अथवा भराव की सामग्री किसी धराशायी या ध्वस्त किए गए मन्दिरों के मलबे से बनी हैं या उनके अवशेषों पर तत्कालीन आक्रमणकारी द्वारा उनके ऊपर निर्मित करवाए गए थे।

स्वयं बाबा साहब अम्बेडकर ने इस देश के मुस्लिमों के बारे में बहुत पहले एक कड़वा यथार्थ लिखा था कि हिन्दू सदैव काफिर रहेंगे और सम्मान या बराबरी के योग्य नहीं हैं। चूंकि सदियों से हमलों में मन्दिरों व चैत्यों का ध्वंस किया गया, जबसे धर्म परिवर्तन किया गया, सम्पत्ति लूटी गई, इसलिए हिन्दुओं को उनके अतीत के हमलों की याद ताजा रखना उनका अधिकार रहा है - इसमें कोई अचरज की बात नहीं है। भारत हिन्दुओं और मुसलमानों की साझी मातृभूमि नहीं हो सकती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जब से श्री प्रफुल्ल गोरडिया का 'हिन्दू मस्जिद्स' नामक ग्रंथ प्रकाशित हुआ था जिसमें सैकड़ों हिन्दू मन्दिरों को ध्वस्त कर उनके स्थानों, कालक्रम व अन्य साक्ष्यों द्वारा उनको मस्जिदों में रूपान्तरित किए जाने का विवरण, सूची व विशद अध्ययन प्रकाशित हुए थे, देश के सरकारी पुरातत्व विभाग के भी कान खड़े हुए थे। पर मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, जो देश के प्रथम केन्द्रीय शिक्षा मंत्री थे उनके द्वारा इस सम्बन्ध में पारित प्रतिबन्ध के अधिनियम के अनुसार किसी भी कथित इस्लामी धरोहर को जांच के नाम पर भी छूना या उन्हें क्षति पहुंचाने की कल्पना भी करना किसी भी देशवासी के बस में नहीं था। उन्होंने चतुरता से उन्हें पूर्ववर्ती स्थिति में रखने की जैसे मुसलमानों की गारंटी का प्रावधान मुहैया करा दिया था। केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय की अक्षम्य ऐतिहासिक भूलें उस समय से सर्वविदित हैं जब इस मंत्रालय का नेतृत्व सन 1970 के दशक से ही सैयद नूरुल हसन करते थे।

तब से चाहे शिक्षा या मानव संसाधन मंत्रालय हो या भारतीय इतिहास की शोध परिषद - इण्डियन काउन्सिल ऑफ हिस्टॅारिकल रिसर्च हो, वे वामपंथियों व कथित सेक्युलर विचारकों के गढ़ होने के कारण सदैव अपने ही वास्तविक इतिहास को छल-छद्म से छिपाते व विकृत करते रहे। पिछली एक सहस्त्राब्दी में मन्दिरों की नींव या भग्नावशेषों पर मस्जिदें बनती रहीं और जो बात मुस्लिम इतिहासकार भी गर्व से स्वयं लिखते रहे, उस इतिहास को आधुनिक भारत के कलुषित साम्यवादी व कांग्रेसी झुठलाने में लगे रहे। यह देश की पूरी की पूरी पीढ़ी के साथ धोखे की साजिश थी कि इस्लामी हमलावरों ने सदियों तक निरन्तर हिन्दुओं के धर्मान्तरण के साथ-साथ मन्दिरों को ध्वस्त कर उनको मस्जिदों की शक्लें दीं पर स्वतंत्रता के बाद भी ऐसे पाशविक अपकृत्यों पर सरकार ने कोई सार्थक बहस न होने दी। उलटे बाद में भी पारित किए संशोधनों व अधिनियमों में उन सारी ऐसी मस्जिदों की नींव की एक ईंट की जांच करने की भी मनाही थी। यद्यपि उनकी अपनी परिभाषा में उनके धर्म की ऐसी मस्जिदें नाजायज थीं पर फिर भी मुस्लिम विजयी दर्प में मुसलमानों को पूर्ववर्ती गलतियों का कोई मलाल नहीं! अयोध्या में राम मंदिर था या नहीं, इस पर क्षुद्र स्तर की बहस वर्षों से जारी है और मुसलमानों के बाबरी ढांचे के ध्वस्त होने के बाद के हाहाकार में साम्यवादी व राजनीति प्रेरित सहधर्मी हिन्दू ही मुसलमानों के कवच के रूप में सामने आए। अन्य धर्मों में अपने आराध्यों पर लांछन लगाने वाले ईशनिंदा के अपराध में 'धर्मच्युत' कहलाते और घोर अकल्पनीय दण्ड के शिकार हो सकते थे। जब हिन्दुओं के मन्दिरों पर प्रतिशोध के हिंसक आक्रमण होते रहे, हिन्दू ही निष्क्रियता दिखा कर उनके प्रति शान्ति बनाने का दम्भ भरते थे।

हमारे देश की संसद में सर्वसम्मति से पारित किया गया कोई भी अधिनियम इतना शर्मनाक व राष्ट्रीय लज्जा का विषय नहीं कहा गया है जैसा 1991 का ''प्लेसेज़ ऑफ वरशिप (स्पेशल प्राविजन्स) अधिनियम जो विडम्बना है कि नरसिंहराव की नेतृत्व वाली सरकार के समय हुआ था। इस अधिनियम के अन्तर्गत यदि कोई राष्ट्रभावना से प्रेरित होकर पूर्व हिन्दू मन्दिर पर बनी नाजायज मस्जिद को हिन्दुओं को सद्भावना के कारण लौटाना भी चाहे तो ऐसा नहीं कर सकता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

है। इसी अधिनियम के अन्तर्गत धार्मिक स्थलों की जैसी स्थिति 1947 में थी, उसे ही अक्षुण्ण रखने का प्रावधान है।

इस सम्बन्ध में अविभाजित भारत का वह प्रकरण याद करना प्रासंगिक होगा जब पंजाब में सर सिकन्दर हयात खान एक चर्चित मुख्यमंत्री थे। लाहौर के मुसलमान शहीदगंज गुरुद्वारा पर कब्जा करना चाहते थे जो महाराजा रणजीत सिंह के शासक बनने से पहले तक एक मस्जिद थी। सर सिकन्दर हयात का कहना था कि अगर आज मुसलमानों ने गुरुद्वारे को फिर मस्जिद बना लिया तब देश में मस्जिदें जो एक समय हिन्दू मन्दिर थे उनको रखने का मुसलमानों का अधिकार स्वतः समाप्त हो जाएगा। उन्होंने यहाँ तक कह डाला कि दिल्ली में कुतुब मीनार के निकट की विशाल कुव्वत-उल इस्लाम (इस्लाम की शक्ति) नामक दिल्ली की वह मस्जिद जो 67 हिन्दू मंदिरों के मलबे व अवशेषों से बनी है उसे हिन्दुओं को देनी पड़ेगी। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि कई बार पराजित होने पर भी तुर्की घुड़सवार सेना के साथ मध्य एशिया का आक्रमणकारी मोहम्मद गोरी जब 1192 में पृथ्वीराज चौहान को तराइन के युद्ध में पराजित कर सका तब उसने लालकोट को लूट कर जला डाला था। सर हयात खान ने चेतावनी दी थी कि इस मस्जिद व अजमेर शरीफ को भी इस तर्क से भविष्य में हिन्दुओं को सौंपना पड़ेगा।

यदि यूरोप व पश्चिमी मानदण्डों से देखें तो स्थिति भारत से पूरी तरह से विपरीत थी। जब मुसलमानों ने स्पेन के ईसाइयों को पराजित किया था अनेक बड़े चर्च मस्जिदों में बदल दिए गए थे। पर जब 15 वीं शताब्दी में ईसाइयों ने मुस्लिमों को खदेड़ दिया था तब सभी मस्जिदें कैथीड्रेल, चर्च और चैपल में बदल दिए गए थे। रूस व यूरोप के अनेक देशों में यही हुआ था। प्रो. आनेल्डि टायनबी जब भारत आए थे उन्होंने इसका स्पष्ट उल्लेख किया था। 50 के दशक के मध्य में अपने आज़ाद भाषण-श्रृंखला में उन्होंने कहा था कि जब वे बनारस में थे उन्हें इस बात से धक्का लगा था कि गंगा के पवित्र तट पर विश्वनाथ परिसर से लगी विशाल मस्जिदें व ईदगाह है। मथुरा में भी कृष्ण के जन्म स्थान पर मुस्लिम परिसर व मस्जिद देश के शरीर पर एक व्रण की तरह लगते हैं। सभी जानते हैं कि कृष्ण जन्मभूमि पर ईदगाह औरंगजेब द्वारा बनवाया गया था जो हिन्दुओं के लिए सदैव कष्टकर ऐतिहासिक याद रहेगी।

इसी तरह शहाबुद्दीन मोहम्मद गोरी जो तराइन के 1192 के द्वितीय युद्ध के बाद अजमेर में विशाल हिन्दू मन्दिरों के स्तम्भों व प्राचीरों को देख कर इतना क्रोधित हो गया कि उसमें अपने गुलाम जनरल कुतुबउद्दीन ऐबक को आदेश दिया कि वह उनको तुरंत गिरा दे और वहाँ 60 घंटे की भीतर एक ऐसा ईदगाह बनाए जिससे लौटते समय वहाँ नमाज पढ़ सके। इसी को आज ''अढ़ाई दिन का झोपड़ा' कहा जाता है जहां पहले 70 मन्दिर खम्भों से ढ़ँकी विशाल छ्त के भीतर थे। 30 फीट ऊंचे नक्काशी किए स्तंभ एक आश्चर्य कहे जाते हैं जो आज भी अनेक संग्रहालयों' में रखे हैं।

वैसे तो देश के हर कोने में इस अभिशाप के पुरातात्विक उदाहरण मिल जाएंगे पर पश्चिमी बंगाल के रायगंज और पश्चिमी दीनाजपुर के बीच राष्ट्रीय महामार्ग 34 जो मालदा जाता है वहाँ पर एक विशाल मस्जिद है जो एक विभिन्न रंग के विशाल पत्थरों के चबूतरे पर लाल ईंटों से बनाई गई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है। कोई भी यात्री इसकी नींव के पास गणपति, शिव पार्वती, स्वास्तिक, शंख, मीन, यक्ष, यक्षिणियों, द्वारपालों की मूर्तियों को स्पष्ट देख सकता है। मुखाकृतियों को विकृत करने की चेष्टा भी दिखती है। इस मस्जिद की उत्तरी दीवाल में 20 आले हैं जिनमें मंदिरों जैसी आकृतियां व पवित्र प्रतीक हैं। सन् 1888 में बंगाल के पुरातत्व विभाग के इंजीनियर जोसेफ डेवीदिच मिलिक बेगलारोफ ने इसे खोज निकाला था और इसे अदीना मस्जिद कहा था। मूल रूप से इस विशाल शिव मंदिर को मस्जिद कहना भी लज्जा का विषय प्रतीत होता है।

स्वयं हर प्रसिद्ध इतिहासकार ने विस्तार से जौनपुर के प्राचीन अटाला देवी मंदिर के मस्जिद बनाए जाने और दूसरी अनेक विशाल मस्जिदों के परिसरों में हिन्दू भवनों के अवशेषों को जड़ने के प्रयत्नों में बीसों पृष्ठ लिख डाले हैं पर हिन्दू बुद्धिजीवियों की भीरुता व विवादों से बच निकलने की आदत, अब वह समय आ चुका है, छूटनी ही चाहिए!

सन 1669 में धर्मान्ध औरंगजेब ने एक फरमान जारी किया था- काफिरों के सारे मंदिर व पाठशालाएं नष्ट कर दिए जाएं और उनकी पूजा पाठ पर रोक लगाई जाए। सोमनाथ का विश्वप्रसिद्ध शिव मंदिर महमूद गजनवी ने लूटा और नष्ट किया था पर राजा भीमदेव ने उसका पुनर्निर्माण किया था। औरंगजेब ने उसे फिर मिट्टी में मिला दिया था। मथुरा का प्रसिद्ध मंदिर वीर सिंह बुंदेला ने विशाल राशि खर्च कर बनवाया था जिसे औरंगजेब की आज्ञा से तोड़ कर मस्जिद बनाई गई थी। मूर्तियों को तोड़ कर, उन टुकड़ों को जहांनारा मस्जिद की सीढ़ियों पर चुनवा दिया गया जिससे उसे मुसलमान रौंदता हुआ जाकर नमाज पढ़े। उज्जैन और मालवा के सारे मंदिरों को भी औरंगजेब ने गिरवाया और उनकी जमीन व सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया। उड़ीसा, राजस्थान, गुजरात के सारे मंदिरों को उसने ध्वस्त कराया। उदयपुर पर आक्रमण कर वहां 180 मंदिर, चित्तौड़ के 63 और अम्बर के 66 मंदिर उसने ध्वस्त कराए। छोटे मन्दिरों की क्षेत्रवार सूची में अनगिनत स्थान थे जो मुस्लिम इतिहासकार स्वयं देते रहे। यहां तक कि दिल्ली की जामा मस्जिद की सीढ़ियों पर पड़े रहने वाले नंगे फकीर सरमद को उसने गला काट कर मरवा दिया क्योंकि उसने कहा 'अनलहक' - मैं ईश्वर हूँ! औरंगजेब को अनेक इतिहासकारों ने भी जल्लादों का जल्लाद कहा था पर यह एक क्रूर विडम्बना है कि देश की राजधानी दिल्ली में ही हमने 'औरंगजेब रोड' बनाई है, उसका प्रतिरोध करने वालों का नाम भी कहीं नहीं लिया जाता है।

हाल के अंग्रेजी के प्रमुख पत्रों की कतरनें, नई पीढ़ी के पुरातत्वविदों के वैज्ञानिक उपकरणों के उपयोग द्वारा कई देशों का जिस तरह फिर नया इतिहास लिखा जा रहा है, उस पर नया प्रकाश डालती हैं। लंदन से कौन्तेय सिन्हा नामक संवाददाता द्वारा 'टाईम्स आफ इंडिया' के 11 सितंबर 2014 के अंक में प्रकाशित समाचारों के अनुसार प्रसिद्ध पुरातन पर्यटन स्थल ''स्टोनहेंज'' के दो किलोमीटर के इर्दगिर्द जमीन के नीचे सदियों पुराने विशाल पत्थरों के 17 विशाल प्राचीन स्तम्भ एक कतार में-धरती के भीतर पाए हैं। ब्रिटिश पुरातत्वविदों ने शक्तिशाली राडार व ड्रोन के साथ साथ सेटेलाइट के माध्यम से धरती के भीतर खोज निकाले हैं जिनका पहले किसी को पता भी नहीं था। इसके साथ ही विशाल प्रागैतिहासिक लौह व कांसे के युग की रोमन बस्तियों के अवशेषों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के वहाँ आसपास होने के भी साक्ष्य मिले हैं। यह खोजें भूमि के स्तरों के परे देख सकने वाली रिमोट सेंसिंग तकनीकों व विशेष राडार कैमरों द्वारा जियोलॉजिकल सर्वेक्षण के चार मीटर की गइराई तक देख सकने की क्षमता के कारण हुई हैं। यह भी साफ पता चला है कि इंग्लैण्ड के इस 'स्टोनहेंज' जैसे स्थल मात्र प्राकृतिक नहीं बल्कि वहाँ पाए गए भूमिगत पत्थर व स्तम्भ 3100 ईसा पूर्व के हैं। यह वैज्ञानिक सुविधा भारतीय पुरातात्विक विशेषज्ञों को क्यों नहीं दी जाती है, जिससे प्राचीन तोड़े गए मंदिरों व उनके निकट के परिसरों की नींव का अध्ययन किया जा सके। कानूनी प्रावधानों के कारण इस देश में हिन्दू मंदिरों पर बनी मस्जिदों की गुत्थियाँ कदाचित कभी नहीं सुलझेंगी, यदि हमारे पुरातत्वविद भी उनके विस्तृत डिजिटल मानचित्र बनाने में अनुमति नहीं पाते। अनेक दीवारों, प्राचीरों, पत्थरों या ईंटों व चुनी गई जालियों के पीछे अनगिनत प्राचीन संस्कृत व द्रविड़ भाषाओं की तिथि के साथ-साथ वे प्रतीक जो स्वास्तिक, ओम, चक्र, मीन, शंख, वज्र, यक्ष, यक्षिणी या द्वारपालों को इंगित करते हैं सारा रहस्य खोल देते।

कम्बोडिया के विशालतम हिन्दू मन्दिर अंगकोरवाट की आज की खोज व उससे लगी विशालकाय कई स्तरों पर बनाई गई राजधानी अंगकोर थोम की आधुनिक युग की खोज एक महाकाव्य के स्तर की है जिस पर अनेक विशेषज्ञों के ग्रंथ उपलब्ध हैं। आज का भारतीय तो इस बात से भी अनभिज्ञ है कि एक समय हमारे देश के तीर्थयात्री व श्रद्धालु यहाँ म्यांमार के रंगून के रास्ते (भूमार्ग) से भी जाते थे। पहले नेपाल के पशुपतिनाथ तक की यात्रा फिर अगला पड़ाव विष्णु को समर्पित कम्बोडिया का मन्दिर होता था। आज भी दक्षिणी-पूर्वी एशिया की हिन्दू खमेर जाति जो थाईलैण्ड, लाओस, म्यांमार व जावा सुमात्रा और वियतनाम तक फैली है यहां धर्मान्तरण के बावजूद इसे अपनी धरोहर मानती है, वहां आती है। काल के प्रवाह में हिन्दुओं के नौकायन के विशेषज्ञ जिन्हें वंशज माना जाता था, स्वयं यहां का महत्व भूल गए। कालान्तर में आज के हिन्दू इस सारे दक्षिण पूर्वी हिन्दू एशिया की पट्टी से अनभिज्ञ होते गए।

आज हम उन सम्भावनाओं की दहलीज पर खड़े हैं जहां हम नई सच्चाइयों, नई परिदृष्टि और उन ऐतिहासिक तथ्यों की रोशनी में निर्भीकता से कह सकते हैं कि हिन्दुओं को अपने अतीत के प्रति कोई हीन ग्रंथि या अपनी आस्था पर पड़ने वाले हमलों के प्रति सुविधावादी तटस्थ रुख अपनाना आवश्यक नहीं है। सेक्युलर राजनीति ने हमें समग्र रूप से इतना उदासीन बना दिया है कि हम भूल जाते हैं कि राजनीति के क्षेत्र में जो कुछ भी होता रहा है वह इस राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है।

आज भी अमेरिकी विशेषज्ञों ने 'नेशनल ज्योग्राफिक' पत्रिका व सी.एन.एन. व बी.बी.सी. के इतिहास संबंधी चैनलों के माध्यम से कम्बोडिया के अंगकोरवाट और इण्डोनेशिया के बोरोबुदुर जैसे भव्य व चमत्कृत करनेवाले हिन्दू-बौद्ध विशाल मन्दिर परिसरों लगी भूगर्भ में कई स्तरों पर नए आधुनिक शहरी-वास्तुकला व जटिल नगर योजनाओं का खुलासा किया है और कहा है कि

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्राचीन विश्व के पिरामिडों से भी आगे वे मिस्त्र की सभ्यता को भी पीछे छोड़ देते हैं। हमारी सभ्यता के मूल देश की साहसी उपशाखायें इतनी विस्मयकारी व असाधारण थीं जिन्हें पहले अंग्रेजों ने फिर स्वयं वामपंथियों ने छिपाने की कोशिश की थी।

हिन्दू-मोन-खमेर जातियों के हिन्दू धर्म के प्रति समर्पण 9 वीं से 12 वीं शताब्दी के बीच अपने चरमोत्कर्ष पर था। अंगकोरवाट 1150 ई. के इर्द गिर्द तक फला-फूला था और अंगकोर थोम 1225 तक पूरा हुआ था। इसमें दक्षिणी-पश्चिमी चीन के थाई मूल के हिन्दुओं और इण्डोनेशिया द्वीप समूह व वियतनाम व लाओस के हिन्दुओं का विजय नागर साम्राज्य के हाम्पी के निकटवर्ती क्षेत्रों का मिलन हुआ था जिन्होंने अपनी आर्यभूमि के सभी नामों के स्थल भी वहाँ पुनः रोपित कर डाले थे। एक अमेरिकी पुरातत्वविद ने कहा है कि विश्व के आश्चर्य के रूप में हिन्दू स्थापत्य को मिश्र के पिरामिडों से भी ऊँचा दर्जा दिया जाना चाहिए।

वायुयानों से संचालित लेजर टेक्नोलॉजी व इमेजिंग द्वारा जमीन के भीतर सड़कों, सुरंगों व नहरों का एक नेटवर्क भी खोज निकाला गया जो कम्बोडिया के अंगकोरवाट मंदिर परिसर को 'थोम' काम्प्लेक्स से जोड़ता है। सिडनी की नेशनल एकाडमी ऑफ साइन्सेज़ का एक शोध प्रकाशन हाल में सामने आया है जिसमें लेजर किरणों द्वारा की गई खोज से 1200 वर्षों पहले के एक ऐसे सुनियोजित भूमिगत शहर को खोज निकाला गया है, जो अब पुरातत्वविद अभिलेखित कर रहे हैं। कम्बोडिया के राष्ट्रीय ध्वज पर 12 वीं शताब्दी के अंगकोरवाट हिन्दू मंदिर अंकित किया जाता है और यूनेस्को ने इसे पहले ही विश्व धरोहर घोषित कर दिया है। वैसे पिछली पीढ़ी के पुरातत्वविदों को पहले ही यह अनुमान था कि यह महेन्द्र पर्वत नगर सिमनदीव प्रांत के फ्नोम कुलेन पहाड़ के घने जंगलों के वितान में ही कहीं छिपा है। 'एयर बार्न' लेजर किरणों के द्वारा लम्बी दूरियों के पहले विस्तृत मानचित्रों में अनेक अनखोजे भवन, मंदिर मार्गों व उनके चतुष्कोंणों आदि के अस्तित्व के बारे में पता चला है।

पुरातत्वविदों के अनुसार इसके पहले किसी भी अध्येता व वैज्ञानिक को जंगलों के नीचे, जमीन में दबे नगर व मंदिरों के इतने स्पष्ट चित्र कभी देखने को नहीं मिले थे। शताब्दियों पहले मंदिर व सामाजिक सेवाओं से जुड़े भग्नावशेषों का ऐसा सम्मोहित करने वाला चित्र बनाना पहले असम्भव था। यह नगर सदियों पहले विस्मृत कर दिया गया था इसलिए उसे फिर सामने लाना एक अविश्वसनीय कहानी लगती है।

वायुयानों में लेज़र टेक्नोलाजी उपयोग करने में यान की धरती पर छोड़ी ''षलसेज़'' दूरी को माप कर क्षेत्र का तीन कोणीय या त्रियामी चित्र खींच सकती है। पुरातत्वविदों का सर्वाधिक महत्व का साधन घनी झाड़ियों व जंगलों के आच्छादन को भेद कर जहां चाहे केन्द्रित कर सकता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि आज हम उन सम्भावनाओं की दहलीज पर खड़े हैं जहां हम नई सच्चाइयों, नई परिदृष्टि और उन ऐतिहासिक तथ्यों की रोशनी में निर्भीकता से कह सकते हैं कि हिन्दुओं को अपने अतीत के प्रति कोई हीन ग्रंथि या अपनी आस्था पर पड़ने वाले हमलों के प्रति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुविधावादी तटस्थ रुख अपनाना आवश्यक नहीं है। सेक्युलर राजनीति ने हमें समग्र रूप से इतना उदासीन बना दिया है कि हम भूल जाते हैं कि राजनीति के क्षेत्र में जो कुछ भी होता रहा है वह इस राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के ज़ीवन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है।

जिस इस्लामी आस्था के प्रचारक व सैकड़ों इतिहासकार बिना अपवाद के लगातार कहते रहे हैं कि यह फक्र की बात है कि हिन्दुओं के भव्य मंदिर ध्वंस किए व रौंदे गए जिसको अनेक यूरोपीय इतिहासकारों ने अपने ग्रंथों में दोहराया उसे किस दुष्प्रचार ने हमारे बीच के लोगों को नकारने का साहस नहीं दिया। यह नई खोज ही सिद्ध करेगी, जो पूर्णत: निष्पक्ष व विज्ञान पर आधारित हो। पुरातात्विक सर्वेक्षण के निदेशकों के हाथ पर लगाई हथकड़ी हटाना जरूरी है, जिसके तहत दर्जनों मस्जिदों के दरवाजों पर यक्ष, यक्षिणी, पूर्ण घट, कमल के फूल हिन्दू शैली की सजावट व शुभ प्रतीक चिन्हों का भंडार देख कर भी तथा उपलब्ध प्रमाणों को देखकर भी वे अपनी जबान नहीं खोल सके। आज वैज्ञानिक खोज के उपकरणों के बल पर ये अपना दायित्व सरकारी अधिनियमों के बावजूद भी निभा सकते हैं। अब तक हम सबने देखी है सेक्युलरवादी ढोंगी राजनीतिबाजों और सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की मुस्तैदी, पर अब इतिहास के कटघरे में वे खड़े किए जा सकते हैं जो राष्ट्र के प्रति अन्याय करते हैं। अयोध्या के प्रश्न पर मुस्लिम नेता व देश के कुछ अंग्रेजी समाचार पत्र दावा करते थे कि यदि यह सिद्ध कर दिया जाए कि उस जगह पर बाबरी मस्जिद ही थी या उसके पहले मंदिर था तो वे जगह हिन्दुओं को दी जाएगी। सारा निर्णय इस बात पर टिका था कि सिद्ध किया जाए कि वहाँ राम मंदिर था। उस समय की सोची-समझी चाल समय के अन्तराल के बाद भी आज क्यों नहीं लागू की जाती है और यह तर्क व मानदण्ड देश के सभी भागों में उठाना समीचीन होगा। हिन्दू को एक प्रश्न पर कम से कम आज एकजुट होना होगा। जब तक वह बिखरा रहेगा, उसके विचारों की कोई परवाह नहीं करेगा। सभी मार्क्सवादी व धर्मनिरपेक्ष उदारवादी कहलाने वाले अपने मुखौटों के पीछे धर्मनिरपेक्ष नहीं हैं वे मात्र हिन्दू विरोधी हैं, इतने धर्मों का तुष्टिकरण उनके लिए लोकप्रियता की सर्वाधिक उपयोगी सीढ़ी है। आज हिन्दुओं की मनोदशा का आकलन अंग्रेजी अखबारों की उनके लिए प्रयुक्त अपमानजनक कसौटी पर ही होना चाहिए न कि राजनीतिक त्रुटिहीनता की पाखण्डपूर्ण आचरण संहिता पर, मात्र इसीलिए हमारे प्राचीन मंदिरों का त्रासदीपूर्ण भूतकाल सिर्फ इतिहास के ग्रंथों के हाशिए पर स्फुट टिप्पणी बनकर न रह जाए, हमारे सरकारी तंत्र की इस दिशा में पहल अनिवार्य है।

ए-1002 पंचशील हाईट्स महावीर नगर
कान्दिवली (प), मुम्बई-400067
मो. 9820215464

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

आपके व्यक्तित्व का दर्पण है आपकी आभा

-विजय कुमार उपाध्याय

प्रत्येक व्यक्ति के चारों ओर ऊर्जा का एक अदृश्य आवरण उपस्थित रहता है जिसे 'आभा' कहा जाता है। अंग्रेजी में ऊर्जा के इस अदृश्य आवरण को औरा (Aura) कहते हैं। यह आभा उस व्यक्ति के अन्दर उपलब्ध कार्यशील जीवनी शक्ति को प्रतिबिम्बित करती है। यह ऊर्जा क्षेत्र कुछ उसी प्रकार का है जैसा किसी चुम्बक के चारों ओर पाये जाने वाले चुम्बकीय क्षेत्र का रहता है। चुम्बकीय क्षेत्र के समान ही आभा क्षेत्र की उत्पत्ति भी उस व्यक्ति के अन्दर होती है, परन्तु यह ऊर्जा आस-पास की परिस्थिति पर भी निर्भर करती है।

सामान्य तौर पर किसी व्यक्ति की आभा ऊर्जा का एक अदृश्य आवरण है, परन्तु प्रयास करने पर इसे देखा भी जा सकता है। इसके लिये आप किसी शान्त तथा क्षीण प्रकाश वाले एक कमरे का चयन कीजिये। इस कमरे में पहुँच कर आप अपनी आँखों को ऐसा अभ्यस्त बनाइये कि वे इस अत्यल्प प्रकाशित कमरे में भी धीरे-धीरे देखने लगें। अब आप किसी व्यक्ति को उस कमरे की उजली दीवार के निकट बैठने को कहें। अब उस व्यक्ति की ओर दृष्टि डालें, परन्तु अपनी नजरों से उस व्यक्ति को न देख कर उसके सिर से लगभग १०-१५ सेंटीमीटर ऊपर देखें। शुरू-शुरू में वहाँ आपको कुछ नहीं दिखायी पड़ेगा, परन्तु धीरे-धीरे आप उस व्यक्ति के सिर के ऊपर एक अत्यन्त धुंधला प्रकाश देखेंगे। अब आप अपनी नजरों को उस व्यक्ति के सिर के ऊपर से हटा कर किसी खाली स्थान पर डालें। यदि धुंधला प्रकाश वहाँ पर लुप्त होता दिखाई पड़े तो आप समझ लें कि आपने उस व्यक्ति की आभा देखी है। इस प्रयोग को आप बार-बार दुहरायें। यदि प्रत्येक बार आपको उपर्युक्त दृश्य दिखायी पड़े तो आप निश्चित रूप से समझ लें कि आपने उस व्यक्ति की आभा देख ली है।

अब तो आभा के चित्र खींचने की भी तकनीक विकसित कर ली गयी है। आभा के चित्र खींचने की इस विधि को 'किर्लियन फोटोग्राफी' कहा जाता है। किर्लियन फोटोग्राफी के लिये काम में लाया जाने वाला उपकरण प्रकाश का उपयोग नहीं करता, बल्कि उस विकिरण स्पार्क का उपयोग करता है जो ऑबजेक्ट से निकलता है। इस फोटोग्राफी में उपयोग में लायी जाने वाली फिल्म के द्वारा व्यक्ति के शरीर के चारों ओर मौजूद आभा का चित्र आ जाता है।

आभा का चित्र प्राप्त करने के लिये एक अन्य विधि का भी उपयोग किया जाता है। इस विधि को 'इलेक्ट्रो क्रिस्टल थैरेपी' कहा जाता है। इस विधि की खोज हैरी ओल्डफील्ड नामक एक ब्रिटिश वैज्ञानिक द्वारा आज से लगभग ४० वर्ष पूर्व की गयी थी। इस फोटोग्राफी की सहायता से रोगों की पहचान भी आसानी से की जा सकती है। रोगों की पहचान किये जाने की इस विधि का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नाम रखा गया है 'इलेक्ट्रो स्कैनिंग मेथड' जिसे संक्षेप में 'ई.एस.एम.' कहा जाता है। भारत में मुम्बई के रहने वाले डॉ. के. एस. यमुना ने आभा की फोटोग्राफी तथा विश्लेषण हेतु 'इलेक्ट्रो स्कैनिंग मेथड' में थोड़ा सुधार किया तथा एक नयी विधि विकसित की जिसे 'पॉली कंट्रास्ट इंटरफेस फोटोग्राफी' (पी.आई.पी.) कहा जाता है। इस विधि द्वारा रोगों की पहचान की जा सकती है। इसके फलस्वरूप किसी भी रोगी की चिकित्सा की दिशा निर्धारित करने में बहुत अधिक सुविधा हो सकती है।

कुछ शोधकर्ताओं द्वारा किये गये अध्ययनों के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया है कि किसी भी मानव की आभा सात परतों की बनी हुई रहती है। यह आभा उस व्यक्ति के शरीर के चारों ओर तीन-चार फीट की दूरी तक फैली हुई रहती है। कभी-कभी कुछ व्यक्तियों की आभा उनके शरीर से पाँच-छ: फीट की दूरी तक फैली हुई दिखायी देती है। इस प्रकार की आभा प्राय: विकसित आत्मा वाले लोगों में पायी जाती है। ऐसे लोगों में सामान्य तौर पर बड़े-बड़े संन्यासी तथा सिद्ध पुरुष शामिल रहते हैं।

किसी मेले या सभा इत्यादि में जहाँ बहुत लोग एकत्र होते हैं, वहाँ यदि एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के निकट आता है, तो शारीरिक रूप से एक-दूसरे का स्पर्श नहीं होने पर भी उनकी आभायें एक दूसरे से टकराती हैं तथा एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं। यही कारण है कि ऐसे भीड़ वाले स्थानों में लोग प्राय: बेचैनी का अनुभव करते हैं परन्तु हम यदि किसी महान आत्मा या सिद्ध पुरुष के निकट आते हैं तो उनकी आत्मा हमारे ऊपर अच्छा प्रभाव डालती है। इस प्रभाव के कारण हमारे कुत्सित विचार सुधार सकते हैं तथा हम रोगमुक्त हो सकते हैं।

आभा के अनेक रंग हो सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की आभा के रंग एवं आकार में समय-समय पर परिवर्तन होता रहता है। आभा का रंग तथा आकार उस व्यक्ति की मानसिक स्थिति, उसके विचार, उसकी भावनात्मक स्थिति तथा उसके स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। यदि हमें कोई रोग पकड़ता है तो सबसे पहले यह हमारी आभा पर आक्रमण करता है। आभा पर आक्रमण के दो-तीन महीने बाद यह बीमारी हमारे शरीर के ऊपर अपना प्रभाव डालती है। यदि आभा का अध्ययन करने की क्षमता किसी व्यक्ति में हो तो वह काफी पहले ही अनुमान लगा ले सकता है कि अमुक व्यक्ति अमुक रोग से ग्रस्त होने जा रहा है परन्तु आभा का अध्ययन करने तथा उसके आधार पर निष्कर्ष निकालने के लिये किसी भी व्यक्ति को एकाग्रता तथा धैर्यपूर्वक नित्य अभ्यास करना पड़ता है। रॉबर्ट ब्रूस नामक एक ब्रिटिश मनोविज्ञानवेत्ता ने इस दिशा में काफी अभ्यास किये हैं। इन अभ्यासों के फलस्वरूप उसने आभा को देखने तथा उसका विश्लेषण कर रोगों की पहचान करने में काफी सफलता प्राप्त कर ली है। उसका कहना है कि आभा किसी व्यक्ति के शरीर के चारों ओर इन्द्रधनुष के समान छायी हुई दिखायी पड़ती है। किसी व्यक्ति की आभा की सामर्थ्य का मूल्यांकन उससे प्रवाहित होने वाली ऊर्जा के परिमाण तथा गुण के आधार पर किया जा सकता है।

आभा के रंगों का उत्सर्जन रीढ़ में स्थित ऊर्जा केन्द्रों से होता है। हमारे देश में योग से संबंधित प्राचीन ग्रंथों में रीढ़ में स्थित इन ऊर्जा केन्द्रों को चक्र कहा गया है। प्राचीन ऋषियों ने इन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चक्रों की संख्या आठ बतायी है। हमारी रीढ़ में जो चक्र सबसे नीचे स्थित है, उसका नाम है 'मूलाधार चक्र'। यह चक्र गुदा द्वार के ठीक पीछे स्थित है। इसके ऊपर जो दूसरा चक्र है उसे 'स्वाधिष्ठान चक्र' कहा जाता है। यह चक्र शिश्न के ठीक पीछे स्थित है। इसके ऊपर स्थित ही तीसरा चक्र जिसे 'मणिपुर चक्र' कहा जाता है। यह चक्र पाकस्थली के ठीक पीछे स्थित है। मणिपुर चक्र के ऊपर स्थित है चौथा चक्र जिसे 'अनाहत चक्र' कहा जाता है। यह चक्र हमारे हृदय के ठीक पीछे स्थित है। इसके ऊपर है पाँचवाँ चक्र जिसे 'विशुद्धि चक्र' कहा जाता है। यह चक्र कंठ के ठीक पीछे स्थित है। इसके ऊपर स्थित है छठा चक्र जिसे 'आज्ञा चक्र' कहा जाता है। यह चक्र भृकुटि के मध्य में स्थित है। इसके ऊपर स्थान है सातवें चक्र का जिसे 'बिन्दु विसर्ग' या 'सोम चक्र' कहा जाता है। यह चक्र हमारी शिखा के निकट स्थित है। हमारे सिर के उच्चतम बिन्दु पर स्थित है आठवाँ चक्र जिसे 'सहस्रार चक्र' कहा जाता है। अध्ययनों से पता चला है कि जो व्यक्ति जितना ही निम्न प्रवृत्ति (काम, क्रोध इत्यादि भावनाओं से ग्रस्त) का रहता है, उसकी आभा का मूल स्रोत उतना ही नीचे का चक्र रहता है। इसके ठीक विपरीत जो व्यक्ति जितने उच्च विचार का होता है, उसकी आभा का स्रोत उतना ही ऊपर का चक्र होता है।

भारत में तो काफी प्राचीन काल में ही आभा का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था। आभा के गुणों तथा व्यक्ति के स्वभाव के बीच काफी गहरा सम्बन्ध पाया गया था। वे किसी व्यक्ति के आभा के रंग तथा आकार को देख कर यह अनुमान लगा लेते थे कि वह व्यक्ति सात्विक प्रवृत्ति का है या तामसी प्रवृत्ति का। एक ही व्यक्ति की आभा के गुण समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर जब आप प्रसन्न मुद्रा में रहते हैं तो आपकी आभा का रंग तथा आकार उस आभा के रंग तथा आकार से भिन्न होगा जब आप क्रोध की मुद्रा में रहते हैं। इसी प्रकार जब आप मानसिक तनाव में हैं तो आपकी आभा उस आभा से भिन्न होगी जब आप आराम कर रहे हैं। आजकल बहुत से ऐसे लोग हैं जो किसी व्यक्ति के निकट पहुँचते ही उसकी आभा को देख लेते हैं तथा उसके विश्लेषण के आधार पर वे उस व्यक्ति के स्वभाव, स्वास्थ्य तथा उसकी मुद्रा का अनुमान लगा लेते हैं।

राजेन्द्र नगर हाउसिंग कालोनी
के के सिंह कालोनी, पो.जमगोड़िया
वाया-जोधाडीह (चास), झारखंड-८२७०१३
जिला-बोकारो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

स्वतंत्रता संग्राम के सिद्ध महात्माः लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

-अनामिका प्रकाश श्रीवास्तव

जन्म-२३ जुलाई
प्रयाण-१ अगस्त

भारत के द्वितीय शिवाजी तथा स्वतंत्रता संग्राम के 'सिद्ध महात्मा' लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने 23 जुलाई 1856 को महाराष्ट्र के एक ब्राह्मण परिवार में अन्धकार में 'प्रकाश ज्योति' की तरह जन्म लिया। अभिमन्यु की तरह, उनमें सहज प्रतिभा तथा संघर्ष के लिए साहस का असीम भण्डार था। अपनी निःस्वार्थ देशभक्ति, अदम्य साहस, स्वतंत्र एवं सबल राष्ट्रीय प्रवृत्ति के कारण वे न केवल उग्र राष्ट्रवाद की त्रिमूर्ति (पंजाब केसरी लाल लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल) के अभिन्न घटक थे, अपितु स्वतंत्र भारत के महान निर्माताओं में से एक थे।

1879 में विधि की डिग्री लेने के बाद, तिलक जी ने क्षेत्रीय स्तर के बजाय राष्ट्रीय स्तर पर चिन्तन करना आरम्भ किया। शिक्षा के राष्ट्रीय महत्व को वे अच्छी तरह समझते थे। अतः उन्होंने भारत के स्वर्णिम भविष्य की दिशा में, अपने मित्र आगरकर व चिपलूणकर के सहयोग से 1 जनवरी 1880 को पूना में 'न्यू इंग्लिश स्कूल' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य युवक-युवतियों को सस्ती राष्ट्रीय शिक्षा देना था। इसके अतिरिक्त, वे 'दकन एज्युकेशन सोसाइटी' तथा फर्गूसन कॉलेज, पूना के संस्थापकों में से थे। अपने विचारों को सार्वजनिक रंग देने के लिए उन्होंने दो साप्ताहिक पत्र-मराठी भाषा में 'केसरी' तथा अंग्रेजी भाषा में 'मराठा' प्रकाशित किए, जिनके माध्यम से उन्होंने 1880 से जीवनपर्यन्त प्राकृतिक अधिकार, राजनीतिक स्वतंत्रता व न्याय के सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचाया।

फ्रांस की क्रान्ति के प्रथम शताब्दी वर्ष (1889) में तिलक जी का 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' में प्रवेश एक युग परिवर्तनकारी घटना है। प्रारम्भ में, जैसा प्रायः होता है, वे उदारवादियों की 'प्रार्थना पत्र, स्मृति पत्र व प्रतिनिधिमण्डल' की कार्यविधि को परिवर्तित करने में सफल न हो सके, लेकिन वे आशावादी बने रहे और अन्ततः कांग्रेस में उग्रवाद के अग्रदूत और जीवन शक्ति के स्रोत बन गए।

देश प्रेम की लौ को सदैव प्रकाशमान रखने के लिए तिलक जी ने अपने उग्र विचारों को ध्वनि तरंगों की तरह यत्र-तत्र-सर्वत्र फैलाने के लिए प्रयास करने आरम्भ किए, महाराष्ट्र में उन्होंने इसी संदर्भ में गौहत्या विरोधी सोसाइटियाँ, अखाड़े और लाठी क्लब खोले, जिससे वहाँ के सभी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिन्दू अपना जीवन बलिदान करने हेतु पीछे न हटें। नवयुवकों में उत्साह व साहस बढ़ाने के लिए उन्होंने 'गणपति उत्सव' की शुरुआत की। प्रत्येक वर्ष यह उत्सव दुगुने उत्साह से मनाया गया और परिणामत: लाखों महाराष्ट्रवासी एक मंच पर एकत्रित हुए। एकता के सूत्र को और अधिक मजबूत करने के लिए उन्होंने 1895 में 'शिवाजी उत्सव' आरम्भ किया, जिसके आशानुकूल परिणाम निकले।

तिलक जी का उदारवादियों की 'राजनीतिक भिक्षा वृत्ति' की नीति में कदापि विश्वास नहीं था। उनका कहना था- 'हमारा आदर्श दया याचना नहीं, आत्मनिर्भरता है।' अंग्रेजों की न्यायप्रियता में भी उनका कोई विश्वास नहीं था। 'व्यापारियों का राष्ट्र (ब्रिटेन) केवल दबाव की भाषा ही समझता था। उग्रवादियों के साधन 'बहिष्कार, स्वदेशी व राष्ट्रीय शिक्षा' थे। तिलक जी का मानना था कि 'महान उद्देश्य (पूर्ण स्वराज्य)' की प्राप्ति के लिए, सभी साधन न्यायोचित हैं। यही कारण है कि उन्होंने शिवाजी द्वारा अफजल खाँ की हत्या (1659) को न्यायोचित ठहराया। संक्षेप में, उनकी नीति 'जैसे को तैसा' की थी। वे भारत में ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सुधार नहीं, बल्कि 'स्वशासन' चाहते थे। उनका हृदय सदैव 'स्वतंत्रता' के लिए धड़कता था तथा उसकी प्राप्ति के लिए अपने जीवन रक्त का बलिदान भी कर सकते थे, यही कारण है कि उन्हें 'भारतीय अशान्ति का जनक' कहा जाता है।

तिलक बाँस के वृक्ष की तरह नहीं थे कि जिस ओर हवा बहे, उधर ही झुक जाएँ। वे अपने उग्र विचारों पर दृढ़ थे, लेकिन इसकी कीमत उन्हें 1897 में चुकानी पड़ी, जब उन्हें 18 माह का कठोर कारावास मिला। तिलक त्याग की प्रतिमूर्ति थे, अत: उन्होंने विदेशी आधिपत्य के सामने आत्मसमर्पण नहीं किया और नए उत्साह के साथ अपने पथ पर बढ़ते गए। 'केसरी' में प्रकाशित कुछ लेखों के आधार पर उन्हें पुन: 1908 में 6 वर्ष का कारावास मिला। बर्मा में माण्डले की जेल का 20 गुणा 12 फीट का कमरा तिलकजी के आन्तरिक गुणों को उद्घाटित करने में काफी सफल रहा। 1914 तक के कारावास में ही उन्होंने 'गीता रहस्य' तथा 'दि आर्कटिक होम ऑफ दि वेदाज' जैसे ग्रन्थों की रचना की, जिनसे हमें उनकी विद्वता, ऐतिहासिक शोधवृत्ति तथा उत्कृष्ट विचारों का परिचय मिलता है। उनका 'दि ओरियन' नामक अन्वेषणात्मक ग्रन्थ तो सम्पूर्ण यूरोप में विद्वता की धाक जमाने में सफल रहा।

यह सत्य है कि तिलक की अनुपस्थिति में महाराष्ट्र में उग्रवादी आन्दोलन ठण्डा पड़ गया था, लेकिन जब वर्ष 1916 में लोकमान्य तिलक ने 'महाराष्ट्र होम रूल लीग' की स्थापना की, तो खोई हुई चेतना पुन: जाग उठी। छह माह बाद 1 सितम्बर, 1916 को आयरिश महिला एनी बीसेन्ट ने मद्रास में 'अखिल भारतीय होम रूल लीग' की स्थापना की। सम्पूर्ण भारत में इन दोनों प्रवर्तकों की प्रचार यात्राएं 'विजय यात्राओं' में परिवर्तित हो गई और देश के वातावरण में बिजली सी दौड़ गई। इसी समय तिलक जी का प्रभावशाली नारा गूँजा- 'स्वतंत्रता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा' तिलक जी का यह कहना था कि 'प्रगति स्वराज्य में निहित है। स्वराज्य के अभाव में न तो औद्योगिक प्रगति सम्भव है और न ही राष्ट्र के लिए उपयोगी शिक्षा व्यवस्था।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्राय: यह कहा जाता है कि तिलकजी ने समाज सुधार कार्यों का विरोध किया, लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत है। उन्होंने मात्र इतना कहा (जो तर्कसंगत भी है) कि 'वर्तमान परिस्थितियों में समाज सुधार से अधिक महत्वपूर्ण कार्य भारतीय स्वतंत्रता के लिए प्रयत्न करना है।' उनका विचार था कि समाज सुधार का कार्य जन चेतना के आधार पर किया जाना चाहिए, कानूनों के माध्यम से नहीं। 25 मार्च 1918 को बम्बई में दलित जाति सम्मेलन में तिलक ने कहा था, 'यदि ईश्वर भी अस्पृश्यता को सहन करे, तो मैं उसे ईश्वर के रूप में स्वीकार नहीं करूँगा।' सामाजिक समस्या के साथ-साथ उन्होंने आज की ज्वलन्त समस्या 'राष्ट्रभाषा' पर भी विचार प्रकट किए। तिलक यह सुझाव रखने वाले प्रथम कांग्रेसी नेता थे कि देवनागरी लिपि में लिखी हुई 'हिन्दी' भारत की राष्ट्रभाषा हो।

निष्कर्षत: लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक (1856-1920) की भारतीय जनता को सबसे बड़ी देन उनका 'अवज्ञा का दर्शन' है। इसी दृष्टि से उन्हें भारतीय चेतना का जनक कहा जाता है। भारत मंत्री मान्टेग्यू ने ठीक ही कहा था, 'भारत में केवल एक ही अकृत्रिम उग्र राष्ट्रवादी था और वह थे- तिलक।' वास्तव में देखा जाए, तो वे महात्मा गांधी के अग्रदूत थे। लगान न देने का आन्दोलन, सरकारी नौकरियों का बहिष्कार, शराबबन्दी तथा स्वदेशी जैसे आन्दोलन जो गांधीजी ने चलाए थे, तिलक पहले ही इन पर प्रयोग कर चुके थे। उनका जीवन दिव्य था, इसी कारण से देशवासियों ने उन्हें न केवल 'लोकमान्य' की उपाधि दी वरन् उन्हें 'तिलक भगवान' कह कर भी पुकारा। उनकी पुण्य तिथि (1 अगस्त) पर उन्हें सबसे बड़ी श्रद्धांजलि यही होगी कि हम सदैव साम्प्रदायिक सद्भाव तथा राष्ट्रीय एकता से प्रेरित उनके प्रेम को अपने हृदय में जीवित रखें।

जी-9, सूर्यपुरम, नन्दनपुरा,
झाँसी-284003 (उ.प्र.)
मो. 94150 55655

सूचना

'अक्षरा' पत्रिका की सदस्यता के लिए -
चेक, बैंक ड्राफ्ट या मनीआर्डर
'म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति-'अक्षरा'
हिन्दी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल -462002
के नाम ही भेजें।
अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें-
दूरभाष : 0755-2661087, 2660909

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आलेख

साहित्य वह धर्म है जिसका ईश्वर मनुष्य है

(वरिष्ठ साहित्यकार शंकर पुणताम्बेकर के साहित्य पर केन्द्रित)

-श्रीराम परिहार

भाषा में गद्य की चौपाल नहीं होती तो विचारों की व्यवस्थित प्रस्तुति क्या संभव होती? भाषा अपनी सुन्दर विचार-गुदड़ी गद्य में ही सिलती है। विचार का शिशु गद्य की गुदड़ी पर ही उन्मुक्त लेटता है। खेलता है। बड़ा होता है। गद्य में भी निबन्ध का प्राणतत्व विचार ही है। निबन्ध में बुद्धि भाव को साथ लेकर खोजी-भ्रमण पर निकलती है। अपनी यात्रा में निबन्ध ने देश-काल की शिलाओं पर खड़े होकर नाना रूप-स्वरूप धारण किये हैं। निबन्ध, ललित निबन्ध, व्यंग्य निबन्ध में भारतीय वाङमय का तत्व-चिन्तन मुस्कुरा रहा है।

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर साहित्य-जगत में व्यंग्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। व्यंग्य के अलावा उन्होंने गंभीर निबन्ध भी भारतीय साहित्य को दिया है। इन निबन्धों में उनका चिन्तक और विचारक रूप प्रकट हुआ है। वे बहुत गहरे पैठ कर विषय से परिचित होते हैं और उसे सहज भाषा-शैली द्वारा पाठक को भी परिचित कराते हैं। जीवन-जगत के बहुत सामान्य विषय वे निबन्ध लेखन के लिए उठाते हैं, लेकिन उनके चिन्तन से वे विषय विशिष्ट बन कर सामाजिक सरोकारों के व्यापक परिप्रेक्ष्य उद्घाटित करते चलते हैं। उनके निबन्धों के केन्द्र में सब कहीं मनुष्य है। मनुष्य की मनुष्यता का विस्तार और शिवत्व का प्रसार शेष सृष्टि के प्रति कितना और कैसा है, इसी की परख और निदेशन वे अपने तत्व-चिन्तनपरक निबन्धों में करते हैं। उनके चिन्तन की नवीनता और रसाग्रह का प्रमाण यह है कि वे विचार को भी रस की कोटि में लाकर अवस्थित करते हैं। वे कहते हैं-

''भाव-विचार निःसंदेह एक-दूसरे से भिन्न हैं, पर जहाँ तक रस का सम्बन्ध है, ये दोनों विपरीत जाति के नहीं, सखा वर्ग के हैं। काव्य शास्त्र रस की मीमांसा में स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव आदि की तो बात करता है, पर विचार और कल्पना के बाबत मौन है। रस में साधारणीकरण भाव का ही नहीं होता, विचार और कल्पना का भी होता है। यदि ऐसा न होता तो साहित्य में औचित्य-अनौचित्य की बात न उठती, जो कि विचार के अन्तर्गत आती है।''

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर के उपर्युक्त मत के सन्दर्भ में विनम्रतापूर्वक उल्लेख करना चाहेंगे कि भारती काव्य मीमांसक आचार्यों ने रस, साधारणीकरण और काव्यांगों पर बहुत व्यापक रूप में गहन चिन्तन किया है, जिसमें अनेक दर्शन और अनेक विषयों के तत्व चिन्तन का समावेश है। भामह, दण्डी, रुद्रट आदि अलंकारवादी आचार्यों , भरत मुनि के नाट्यशास्त्र, आनन्द वर्धन और अभिनव गुप्त के ध्वनि-चिन्तन, कुंतक के वक्रोक्ति चिन्तन के साथ-साथ मम्मट, क्षेमेन्द्र, पंडितराज

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जगन्नाथ आचार्य विश्वनाथ के चिन्तन-निष्कर्षों का समागम और समाहार रस के कुम्भ में किया गया है। दर्शन और तत्व-चिन्तन के अन्तस में विचार ही घनीभूत होता है।

काव्य शास्त्र पर अन्य दर्शनों के समान सांख्य के गुणश्रयवाद का प्रभाव पड़ा है और भट्टनायक की रस-मीमांसा में सत्व, रज और तम गुणों के अतिरिक्त भोक्ता और भोग्य इत्यादि के आधार पर रस भोग के सिद्धान्त का विकास किया गया है। 'भक्ति रसायन' में मधुसूदन सरस्वती ने भक्ति रस की सिद्धि सांख्य के आधार पर की है। रस मीमांसा पर वेदान्त का भी प्रभाव पड़ा है। उपनिषद् के ''रसौ वै स:'' का तो उदाहरण ही दिया जाता है। 'ध्वन्यालोक', 'काव्य प्रकाश' इत्यादि में व्यंजना वृत्ति की मीमांसा और स्थापना में वेदान्त की दृष्टि से भी विचार किया गया है। मधुसूदन सरस्वती ने वेदान्त की दृष्टि से भी भक्ति रस की स्थापना की है। अभिनव गुप्त की रस मीमांसा तथा रसदृष्टि रस-तत्व-चिन्तन की दिशा में सर्वोत्तम उपलब्धि मानी जाती है। इस रस दृष्टि पर शैव प्रत्यभिज्ञा दर्शन का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है।

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर का निबन्धकार सृष्टि-व्यापी तीन शाश्वत तत्वों पर अपने चिन्तन को केन्द्रित कर कुछ सानुकूल और नये निर्णय देता है। 'सत्य, शिव और सुन्दर' संभवत: उनके निबन्ध साहित्य का प्राण है। वे सारे क्रिया व्यापार और आचरण-उद्देश्यों की परख इन्हीं तीन की कसौटी पर करते हैं। सत्य को देखने, परखने और अनुभव करने की उनकी अपनी दृष्टि है। सत्य पर विचार प्रकट करते हुए वे अनेक सन्दर्भों के साथ धर्म, ज्ञान, कर्म, भक्ति, शौर्य, शक्ति की भी चर्चा करते हुए तुलनात्मक प्रक्रिया द्वारा सत्य की सत्ता की महत्ता सिद्ध करते हैं। सत्य की शाश्वत स्थिति के साथ वे उसे देश-काल के अनुसार अलग-अलग लघु-विशाल, अस्थायी-स्थायी, पर-अपर स्वरूप में भी व्याख्या देते हैं-'निरा सत्य सत्य हो, पर जीवन से जुड़ा नहीं है, तो वह शून्य है। फल देने वाला पेड़, प्रकाश देने वाला सूरज, पानी देने वाला बादल हमारे लिए तभी सत्य हैं, तब पेड़ हवा और छाया देता हो, सूरज ऊर्जा और दृष्टि देता हो और बादल खेत और कुओं को जीवन देता हो।'

स्पष्ट है डॉ. शंकर पुणताम्बेकर एक तो वस्तु केन्द्रित सत्य को सत्य का लौकिक रूप स्वीकारते हुए उसकी उपयोगिता शेष सृष्टि से जोड़ते हैं। उनका चिन्तन जगत के बुनियादी सवालों को लेकर सत्य की माप-तौल या महत्ता स्वीकार करता है। जबकि सत्य की परिधि क्षितिजों और उनसे भी पार तक है। इस पर काफी विमर्श की गुंजाइश है।

शिव की वे महत्ता उपयोगितावाद और सृष्टि कल्याण में ढूंढते हैं। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और सृष्टि के क्रिया-व्यापारों के उद्देश्यों में यदि 'शिव' तत्व उपस्थित नहीं हैं, तो वह निरर्थक श्रम है। एक निरूद्देश्य यात्रा है। डॉ. शंकर पुणताम्बेकर का 'शिवत्व' चिन्तन भौतिक जगत की गति और उपभोक्तावादी प्रवृत्ति पर व्यंग्य भी करता है और चिन्ता भी करता है। वे उन सारे उदात्त मानवीय गुणों को 'शिव' के अन्तर्गत मानते हैं, जिनसे मानवता विस्तारित और कल्याणक होती है-

''शिव जितना सामाजिक है, उतना सत्य और सुन्दर नहीं। सत्य तो साधु भी बन जाता है-समाज से अलग अथवा कमल की प्रकृति को प्राप्त हो जाता है-समाज में रह कर भी समाज से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अलिप्त। सुन्दर अहं के कारण अपने में ही इतना लिप्त कि समाज से आप ही टूट जाता है। पृथकता उसमें पृथकता पैदा कर देती है। एक बात कहूँ मैंने सत्य को जाना, सुन्दर को भी जाना किन्तु शिव को नहीं जाना तो कुछ नहीं जाना। मैंने शिव को जाना, किन्तु सत्य को नहीं जाना, सुन्दर को भी नहीं तथापि मैंने सब कुछ जाना। शिव केन्द्र में है। यही सत्य है और इस सत्य पर आचरण सुन्दर। कौन सा मानवीय गुण है जो शिव के अंतर्गत नहीं आता। करूणा, अहिंसा, प्रेम, दान, नेकी, सेवा जैसी सभी बातें इसमें समाविष्ट हैं। तभी तो शिव शुभ है।''

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर सत्य और शिव का चिन्तन करते हुए सौन्दर्य को अपने ढंग से परिभाषित करते हैं। सौन्दर्य के मनन में वे अनुभूति तक की यात्रा करते हैं और मार्ग में प्रकृति, ईश्वर, कला , राधा-कृष्ण, शक्ति, नारी-सौन्दर्य की ऋजुता और तरलता से संवाद भी करते चलते हैं। अन्तत: वे सौन्दर्य के सत्य को रूप में न पाकर कर्म के कल्याणक स्वरूप में पाते हैं। मानवीय गुणों और प्रतिभा की कल्याणक और उपकारक वनस्थली में देखते हैं। प्रकृति-सौन्दर्य, ईश्वर, कला, मानव अनुभूति और आनन्द की सहजावस्था में वे सौन्दर्य की सार्थकता खोजते हुए कहते हैं-

''प्रकृति के मोर या इन्द्रधनुष का सौन्दर्य केवल चमत्कार का आनन्द नहीं देता, वह मानस में अनोखी थिरकन भी पैदा करता है। बादलों में क्षण-दो-क्षण चमक जाने वाली विद्युत रेखा-सी। प्रकृति के इस सौन्दर्य के साथ उसके और सौन्दर्य जुड़ गये-उषा का, संध्या का, सावन का, वसंत का, नदी का, सागर का, वृक्षों का। यह अनोखी थिरकन एक ओर जहाँ धर्म में रूपायित हुई ईश्वर में, वहाँ दूसरी ओर कला में ध्वनित हुई-कविता, संगीत, नृत्य में। ईश्वर हो या कला दोनों का जनक इस तरह सौन्दर्य है। तभी तो ईश्वर सुन्दर है, कला सुन्दर है। ... इस तरह ईश्वर और कला का सौन्दर्य उस सत्य से भिन्न नहीं है, जिसकी खोज की बातें ये करते हैं। इस अर्थ में सौन्दर्य ही सत्य है और सत्य ही सौन्दर्य।''

'रसौ वै स:' की व्याख्या में कल्पना और विचार को समेट कर अपने ढंग से स्वयं की खोज में डॉ. शंकर पुणताम्बेकर अपने आत्म तत्व को जानने-समझने की आकुल-आकांक्षा करते हैं। सत्य, शिव, सुन्दर में वे कर्म के प्रसाद की मिठास अनुभव करते हुए आनन्द की स्थिति की ओर संकेत करते हैं। यह आनन्द उनके विरागी या संन्यासी चिन्तक का नहीं है, बल्कि जीवन के झंझावतों में अटूट बने रह कर विषमताओं पर विजय पाने वाले कर्मण्यवादी जन का है। उनके चिन्तन की रवि रश्मियाँ ईश्वर, धर्म, कला, संस्कृति और साहित्य की हरित दूर्वाच्छादित भूमि को आलोकित करती हैं। साहित्य, साहित्यिक कर्म और मानव की विकास यात्रा में मानव हित, जीवमात्र हित और सृष्टि हित का भान रखते हुए साहित्य की अवधारणा और उद्‌देश्य को रेखांकित करते हैं। साहित्य पर चिन्तन करते हुए वे मूल्यों की महत्ता, उनकी अक्षुण्ण उपयोगिता और धर्म पर स्पष्ट टिप्पणी करते हैं। वे साहित्य के सत्य और उसकी मौलिकता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं-

''मेरी समझ में साहित्य जीवन राग है शब्दांकित। साहित्य में चार तत्व बताये जाते हैं- भाव तत्व, विचार तत्व, कल्पना तत्व और शैली तत्व। प्रकृति में भाव तत्व, समाज में विचार तत्व,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गतिविधि में शैली तत्व, गतिविधि में ही कल्पना तत्व है। कल्पना आदमी ही करता है, समाज नहीं। कहें कि कल्पना आदमी की गतिविधि की ही प्रतिक्रिया है। जिसमें प्रतिभा होती है, वह समाज से उद्‌भूत अपने सुख-दुख को अनुभूति को कल्पना के बल पर और प्रकृति के सहयोग से रागात्मक बनाता है। ऐसी रागात्मक कि वह अनुभूति आदमी की न रह कर समाज की बन जाती है, सामाजिक। यही अनुभूति शब्दांकित होकर साहित्य बनती है।''

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर निबन्धों में जिन विषय-शीर्षकों पर चिन्तन करते हैं, उनके दोनों पक्षों श्वेत-श्याम पर या विषय की सम्पूर्णता को दृष्टिगत रखते हैं। ऐसा चिन्तन ही समग्र चिन्तन है। ठोस और उपयोगी है। व्यक्ति के पास विवेक है। चाणक्य कहते हैं-'बुद्धि, मनुष्य को दिया गया ईश्वर का अनुपम वरदान है। उसका उपयोग होना चाहिए।' पुणताम्बेकर अपने निबन्ध 'बुद्धिजीवी' में मनुष्य के बौद्धिक विकास और उसके कार्य सम्पादन के सुपरिणाम-कुपरिणाम दोनों पर विचार करते हैं। वे बातचीत की शैली में से तत्व और तथ्य निकाल कर चमत्कृत करते हैं। वे बुद्धि का सम्बन्ध भावानुभूति से बड़ी कुशलता से जोड़ते हुए क्रम प्रस्तुत करते हैं-''सूक्ष्म से अतिसूक्ष्म की ओर जाने वाली बुद्धि क्रमशः तमस का त्याग करती हुई, फिर रजस का त्याग हुई सत को प्राप्त होती है। सत का चरम बिन्दु ही ईश्वर है। ईश्वर जिसे क ख ग की भाँति कोई नाम हम देते हैं। इस सत को चाँदनी जैसी स्निग्ध-शीतल भावानुभूति में से ही संसार के साहित्य-कला-संस्कृति का निर्माण हुआ है। इसी में से तत्वज्ञ, चिन्तक और सन्त पैदा हुए हैं।''

वे बुद्धि की चतुराई, उसके अतिरेक से उपजा भौतिक विकास और समाज से असंपृक्त ईश्वर को अस्वीकार करते हुए स्पष्ट कहते हैं तथा बुद्धि के पतन की ओर संकेत करते हैं-''समाज से असंपृक्त ईश्वर मिथ्या है... सत नहीं मिथ्या बुद्धि की उपज किन्तु साथ ही वह ईश्वर जो पूरी तरह समाज में डूब गया है, वह भी मिथ्या ईश्वर है। यह ईश्वर प्रायः आश्रमों में बसता है। आश्रम का ईश्वर बुद्धिभ्रम उत्पन्न करने में निष्णात होता है। कहें कि बुद्धिभ्रम कौशल ही उसकी पूँजी होती है। कला-साहित्य-संस्कृति भी समाज में डूबे नहीं कि बुद्धिभ्रम पैदा करते लगते हैं। वाद इनमें प्रमुख है। जो मंच पर ज्यादा उछलता है। वाद भौतिक विकास के प्रदूषणों पर प्रहार जरूर करता है पर प्रदूषणों के कारणों की छत्रछाया में। यहाँ बुद्धि का बड़ा प्रतिष्ठित पतन दिख पड़ता है।''

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर अपने चिन्तन केन्द्र में समाज और इतिहास जैसे मानव सभ्यता-संस्कृति को प्रभावित करने वाले विषयों को लाते हैं। समाज को वे मनुष्यों का जंगल मानते हैं। अखबार की तरह ही उनकी दृष्टि में समाज भी एक प्रतिष्ठान है, जिसके धनपति, सत्तासीन और धर्मगुरू तीन संचालक हैं। वे समाज को अलग-अलग अनेक रूपकों से विश्लेषित करते हैं। वे समाज और इतिहास दोनों को मूल्य के साथ ही सार्थक समझते हैं। मूल्यहीन इतिहास अनुपयोगी है। ''इतिहास ऐसी नाव है जो हल्के को डुबो देती है और भारी-से-भारी को पार ले जाती है।''

वे प्रतीक्षा, विकास, ईर्ष्या जैसे अमूर्त विषयों के माध्यम से जीवन के वैविध्य और संघर्ष के बीच उसके विजय गौरव को रेखांकित करते हैं। मूल्य उनके मत में आवश्यक और सर्वोपरि है। वे प्रत्येक विषय और मानवीय क्रिया का पर्यावसान नैतिकता और शिवत्व में ढूँढते हैं। छोटी-छोटी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घटनाओं को निबन्धों का भाग बनाते हुए विषय को खोलते चलते हैं और अन्त में पाठक को मूल्यों की गठरी रक्षार्थ सौंप देते हैं। वर्तमान विकास को लेकर वे व्याकुल हैं। प्रश्नाकुल होकर कहते हैं- ''मेरा ख्याल है क्या विकास ने ईश्वर का निषेध कर समाज के शील, शक्ति, सौन्दर्य को बिखेर कर नहीं रख दिया? यह सवाल इसलिए प्रश्न शिरोमणि है कि शील, शक्ति, सौन्दर्य समाज की आत्मा है।''

डॉ. शंकर पुणतात्बेकर युद्ध और शांति जैसे विश्वचेता विषयों पर भी मनन करते हैं। युद्ध और शांति के पारस्परिक कारकों पर गहरे विमर्श में जाते हैं। यहाँ वैसा विमर्श और मंथन नहीं, जैसा दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' में या धर्मवीर भारती ने 'अन्धायुग' में प्रस्तुत किया है। यहाँ इतिहास नहीं, जीवन के ठोस वर्तमान की घटनाओं से युद्ध और शांति के जीवन संदर्भित प्रश्नों के छोटे-छोटे उत्तर पाने की कोशिश की गयी है। वे युद्ध का शिव परोपकार और राष्ट्रभक्ति में पाते हैं और युद्ध का सौन्दर्य दूसरों की रक्षार्थ किये गये संघर्ष में। ''युद्ध के मंदिर नहीं होते, शांति के होते हैं जो बगीचे, कलागृह, वाचनालय आदि में देखे जाते हैं। शांति के सच्चे उपासक के रूप में संत, चिन्तक, कला साधक, पत्रकार विशेष आदर के पात्र हैं।''

ये निबन्ध १९९८-९९ में लिखे गये, जो विभिन्न पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हुए इन निबन्धों में शैलीगत नया रूप है। ये निबन्ध उपदेश नहीं देते, संवाद करते हैं। बातचीत की शैली, पात्रों की उपस्थिति, घटनाओं की चौपाल और मानवीय क्रियाओं का प्रकटीकरण इन निबन्धों को शैलीगत वैशिष्ट्य प्रदान करता है, कुछ-कुछ वैसा ही, जैसा मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' का है। ये निबन्ध पाठक की उँगली पकड़ कर घटनाओं के माध्यम से विषय की सैर कराते हैं और विषय-सत्य को पाने की क्षमता पैदा कर देने की ऊर्जा प्रदान करते हैं। ये जगत की तृष्णा में से जीवन-सत्य को पाने हेतु शब्द की यात्रा पर निकले हैं-भाव और विचार दोनों को संग साथ लेकर।

आजाद नगर,

खण्डवा-४५०००१ (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संस्मरण

(न्यायाधीश की डायरी से)

वयोवृद्ध चाचा

-न्यायमूर्ति देवदत्त माधव धर्माधिकारी

हमारे चाचा को बाल्यावस्था में ही उनके चाचा ने दत्तक लेने की औपचारिकता का पालन कर गोद लिया था। गोद लेने के पीछे यह इच्छा थी कि उनके चाचा जो बनारस में संस्कृत तथा वेदों का अध्ययन करने के बाद ब्रह्म-सूत्र पर मराठी में भाष्य लिखना चाहते थे, उसमें उन्हें नयी पीढ़ी की सहायता प्राप्त हो। अपने चाचा द्वारा गोद लिये जाने के पश्चात मेरे चाचा का एक कट्टर हिन्दू सनातनी संस्कारों में लालन-पालन हुआ और जीवन भर उनकी वैसी कठोर दिनचर्या रही। किशोर अवस्था में सुबह ४ बजे उठना, स्नान आदि के पश्चात पूजा के लिए फूल एकत्रित करना, उसके पश्चात रसोई के लिए निवास से दूरस्थ स्थान से लकड़ी काट कर लाना फिर गायों को दुहना और अपने पिता के पूजन के लिए पूजा सामग्री रख कर उनकी सम्पूर्ण व्यवस्था करना। उसके पश्चात करीब २ घंटे विभिन्न स्त्रोतों के उच्चारण और आरती के पश्चात कुछ फल ग्रहण करना, उसके बाद साइकिल से करीब २० किलोमीटर दूर अपने कृषि ग्राम जाना, वहां पर कार्यरत् कृषकों को बीज खाद आदि की व्यवस्था करना और वहां एक-दो घंटा कृषि कार्य की निगरानी करना। करीब एक डेढ़ बजे लौट कर भोजन करना। उसके बाद मात्र एक घंटे विश्राम और शाम को ४ बजे से शाम ६ बजे तक उनके पिता द्वारा ब्रह्म सूत्र पर अध्ययन तथा उसके भाष्य पर डिक्टेशन (श्रुति लेख) लेना और उसे लिखना। ऐसी कठिन परिश्रम की प्रक्रिया उनकी ९ वर्ष आयु से ६० वर्ष आयु तक चली। चौदह वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद ब्रह्मसूत्र भाष्य लिखना पूर्ण हुआ। उनके पिता के देहावसान के बाद उन्होंने अपनी दिनचर्या में मात्र बढ़ती उम्र के अनुसार कुछ ही फर्क किया। यानी कृषि का कार्य अपने रिश्तेदारों के जिम्मे कर दिया और शारीरिक श्रम भी कुछ कम कर दिया, परन्तु पूजा आदि का नित्य क्रम तथा पंचांग के अनुसार व्रत वैकल्य, उपवास तथा महाभारत तथा गीता का पाठ तथा प्रति वर्ष कृष्ण नवरात्र करते रहे। ६१-६२ वर्ष की आयु में उन्हें कई प्रकार की विपदाओं को झेलना पड़ा। जैसे सबसे बड़े पुत्र की कैंसर से मृत्यु। पुत्रियों के परिवार में विवाह संबंधी अड़चनें तथा आर्थिक विषमताएं। इन सभी विपदाओं को उन्होंने स्थितप्रज्ञ के समान बिना किसी शिकायत के झेला। कभी भी उनके गम्भीर और संयत व्यवहार में कोई फर्क नजर नहीं आया।

मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय में न्यायाधीश पद पर आसीन होने के २-३ वर्ष पश्चात ही मुझे न्यायालय के पूर्ण पीठ के सदस्य के रूप में एक प्रकरण में निर्णय देने का अवसर आया।

अयोध्या में राम मंदिर के निर्माण के आन्दोलन में बाबरी मस्जिद ढहा दी गई। उसके पश्चात उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश जहां भाजपा शासित सरकारें थीं, वहां केन्द्रीय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सरकार द्वारा राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। राष्ट्रपति के उस आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में चुनौती याचिका तत्कालीन भारतीय जनता पार्टी के मुख्यमंत्री श्री सुंदरलाल पटवा द्वारा प्रस्तुत की गई। इस प्रकरण की पूर्ण पीठ में तत्कालीन मुख्य न्यायाधिपति न्यायमूर्ति श्री एस.के.झा के साथ मैं भी सदस्य था और निर्णय देने में मेरा ९० प्रतिशत सहयोग रहा। हमारी पूर्ण पीठ ने राष्ट्रपति शासन लागू करने के आदेश को इस आधार पर रद्द किया कि उत्तर प्रदेश के अयोध्या में जन आन्दोलन में हुई घटना के लिए सीधे तौर पर मध्य प्रदेश सरकार दोषी या उत्तरदायी नहीं कही जा सकती। मध्य प्रदेश में ऐसी कोई भी परिस्थितियाँ उत्पन्न नहीं हुई थीं जिससे कहा जा सके कि प्रदेश में कानून और व्यवस्था इस तरह ध्वस्त हो गई है कि चुनी हुई सरकार को हटा कर शासन राष्ट्रपति द्वारा किया जाना अत्यावश्यक हो।

इस पूर्ण पीठ का वह ऐतिहासिक निर्णय पूरे भारत के समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ। हमारे चाचा पूजन आदि से निवृत्त होने के पश्चात कुछ देर समाचार पत्र पढ़ते थे हमारे निर्णय के संबंध में उन्होंने समाचार पढ़ा। यद्यपि उन्हें राजनीति में अल्प रुचि थी और न्यायालयीन संबंधी खबरों के बारे में भी वे विशेष रुचि नहीं रखते थे फिर भी उस निर्णय के समाचार के बाद उन्होंने मेरी प्रशंसा में मुझे एक पत्र में लिखा : ''आज मुझे और समस्त परिवार को तुम्हारे निर्णय पर अत्यन्त गर्व हो रहा है। इस समय तुम्हारे पिताजी जीवित होते, तो उनका सीना गर्व से फूल जाता। तुमने निर्णय देने में जो साहस दिखाया है वह तो पेशवा राज्यकालीन न्यायाधीश राम शास्त्री प्रभुणे की न्याय दृढ़ता की याद दिलाता है। यदि देश का राजा या पालक ही कानून विरोधी काम करे तो न्यायाधीश का कर्त्तव्य हो जाता है वह शासक से भी कहे कि तुम गलती पर हो।''

उनके इस प्रशंसा पत्र मिलने के बाद मुझे लगा कि भले ही न्यायाधीश पद पर रहते मुझे कोई पदक या सम्मान भी मिलता तो वह एक कट्टर सनातनी हिन्दू परन्तु अत्यन्त धार्मिक और सात्विक व्यक्ति (मेरे चाचा) द्वारा दिये गये प्रशंसा पत्र के सामने उसका मूल्य कम ही होता।

जब उनके स्व. ज्येष्ठ पुत्र के बच्चों के उपनयन संस्कार के समारोह के लिए उन्हें आमंत्रित किया गया तब वृद्धावस्था के कारण अपनी अनुपस्थिति के लिए उन्होंने पत्र लिख कर परिवार से क्षमा मांगी, और अपने आशीर्वचन लिख भेजे:-

''आधुनिक हिन्दू समाज में उपनयन संस्कार को कोई भी महत्व नहीं दिया जाता परन्तु मुझे खुशी है कि परिवार ने उपनयन संस्कार आयोजित किया है।''

हमारी हिन्दू जीवन पद्धति में उपनयन संस्कार का बहुत महत्व है क्योंकि वह हमारी चातुर्वर्ण व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। जीवन के प्रथम २५ वर्ष प्रत्येक पुरुष को ब्रह्मचर्य यानी यौन संबंधों से दूर रह कर केवल विद्याअर्जन तथा गुरु की सेवा करनी होती है। उसके बाद के २५ वर्ष में गृहस्थ जीवन स्वीकार किया जा सकता है जिस अवधि में उसे अपनी पत्नी, बाल-बच्चों तथा माता-पिता के प्रति उत्तरदायित्व निभाना होता है। उसके बाद के २५ वर्ष वानप्रस्थ आश्रम में अपना ज्ञान और सेवाएं समाज के लिए समर्पित करने के बाद २५ वर्ष संन्यास आश्रम में शरीर शक्ति के अनुसार जो कुछ भी संभव हो वह अनिवार्य सेवा परिवार के प्रति तथा समाज के प्रति देनी होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ऐसा स्थितप्रज्ञ जीवन जीने के बाद चाचाजी ने आयु के १०० वर्ष पूर्ण कर लिये और जब इस प्रसंग पर उनके जन्म की स्वर्ण जयंती का आयोजन करना परिवार ने तय किया तब उनका आग्रह था कि मात्र भोज और उन्हें उपहार देने के बजाए इस अवसर पर उनकी ओर से ईश्वर से आराधना की जाए तथा प्रसंगानुकूल जप जाप करें। परिवार ने उनकी इच्छा अनुसार ही धार्मिक कार्यक्रम किया उनके प्रति आदर के कारण बड़ी संख्या में परिवार के सदस्य इस अवसर पर एकत्रित हुए और शाल और श्रीफल देकर उनका सम्मान किया गया। उनके सम्मान में उनकी जीवन यात्रा पर कुछ प्रशंसा के शब्द भी व्यक्त किये गये। १०० वर्ष की आयु में भी उनका दो किलोमीटर टहलने जाना, जमीन पर बैठ कर एक बार ही भोजन करना, रोज सुबह ५ बजे सूर्य नमस्कार करना अनवरत चल रहा है। १०० वर्ष की जीवन यात्रा में बहुत कम वे बीमार पड़े और गम्भीर रूप से एक ही बार ९८ वर्ष की आयु में उनकी अन्न नलिका में अवरोध उत्पन्न हो गया था और वह भी मात्र बढ़ती आयु के कारण ही। तब सर्जन ने उनसे कहा कि आपरेशन के बगैर यह ठीक नहीं हो सकता और उनकी आयु में यदि आपरेशन किया जाए तो उसमें भी खतरा है। उन्होंने दृढ़ता से कहा कि दोनों ओर खतरा है तब आपरेशन का खतरा उठाने में कोई हर्ज नहीं है। उस आयु में भी उनका सफल आपरेशन कर अन्न नलिका पूर्ववत् कर दी गई और उसके पश्चात वे १०४ वर्ष के होकर आज भी जीवित हैं। उनके सम्मान में आयोजित स्वर्ण महोत्सव के अवसर पर परिवार के सदस्यों ने उनके प्रति आदर व्यक्ति किया, तब उनसे पूछा गया कि क्या वे कुछ उत्तर देना चाहेंगे। यद्यपि बढ़ती आयु के अनुसार उनकी आवाज क्षीण हो गई थी फिर भी उन्होंने कहा कि मैं जरूर कुछ कहना चाहूँगा। फिर उनसे प्रश्न पूछा गया कि इतनी लम्बी आयु का क्या राज है वे जरूर बताएं। तब उन्होंने कहा मेरे गुरु मुझसे कह गये थे कि गीता प्रणीत निर्धारित जीवन के व्यवहार यदि शरीर दुर्बलता के कारण संभव न भी हो सके तो भी उस आयु में अपने सिद्धांतों पर दृढ़ रहना चाहिए। इसके लिए उन्होंने एक शब्द का उपयोग किया कि शरीर जीर्ण होने पर तत्वनिष्ठ हो जाएं।

एक आध्यात्मिक व्यक्ति का यह उत्तर पूर्ण अर्थ में सभी लोग समझ नहीं पाये, परन्तु अपनी जीवनशैली से उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि एक कट्टर सनातनी हिन्दू आध्यात्मिक आचार-विचारों का पालन कर एक सफल, सुखमय व दीर्घ स्वस्थ जीवन हासिल कर सकता है।

"बकुल" ११६९, राइट टाउन
आस्था मेडिकल के पास
जबलपुर-४८२००२ (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साक्षात्कार

वरिष्ठ रचनाकार सूर्यबाला से डॉ. पद्मजा शर्मा की साहित्य और उनके जीवन से जुड़े अनेक पहलुओं जैसे- लेखन की प्रेरणा, लेखन का उद्देश्य, रचना प्रक्रिया, समकालीन महिला लेखन का परिदृश्य, स्त्री विमर्श, व्यंग विधा , जीवन और समाज को लेकर सोच की दिशा, साहित्य और बाजार सहित अन्य अनेक साहित्यिक विषयों पर हुई बातचीत प्रस्तुत है। -संपादक

जब कुछ अच्छा रच जाता है तो कलम जैसे चारों धाम कर चुकी होती है

पद्मजा शर्मा - *ऐसा क्या हुआ कि आपका बचपन प्यार और अभाव में एक साथ बीता? बचपन की कुछ खट्टी-मीठी यादें। ऐसी कोई घटना जिसे आज तक भुला न पाई हों?*

सूर्यबाला - मैं छठी में थी पद्मजा ! जब बसंत पंचमी की रात मेरे पिता नहीं रहे थे। पिता के रहते, हम चार छोटी-बड़ी बहनों और नन्हें से भाई वाला सुरुचि-संपन्न और मोहबंधों से जुड़ा मध्यवर्गी परिवार था। मां-पिता की आपसी नोक-झोंक और हास-परिहासों पर हम बच्चियां जी खोल कर हंसतीं... बुलंद शख्सियत वाले पिता, शौकिया शेरो-शायरी करते, बांसुरी, हारमोनियम बजाते; हमारे आंगन में फौव्वारे, सुनहरी मछलियां और ललमुनियां होतीं। ऐसे पिता का अचानक चले जाना, हमारे लिये कितना अकेलापन और अभाव छोड़ गया होगा, सोच सकती हो, खासकर तब, जब हमारी आर्थिक जरूरतों का भार उठा सकने वाला चाचा, मामा जैसा कोई सगा संबंधी भी न रहा हो...

तो बस बमुश्किल चालीस-बयालीस की मां और उनके पांच बच्चों का बरसों बरस, दशकों दशक तक कैसे निर्वाह हुआ होगा, वह भी बिना किसी स्थायी आय के, अंदाज लगा सकती हो... हमारा पालन-पोषण, सारी सुख (?) सुविधाओं का ध्यान, ऊंची होती कक्षाओं की पढ़ाई, चारों बहनों के विवाह... मां की जीवन आहुतियों की मैं कल्पना नहीं कर सकती। मकान टैक्स, बिजली का बिल, समय बीतने के साथ मकान में होती टूट-फूट ,मरम्मत... सब कुछ मां के हवाले। हम भूखे कभी नहीं रहे, फटे-चटे कपड़े भी हमने नहीं पहने... पर हमारी सफेद पोशी की, समाज में सम्मानित बने रहने की जो कीमत मां ने चुकायी थी, वह मैं कभी नहीं भूलूंगी। हां अभावों ने हमें और ज्यादा एक-दूसरे से जोड़ दिया था। जैसे एक अनुबंध था हमारे बीच, अपनी तकलीफों की बात न कर, एक-दूसरे को हंसाते-बहलाते रहने का। हम सब साथ में जी भर हंसते, अकेले में रोते थे।

यादों की पिटारी तो हमेशा ही खुली रहती है... दसवीं में पहली बार द्वितीय श्रेणी मिली। छात्रवृत्ति रुक गई। यानी मां पर अब मेरी भी फीस का बोझ.. मन-मन सोचा, ग्यारहवीं में संगीत (सितार) ले लूं तो प्रथम श्रेणी लाने में आसानी रहेगी। मां से कहा, (प्रथम श्रेणी वाली बात नहीं,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सिर्फ 'सितार' वाली) तुरंत मान गई। मां ने यूं भी मेरी किसी बात पर कभी शक किया ही नहीं था। दो सप्ताह बाद चमकीले तारों वाला सितार मेरे हाथों में था और उसके महीनों बाद अचानक ध्यान गया - मां के गले में चेन नहीं थी। उनका अंतिम आभूषण। चेन क्या वापस ला पाती। हां, प्रथम श्रेणी आ गई। मेरिट की छात्रवृत्ति भी मिली पर मां का गला अंत तक सूना ही रहा।

जब कभी साइकिल के कैरियर पर, बादामी नोटिसों वाला बंडल बांधे, मकान टैक्स वाला नीचे से आवाज देता, मेरा दिल बैठ जाता। मां कहां से देंगी पैसे! ... ऐसे कितने ही क्षण मेरे अंदर फ्रीज है। इन्हीं में एक दिन जब किसी म्युनिसपैलिटी की नोटिस वाले की आवाज पर मां और मैं भी, अपने घर की दूसरी मंजिल की बालकनी पर आये, तब सफेद क्रोशिये के लेस सी मुंडेरों वाले हमारे मकान की खूबसूरती से चमत्कृत, वह पूछा बैठा था -

'यह-यह निजी मकान है आपका मांजी?

मैं क्षण भर को गर्वोन्त हुई ही थी कि मां को कहते सुना -

-'निजी क्या है बेटा, यहां किसी का! न आदमी न चीज...

बहुत सी खट्टी-मीठी यादें भी हैं... यूं भी घर हो या बाहर, शायद ही कभी किसी ने हमें उदास, मुंह बनाये देखा हो। जी भर कर हंसते-हंसाते, एक-दूसरे को चिढ़ाते, कविता-कहानियां, अंताक्षरी, फिल्मी गानों, कविताओं की पैरोडी, स्कूल में होने वाले नाटकों, नृत्यों के रिहर्सल... और पर्व-त्यौहार भी... उत्सव प्रेमी परिवार था हमारा।...

पद्मजा शर्मा - *लेखन, बाहरी वातावरण से सम्भव हो सकता है या इसके बीज आपके भीतर छिपे होते हैं?*

सूर्यबाला - रचनात्मकता का बीज बेशक अंदर होता है, लेकिन खाद-पानी तो बाहर की ही पड़नी है। कलम की सही निराई-गुड़ाई जीवन भर चलती रहती है। एक बात और, एक तरफ तो, बीज बहुत उपजाऊ हुआ तो बंजर में भी कुछ न कुछ उगायेगा... लेकिन दूसरी तरफ निचाट बंजर में उत्कट प्रतिभा का बीज भी सूख कर नष्ट ही होना है।

पद्मजा शर्मा - *क्या रचनाकार अपनी प्रिय रचनाओं को छांट सकता है? हां, तो किस आधार पर? आपकी पसंद?*

सूर्यबाला - छांटना कठिन नहीं, सर्वोत्तम का चुनाव अवश्य मुश्किल होता है। जिस कहानी की स्थिति, चरित्र, अनुभूति ने हमें अंदर तक जितना ज्यादा मथा होता है, वह हमारे उतनी ज्यादा करीब होती है। रचते-रचते जब कुछ गहरा, बारीक रच जाता है तो कलम जैसे चारों धाम कर चुकी होती है। मुझसे पूछोगी तो कहानियों में 'बिन रोयी लड़की', 'सजायाफ्ता', 'बाऊजी और बंदर', 'होगी जय पुरुषोत्तम नवीन', 'दादी और रिमोट', 'माय नेम इश ताता', 'न किन्नी न' आदि और उपन्यासों में 'यामिनी-कथा', 'मेरे संधिपत्र' ...

पद्मजा शर्मा - *आप कहीं कहती हैं कि लेखन शुद्ध रूप से हमारे सुख और स्वार्थ से जुड़ा होता है, वो कैसे? जब आप लेखन में जन का हित होना निहित मानती हैं तब फिर यह स्वार्थ कैसा। थोड़ा समझाएं?*

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सूर्यबाला - यह इस तरह कि सचमुच तटस्थ भाव से देखा जाये तो रच कर, लिख कर हम जो आत्मिक-तृप्ति या सुख पाते हैं, जितना श्रम करते हैं, समय लगाते हैं, वह प्रकारांतर से अपने ही सुखार्थ, अपने ही हितार्थ तो ...

और सबसे बढ़ कर, रचनाकार की प्रसिद्धि और महानता से उसके परिवार को क्या मिलता है? लेखन नहीं बल्कि लेखन से जुड़ी ख्याति और चर्चा का अतिरेकी लोभ उसे अपने दायित्वों और कर्त्तव्यों से विमुख करता है। मैं तो 'वैराग्य' को भी काफी कुछ 'स्वार्थ' और 'पलायन' के खाते में डालती हूं। यदि हमने कुटुंब बनाया है तो हमारी पहली जिम्मेदारी, हमारे आश्रित हैं।

मेरी समझ से इतना सारा धुआंधार लिखते चले जाने का, लेखकीय महत्वाकांक्षा की अति का, कोई मतलब नहीं। ये कल-कारखाने की तर्ज पर चलता धुआंधारी लेखन मुझे सहमाता है। प्रतिस्पर्धा के चरम पर पहुंची आपाधापियां और पुरस्कारों की घमासान, लेखन का बहुत बड़ा नुकसान कर रहे हैं। मैं बिल्कुल नहीं मानती कि अच्छा लेखन, प्रतिस्पर्धा से उपजता है। तुलसीदास के सामने कोई प्रतिस्पर्धा नहीं थी और आज तक 'रामचरित मानस' से ज्यादा उत्कृष्ट कृति, विश्व साहित्य में दुर्लभ है।

मेरे कहने का आशय सिर्फ इतना है कि लेखन बहुत समय और समर्पण मांगता है, उसके लिये क्वालिटी तक तो ठीक है लेकिन उसे क्वांटिटी-केंद्रित करेंगे तो हमारे दूसरे रिश्ते और कर्त्तव्य उपेक्षित होंगे। मेरी समझ से 'महान लेखक' बनने से ज्यादा जरूरी एक सही और संवेदनशील मनुष्य बने रहना है।

आज का लेखक उलटबांसियों में जीता है। लेखन में अपनी गहरी संवेदना का ढोल पीटने वाला रचनाकार यदि अपने जीवन में स्वार्थी और खुदगर्ज साबित होता है तो वह सामान्य व्यक्ति से भी ज्यादा असंवेदनशील और गया-गुजरा ही हुआ न!

मुझे मालूम है, 'लेखन' में समझौते नहीं चलते, तो विकल्प एक ही बचता है, जीवन और लेखन के बीच अपनी प्राथमिकता तय की जाये - अति महत्वाकांक्षा रचनाकार को मनुष्यता विहीन करती है। (यह मेरी नितांत अपनी बात है, आप पूरी तरह खारिज करने के लिए स्वतंत्र हैं।)

पद्मजा शर्मा - *समकालीन महिला लेखन का परिदृश्य कैसा है? क्या आप उससे संतुष्ट हैं?*

सूर्यबाला - स्त्री-लेखन का परिदृश्य रचनात्मक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है, संतोषप्रद भी... और भी होता यदि अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य और आधुनिकता के नाम पर सब कुछ कागज पर उतार देने का जुनून या भूत (कुछ लेखिकाओं पर) न सवार होता। लेकिन यह सब पुरुष वर्चस्वी साजिशों के इशारों पर हो रहा है। कुछ दिनों पहले कही गई अपनी ही पंक्तियां कोट करूं तो -

'लेखन में काफी बारीक चालाकियां बरती जा रही हैं। अब जैसे यही कि स्त्री लेखन की नई पौध को उकसाया जाना कि तुम्हारी आजादी का रास्ता तो तुम्हारी देह से होकर गुजरता है... और यह भी कि बोल्ड और दुस्साहसी लेखन ही उनकी लेखकीय-प्रतिबद्धता की प्रामाणिकता सिद्ध करता है... लेकिन आश्वस्तिकर यह भी कि कुल मिलाकर वृहत्तर परिप्रेक्ष्य में स्त्री रचनात्मकता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज की टटकी सेंसटिविटी के साथ, मात्र स्त्री ही नहीं, समय और समाज की सारी विद्रूपताओं और सच्चाइयों को गहरी पारदर्शिता के साथ रेखांकित कर रही हैं। फिर भी मेरा मानना है कि विमर्श की नकली फॉर्मूलाबद्धता से मुक्त होकर स्त्री लेखन को अपनी शक्ति और संभावनाओं के नये क्षितिज तलाशने हैं।

पद्‌मजा शर्मा - *एक रचनाकार के लिए सृजन के क्षण, और समय से कुछ भिन्न किस तरह होते हैं?*

सूर्यबाला - जिस तरह लिखते समय एक रचनाकार सामान्य व्यक्ति से भिन्न होता है, उसी तरह। हम 'विशेष' सिर्फ 'लिखते' समय होते हैं। शेष तो पूरे सामान्य ही न! मर्मज्ञ और संवेदनशील तो और भी लोग होते हैं, अंतर सिर्फ यह कि हम अनुभूत सत्य को कागज पर उतार भी पाते हैं, वे नहीं। तब हम अपने को विशिष्ट या भिन्न क्यों मानें। लेकिन हां, सृजन का क्षण अपने आप में विलक्षण और अनूठा होता है। ईश्वर हमें कुछ वरद और सुखद रचने के लिये प्रेरित करता है जो मनुष्यता की समृद्धि में भी सहायक सिद्ध हो। लेकिन लेखन से इतर क्षणों में भी वही विशिष्टता बोध ढोते रहना, लेखक के लिये बहुत घातक और हास्यास्पद होता है।

पद्‌मजा शर्मा - *स्त्री के हिस्से में बचे समय की खुरचन ही क्यों आती है?*

सूर्यबाला - इसका आधुनिक, तार्किक साथ ही बेलाग उत्तर तो यही होगा कि यह पुरुष वर्चस्वी समाज का अभिशाप है। स्त्री के शोषण का एक पक्ष है, प्रतीक है। स्त्री हमेशा से शासित और शोषित रही है। उसे अपनी तरह जी पाने की सहूलियत कभी नहीं मिली। वह हकीकत में दोयम दर्जे की नागरिक ही बनी रही...

लेकिन मेरा अपना उत्तर होगा, और यह मैं भावुकतावश नहीं कह रही पद्मजा कि स्त्री, प्रकृति से 'देने' के लिये बनी है। यह समय की खुरचन पर जीने वाली स्त्री, लेने की अपेक्षा 'देने' में विश्वास करने वाली स्त्री है। वह चाहे तो बहुत सारा समय अपने हिस्से में कर सकती है। इसके लिये विरोध और बगावत भी कर सकती है। लेकिन मुझे लगता है, स्त्री ने हमेशा से अपने जीवन में भावनात्मक सुखों को प्रधानता दी है। वह पुरुष से ज्यादा मानवीय रही है। उसके सुखों के मूल में मानवीय मूल्य रहे हैं।

पद्‌मजा शर्मा - *आप घर के किसी काम में लगी हैं। आपका मन लिखने का हुआ तब आप क्या करती हैं?*

सूर्यबाला - नहीं लिखती और क्या... तुम स्वयं रचनाकार हो, तुमने भी महसूस किया होगा, सबसे ज्यादा लिखने का आवेग तो तभी आता है जब लिखने की स्थितियां बिल्कुल नहीं होतीं - ऐसे-ऐसे कामों की व्यस्तता कि उन्हें छोड़ने का सवाल ही नहीं... ऐसी न जाने कितनी अजन्मी रचनाएं हर रचनाकार के पछतावों में शामिल होती हैं, लेकिन एक बात यह भी है कि प्रायः कुछ बहुत गहरी अनुभूतियां, जा-जाकर लौट आयी करती हैं, बार-बार मथती हैं। हमारी व्यस्तताएं उन्हें मार-मार कर भगाती हैं। वे फिर-फिर कर लौट आती हैं और अपने आप को लिखवा कर ही छोड़ती हैं। मेरी 'न किन्नी न', 'पीले फूलों वाली फ्रॉक', 'बिन रोयी लड़की', 'बाऊजी और बंदर', 'आदमकद', 'सुमित्रा की बेटियां', 'रेस' और 'इधर आयी' 'सप्ताहांत का ब्रेकफास्ट' आदि ऐसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ही कहानियां हैं 'न किन्नी न' और 'आदमकद' तो बीसों, तीसों साल मेरे अंदर पिंजरे के तोते सी पलती रही हैं। कुछेक कहानियां ही इतनी नसीब वाली होती हैं कि सूझती हैं, और हाथों-हाथ समय की मोहलत में लिखवा ले जाती हैं।

पद्मजा शर्मा - *समय की खुरचन में आपने खूब लिखा और अर्थवान लिखा... अगर पूरा समय मिला होता तो आपके लेखन का चेहरा कैसा होता?*

सूर्यबाला - शायद बहुत सी अजन्मी और अधूरी रचनाएं जिनमें कई बार मन बहुत रमा और डूबा, आज कागज पर होतीं... कुछ और न्याय कर पाई होती अपनी लेखन के साथ... यह सच है कि मैंने 'बाजार' की लाभदायक (?) मांगों को अनदेखा किया और जीवन के लिये मूल्यवान को ही रचने की कोशिश की, लेकिन रचनात्मकता में तो 'अधूरेपन' का अहसास हमेशा बना रहता है, रहना भी चाहिये... हम वह रचना तो कभी लिख ही नहीं पाते जिसे लिख पाने की कोशिश में निरंतर लिखते होते हैं। हमारा सारा लेखन उस अजन्मी रचना तक पहुंचने की कोशिश भर होती है। समय मिला होता तो जैसे अपने बहुत से लेखक, विशेष वर्गों जीवन क्षेत्रों में जाकर फील्ड वर्क कर के लिखते हैं, वह सब मैं भी कर पाती... दस वर्षों से अपने अमेरिका प्रवासों के आधार पर एक उपन्यास 'वेणु की डायरी' लेकर बैठी हूं - अभी तक पूरा नहीं हो पा रहा है, जबकि मेरे समकालीनों की हर वर्ष एक न एक कृति आ जाती है। लेकिन इस तरह की कोई प्रतिद्वन्द्विता या पछतावा नहीं... सबकी अपनी जीवन-शैली अपनी स्थितियां...

पद्मजा शर्मा - *क्या ऐसा संभव है कि एक ही रचनाकार की दो रचनाएं परस्पर विरोधी विचारों की स्थापना करें ?*

सूर्यबाला - जीवन और समाज को लेकर हर रचनाकार की मूल सोच और दृष्टि तो एक ही होती है और वह उसके संस्कारों, जीवन में मिली परिस्थितियों और उसके अपने विवेक से निर्मित होती है लेकिन यह भी सच है कि बदलते समय के साथ-साथ रचनाकार की सोच भी बदलनी जरूरी है। इससे भी रचनाओं के वैचारिक पक्ष में भिन्नता आ सकती है। आनी भी चाहिये... जैसे तीन दशक पहले मेरी कहानियों में आये वृद्ध या स्त्रियां इधर के दशकों में आये वृद्धों से ज्यादा आत्मविश्वस्त, आत्मसम्मानी और कम निरीह हैं। वृद्ध केंद्रित मेरी तीन-चार कहानियां - 'निर्वासित', 'सांझवाती' और 'बाऊजी और बंदर' पढ़ कर यह अंतर समझा जा सकता है। यही अंतर, 'मेरे संधिपत्र' की शिवा और 'यामिनी कथा' की यामिनी में दिख सकता है। इसी तरह मेरी 'आदमकद' और 'गीता चौधरी का आखिरी सवाल' पढ़कर कोई मुझे 'स्त्रीवादी लेखिका' के खाते में डाल सकता है जबकि 'जीजी' और 'मेरी शिनाख्त' पढ़ कर मेरी स्त्री विषयक धारणा को लेकर विपरीत अर्थ निकाले जा सकते हैं... जबकि ये विचार की नहीं बल्कि जीवन-स्थितियों के संदर्भ से जुड़ी अवधारणाएं हैं! इसी तरह 'फरिश्ते', 'रहमदिल' और 'सुनंदा छोकरी की डायरी' सीधे-सीधे दलित विमर्श में डाल दी जाने वाली कहानियां हो जाएंगी। समझना यह है कि रचना समूह के चरित्र से कहीं ज्यादा व्यक्ति के चरित्र को लेकर रची जाती है। हर रचनाकार के लेखन के केन्द्र में मनुष्य ही है।

जहां तक विचारों की बात है, रचना का उद्देश्य विचारों की स्थापना होता भी नहीं, जीवन की परतों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को खोलने, समझने में मदद देने और उसे अधिकाधिक मूल्यवान बनाने की कोशिशों से जुड़ा है।

पद्मजा शर्मा - *क्या साहित्य में स्त्री विमर्श की आवश्यकता अब नहीं बची?*

सूर्यबाला - नहीं, आज ज्यादा बड़ी आवश्यकता है स्त्री विषयक चलते विमर्श का पुनर्पाठ करने की। यह सच है कि पिछली सदियों, दशकों की तुलना में सामान्यत: आज स्त्री कहीं बेहतर स्थितियों में है, वह पहले की स्त्री की अपेक्षा आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर और कहीं ज्यादा आत्मविश्वस्त भी है। हर क्षेत्र में स्त्री की उपलब्धियां सर्वविदित हैं लेकिन -

यह सच है कि इन वर्षों में, स्त्री के प्रति हिंसा, बलात्कार की घटनाओं में भयावह इजाफा हुआ है, परिवार टूट रहे हैं, समाज में असंतुलन बढ़ा है, स्त्री-पुरुष के परस्पर संबंधों में प्रतिहिंसक प्रतिस्पर्धा बढ़ी हैं, सौमनस्य घटा है और कुल मिला कर स्त्री का सम्मान, मैं तो कहूंगी घटा ही है...

आवश्यकता यह है कि इनके कारणों की तलाश और पड़ताल स्त्री स्वयं करे और एकांगी, एकपक्षीय तथा विचारधारात्मक चौहद्दियों से मुक्त हो कर करे। स्त्री की प्रतिस्पर्धा पुरुष से नहीं, स्वयं अपने आप से होनी चाहिये। उसे स्वयं अपने अंदर के अंधेरों से भी निजात पाने की कोशिश करनी होगी। बहुत सारे अंतर्विरोध हैं, स्त्री के अंदर भी। उसकी सोच अगर प्रौढ़ और परिपक्व होती तो वह सोच पाती कि यह देह-विमर्श उसे कहां ले जाने वाला है। (साहित्य और समाज दोनों में) क्या है उसका हासिल? स्वयं को वस्तु समझने के खिलाफ चले उसके मुक्ति आंदोलन, उसकी चेतना के आह्वान की क्या यही परिणति उसने चाही थी? उसे चाहिये कि वह परंपरा और आधुनिकता को छाने, खंगाले, अपनी परखनलियों से गुजारे। दोनों के बीच से सकारात्मक सोच के वे रास्ते तलाशे जो उसके और समाज के बीच ज्यादा समरसता और संतुलन ला सकें। मैं सिर्फ एक बात जानती हूं, समस्या समाज से जुड़ी हो या स्त्री से, समाधान उसका स्त्री ही ढूंढ़ सकती है। क्योंकि मुझे स्त्री की विचार शक्ति और विवेक पर ज्यादा भरोसा है। पुरुष वर्चस्वी समाज के आसरे बैठे रहना उसकी सबसे बड़ी भूल होगी। विशेषकर आज की सहमाने वाली स्थितियों में। स्त्री को यह भी याद रखना है कि सब कुछ विद्रोह और विध्वंस से ही नहीं हासिल हो सकता। उसे संरचनात्मक सोच अपनानी होगी।

-सूर्यबाला

बी-504, रुनवाल सेंटर, गोवंडी स्टेशन रोड, देवनार, (चेम्बूर), मुंबई 400088

मो. 09930968670

- डॉ. पद्मजा शर्मा

15-बी, पंचवटी कॉलोनी , सेनापति भवन के पास, जोधपुर -342011 राजस्थान

मो. 09414721619

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जीव जगत

पोतकृमि

-परशुराम शुक्ल

पोतकृमि अति प्राचीन द्विआवरणधारी समुद्री मोलस्क अर्थात् घोंघा है। इसके अनेक जीवाश्म इंग्लैण्ड की थेम्स नदी की घाटी के आसपास मिले हैं, जिनके अध्ययन से यह लगता है कि पोतकृमि कम से कम ५ करोड़ वर्ष प्राचीन जीव है। यह पहले बहुत अधिक संख्या में सागर में था। आरम्भ में यह सागर में गिरने वाले वृक्षों में मांद बनाता था और इन्हें खाता था। पोतकृमि आएस्टर, काकेल और क्लाम आदि घोंघों का निकट सम्बन्धी है। अंग्रेजी में इसे 'शिपवार्म' कहते हैं। पोतकृमि मांद बनाने वाला द्विआवरणधारी घोंघा है, किन्तु देखने में न तो यह घोंघे जैसा लगता है और न ही द्विआवरणधारी। सागर में ऐसे बहुत से द्विआवरणधारी घोंघे पाये जाते हैं, जो लकड़ी और चट्टानों में मांद बनाते हैं, किन्तु पोतकृमि द्वारा बनायी गयी मांदें मानव के लिए बड़ी खतरनाक होती हैं। इसी कारण यह विश्वभर में कुख्यात हो गया है।

पोतकृमि की अनेक जातियाँ हैं एवं यह विश्व के अधिकांश सागरों और महासागरों में पाया जाता है। उष्णकटिबन्धीय सागरों में पाये जाने वाले पोतकृमि अन्य सागरों में पाये जाने वाले पोतकृमियों से आकार में बड़े होते हैं। पोतकृमि अपने रहने के लिए लकड़ी में मांद बनाता है। यह प्राय: सागर में डूबी लकड़ियों में मांद बनाता है। इसके साथ ही यह जहाजों, नावों और तैरती हुई लकड़ियों में भी मांद बना सकता है।

पोतकृमि एक लारवे के रूप में लकड़ी में मांद बनाना आरम्भ करता है। यह मांद बनाने के लिए अपने आवरण को बार-बार खोलता है, बन्द करता है एवं उसे घुमाता है। इसके आवरण के किनारों पर छोटे-छोटे दाँत होते हैं, जिससे लकड़ी में गोल मांद तैयार हो जाती है। पोतकृमि एक मिनिट में ८ से १२ बार तक अपने आवरण को घुमाता है। इस प्रकार मात्र तीन माह का पोतकृमि एक दिन में १९ मिलीमीटर तक मांद खोद सकता है। यह अपने जीवन में केवल एक ही मांद तैयार करता है और उसी में रहता है। पोतकृमि मांद खोदता जाता है और आगे बढ़ता जाता है। सामान्यतया एक पोतकृमि लगभग ४५ सेन्टीमीटर लम्बी तथा ६ मिलीमीटर चौड़ी मांद तैयार करता है। इसकी मांद प्रवेश द्वार पर संकरी और भीतरी सिरे पर चौड़ी होती है, अत: यह अपनी मांद से बाहर नहीं निकल सकता और जीवन भर अपनी मांद में एक कैदी की तरह बन्द रहता है। एक बड़ा पोतकृमि एक महीने में ३०.५ सेन्टीमीटर लम्बी सुरंग बना सकता है। पोतकृमि कभी भी अन्य पोतकृमियों की मांदों के भीतर अपनी मांद नहीं बनाता। यदि एक पोतकृमि की मांद के रास्ते में किसी अन्य पोतकृमि की मांद आ जाये तो यह अपनी मांद का मार्ग बदल देता है। यही कारण है कि जहाँ पोतकृमियों की मांदें होती हैं, वहाँ मांदों का आड़ा-तिरछा जाल सा बन जाता है, किन्तु मांदों के द्वार छोटे होने के कारण भीतर की पूरी जानकारी नहीं मिल पाती। पोतकृमि अपने शरीर से, मांद के भीतर एक कैल्शियम युक्त सफेद पदार्थ छोड़ता है। इस पदार्थ की उपयोगिता अभी तक एक रहस्य बनी हुई है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पोतकृमि की शारीरिक संरचना बड़ी विचित्र होती है। यह मोलस्क है, किन्तु देखने में मोलस्क जैसा नहीं लगता। पोतकृमि का शरीर लम्बा, पतला और बेलनाकार होता है तथा देखने में यह कृमि जैसा लगता है। इसकी लम्बाई सामान्यतया २५ सेन्टीमीटर से ३० सेन्टीमीटर तक होती है, किन्तु कभी-कभी दो मीटर तक के पोतकृमि भी देखने को मिल जाते हैं। पोतकृमि के शरीर के एक सिरे पर इसका सिर और दोनों आवरण होते हैं। इसके आवरण बहुत छोटे होते हैं एवं इनकी सतह खुरदरी होती है। यह अपने आवरणों को खोल सकता है, बन्द कर सकता है और चक्करदार घुमा सकता है। इसके आवरण हमेशा लकड़ी की मांद के भीतर रहते हैं। इसके दोनों साइफन एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं और प्रायः मांद के बाहर निकले रहते हैं, किन्तु पोतकृमि जब चाहे, इन्हें भीतर खींच सकता है।

पोतकृमि का भोजन प्लैंक्टन के सूक्ष्म खाद्य कण खाने वाले साइफनधारी अन्य समुद्री घोंघों के समान होता है। पोतकृमि अपने साइफन मांद से बाहर निकाल कर एक साइफन से ऑक्सीजन और मृतजीवों एवं समुद्री पौधों के अत्यन्त सूक्ष्मकणों से युक्तपानी को भीतर खींचता है। इस पानी से खाद्यकणों को छाँट कर इसके मुँह तक पहुँचा दिया जाता है एवं अखाद्य कणों से युक्त पानी इसके मल के साथ दूसरे साइफन से शरीर के बाहर निकाल दिया जाता है। पोतकृमि की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह बिना भोजन के कई सप्ताह तक जीवित रह सकता है। पोतकृमि लकड़ी में मांद बनाते समय निकलने वाले बुरादे को बाहर नहीं फेंकता। इसका उपयोग यह सम्भवतः भोजन के रूप में करता है।

पोतकृमि के निषेचन और प्रजनन में पर्याप्त विविधता पायी जाती है। इसकी कुछ जातियों में आन्तरिक निषेचन होता है और कुछ में बाह्य निषेचन। इसी तरह कुछ मादाएँ अण्डे देती हैं और कुछ बच्चों को जन्म देती हैं। इनके अण्डे नर पोतकृमि द्वारा छोड़े गये शुक्राणुओं से निषेचित हो जाते हैं। प्रायः नर और मादा खुले सागर में शुक्राणु और अण्डे छोड़ देते हैं। यहीं स्वतंत्र रूप से अण्डे शुक्राणुओं से मिलते हैं और निषेचित हो जाते हैं। कुछ मादाओं में अण्डे सेने वाली थैली होती है। इसी में अण्डे निषेचित हो जाते हैं। इनका पोषण थैली के भीतर ही होता है और ये लारवा बनने के बाद ही मादा के शरीर से बाहर आते हैं। कुछ पोतकृमि उभयलिंगी होते हैं। इनके लारवे इनकी मेन्टल कैविटी में ही विकसित होते हैं तथा ये छोटे-छोटे वयस्कों के रूप में बाहर आते हैं। इस प्रकार एक ही जीव से कुछ ही समय में बहुत अधिक संख्या में घनी और विनाशकारी फौज तैयार हो जाती है। टेरेडो नैवालिस नामक पोतकृमि उभयलिंगी पोतकृमि का अच्छा उदाहरण है।

पोतकृमि का लारवा गोल होता है एवं इसके आधार के चारों ओर छोटे-छोटे बालों (सीलिया) का एक घेरा होता है। इसके एक पैर होता है तथा पैर की विपरीत दिशा में दो साइफन होते हैं। शीघ्र ही पोतकृमि के लारवे के दोनों आवरण निकल आते हैं। लारवा पहले अण्डे में बचा हुआ योल्क खाता है और फिर योल्क समाप्त होने पर, जन्म के लगभग ३६ घण्टे बाद लकड़ी की किसी सतह से चिपक जाता है और मांद बनाना आरम्भ कर देता है। यह अपने आवरण के अगले सिरे को गोल-गोल चक्करदार घुमा कर मांद बनाता है और इससे जो बुरादा निकलता है, उसे खा जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पोतकृमि के अनेक शत्रु हैं, किन्तु यह अपने शत्रुओं से हमेशा बचा रहता है। मांद के भीतर बन्द होते हुए भी इसके साइफन बाहर रहते हैं, जिससे इसे शत्रुओं का पता चल जाता है। पोतकृमि अपने शत्रु का आभास पाते ही अपना पूरा शरीर छोटे से आवरण के भीतर खींच लेता है और आवरण बन्द कर लेता है। यह अपने आवरण का मुँह भी अपने पैर सहायता से बन्द कर लेता है, जिससे यह पूरी तरह शत्रुओं से सुरक्षित हो जाता है। पोतकृमि का जीवन अधिक लम्बा नहीं होता। यह केवल ७-८ माह ही जीवित रहता है।

पोतकृमि लकड़ी के जहाजों को भारी नुकसान पहुँचाता है। एक बार प्रयोग के रूप में लकड़ी के कुछ लठ्ठे बन्दगाहों के पास पानी में डाले गये। पाँच महीने बाद इन्हें निकालने पर पता चला कि औसत प्रत्येक ८.२५ वर्गमीटर में पोतकृमि के ४० लारवे अपनी मांदें बनाना आरम्भ कर चुके थे तथा अधिकांश की मांदे १० सेन्टीमीटर तक गहरी बन चुकी थीं।

प्राचीन यूनान के लोग अपने जहाजों को पोतकृमि से बचाने के लिए जहाज के उस भाग में जो पानी में डूबा रहता था, इतनी कीलें ठोंक देते थे कि लकड़ी का अंशमात्र भी शेष नहीं रह जाता था। इसके बाद जहाज की बाहरी पर्त को तांबे तथा जस्ते की चादरों से ढँका जाने लगा। यह कार्य सावधानी से करना पड़ता था, क्योंकि जरा सी भी दरार होने पर पोतकृमि प्रवेश कर सकते थे। सत्रहवीं शताब्दी में जहाज को पोतकृमि से बचाने के लिए जहाज की वास्तविक परत के बाहर सस्ती लकड़ी की परत चढ़ाई जाने लगी। इस प्रकार के जहाजों में दोनों परतों के मध्य गाय के बाल भर दिये जाते थे। पोतकृमि इन बालों को भेद नहीं पाता था अतः जहाज सुरक्षित रहता था। कुछ समय बाद गाय के बालों के स्थान पर कम्बल की परत लगायी जाने लगी। उन्नीसवीं सदी में स्टील के जहाज बनने लगे। इन पर कंक्रीट की परतें बिछायी जाते लगीं तथा विभिन्न प्रकार के रसायनों से युक्त रंगों से पुताई होने लगी, किन्तु पोतकृमियों से बचने का अभी तक कोई अच्छा समाधान नहीं निकल सका है और यह समस्या अभी तक बनी हुई है।

आइवरी फ्लैट नं.२० पांचवीं मंजिल
प्लेटिनम प्लाजा, टी.टी.नगर
भोपाल-४६२००३

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रवासी कलम से-

सोच

-अनिल पुरोहित

नई जगह तबादला हुआ है। अब तीन सप्ताह की ट्रेनिंग होगी फिर बागडोर थमेगी काम करने की। जल्दी-जल्दी तैयार हो जाऊँ। वर्ना रास्ते में ट्रेफिक मिलेगा। कार्ड पंच तो करना नहीं है, थोड़ी देर से भी पहुँचूंगा तो क्या फर्क पड़ेगा। मैनेजर को देर से आने का कोई कारण भी नहीं बताना। ट्रेनिंग में मेरा ही सहयोगी है। मैं अकेला ही थोड़े देर से आता हूँ। रोज तीन-चार साथी जो देर से पहुँचते हैं। यही तो मजे हैं, ट्रेनिंग के। बंदिशें ढीली हैं। सीखना क्या है, थोड़ा बहुत अलग होगा। पिछले १५ सालों से यही काम तो करता आया हूँ। असल काम तो करते हुए ही सीखा जाएगा। यही सब सोचते हुए मैं तैयार हो चुका था। आज सड़क पर इतनी गहमा-गहमी भी नहीं। शायद जल्दी पहुँच जाऊंगा। मौसम भी साफ है। रोड पर पिछली रात हुई बारिश के कारण पानी के हल्के धब्बे से हैं। गाड़ी में सुबह-सुबह भजन सुनने की आदत सी बन गई है। यही तो समय है जब थोड़ा बहुत भगवान को याद कर लेते हैं, बाद में तो दिन भर खुद के बारे में सोचने की भी फुर्सत नहीं। करीबन सुबह के ६.४० पर ऑफिस के पार्किंग में गाड़ी पार्क हो गई थी। बीस मिनट अभी बाकी हैं। एक-दो और भजन शांति के साथ सुन लेते हैं। सात बजे तक ट्रेनिंग में पहुँचना है। आराम से सीट को पीछे कर अधखुली आँखों से भगवान का ध्यान करता रहा। आँखों में तभी तेज लाइट की रोशनी चमकी। बगल की खाली जगह पर किसी ने गाड़ी पार्क की। देखा तो एक पुरानी सहकर्मी सिंथिया गाड़ी से जल्दी ही बाहर निकलीं। इससे पहले कि मैं अपनी खिड़की नीचे कर उसे हैलो कहता, उसने हल्के से हाथ हिलाया और हाथ में कॉफी का मग लेकर आनन-फानन तेज कदमों से चली गयी। वक्त के गुजरने के साथ लोग भी बदल जाते हैं, जाने कितने प्रोजेक्ट हमने साथ-साथ पूरे किये। ब्रेक के समय कभी मैं कॉफी लाता तो कभी वह। साथ-साथ लंच भी करते। मेरा शाकाहारी खाना जाने कितनी बार उसने चखा। अपनी निजी बातें भी उसे आँखें भीगते हुये बतायीं। और आज अचानक बस एक हाथ हिलाया और तेज कदमों से निकल गई। मैंने सोचा भी न था ऐसी बेरुखी बरतेगी। शायद उसने मुझे देखा ना हो। पर ऐसा कैसे हो सकता है। उसकी गाड़ी की रोशनी में तो मैं नहा रहा था। साफ नजर आया रहा होऊंगा। करीबन दस-बारह महीनों बाद मिल रहा हूँ। पुराने साथियों से मिलने की उत्सुकता बस मेरे ही मन में रही। कोई नहीं उत्सुक हमसे मिलने को। नए साथी बनते हैं, तो पुराने छूट जाते हैं। कहाँ किसे यहाँ फुर्सत जो किसी के बारे में सोचे। एक हम ही हैं, जो उतावले से हो बैठते हैं। पुरानी यादों को ताजा करते हुए अधीर हो जाते हैं। ऐसा उतावलापन किसी और में कहाँ? जमाना ही तेज है। हम हैं कि इसकी रफ्तार ही न पहचान सके। चलो अब समय हो चला ट्रेनिंग का। सात बजने को है। अब देर से जाने को मन नहीं करता। मैं भारी मन से गाड़ी से बाहर निकला। हाथ में कॉफी और कंधे पर खाने का बैग टांग कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धीमे-धीमे अपने ट्रेनिंग कक्ष को चल पड़ा।

..... दो महीने हो चले हैं यहाँ काम करते हुए। अब तो नया बैच भी आ गया है। काम का बोझ काफी है, नया बैच जल्दी से काम संभाले तो थोड़ी राहत मिले। आज कहीं देर ना हो जाए। हल्की बर्फ भी गिर रही है। सभी संभल कर चला रहे हैं। ट्रैफिक धीमा है। कहीं देर तो नहीं हो जाएगी। पर जल्दी क्या है-दस मिनट देर से भी पहुँचूगा तो कयामत नहीं आ जायेगी। गाड़ी तेज चलाने के चक्कर में कहीं किसी से भिड़ा ना दूं। देर तो देर साथ ही बीमा और बढ़ जायेगा। यहां सब कुछ नियम-कानून से चलता है। अब तो No Fault Insurance हो गया। यदि कोई दूसरा पीछे से गाड़ी भिड़ा देता है, तो भी बीमा बढ़ जाता है। इसमें भले ही अपनी कोई गलती ना भी हो। आनन-फानन में पुलिस वाले पहुँच जाते हैं। पूरी तहकीकात मौका ए वारदात पर ही हो जाती है। हर देश की अपनी कमजोरी उसकी अपनी ही ताकत। जहाँ हो वहीं के बन कर हो। अब छः चालीस हो गए, पाँच मिनट में कार्ड पंच करना है। मैंने जल्दी से गाड़ी पार्क की। गाड़ी की रोशनी में मैंने किसी को बगल की पार्किंग में बैठे देखा। अरे यह तो जेसन है। करीबन दो साल बाद देख रहा हूँ। मैंने जल्दी से गाड़ी पार्क की और अपना हाथ हिलाते हुए तेजी से अपना कॉफी और खाने का बैग लेकर दरवाजे की तरफ लपका।

दोपहर को लंच रूम में बैठा पहला निवाला ही लिया था कि किसी ने पीठ पर हल्का सा हाथ रखा और कहा-कहो प्यारे इतनी जल्दी सब भूल गए। मैंने पलट कर देखा तो दिल की धड़कनें तेज हो गई थीं। इतने सालों बाद मिले मित्र का स्पर्श पाकर दिल गुदगुदा रहा था। साथ कई यादों के झोंके मन को छू कर गुजर रहे थे। अपने कुर्सी को पीछे धकेल मैं उठा और जेसन को गले लगा लिया। ''कैसे भूल सकता हूँ, भाई मेरे। जाने कितने खट्टे-मीठे पल हमने साथ बिताए। सब कुछ याद है। पुराने दोस्त तो पुरानी शराब की तरह होते हैं। नशा जल्दी उतरता नहीं। कहो भाई कैसे हो।'' मैं एक ही साँस में कहता चला गया। जेशन की आँखें कब नम हो गयीं पता ही नहीं चला। उसने कहा, ''भूले तो हम भी नहीं। पार्किंग में तुमने गाड़ी पार्क की और हल्का सा हाथ हिला कर तुरत-फुरत में निकल गए। सोचा वक्त की धार ने दोस्ती के सेतु को ढहा तो नहीं दिया।'' मैंने कहा, ''अरे नहीं यार। ऐसी कोई बात नहीं। पांच मिनट में कार्ड जो पंच करना था, उसके बाद तो पूरे बारह घंटे पड़े हैं। इसलिए जल्दी में निकल गया।'' मैं अपनी सफाई दे रहा था। जेसन ने कहा, हाँ मैं समझ सकता हूँ। उस समय तो मैं भी कुछ सन्न सा रह गया। सोच रहा था, क्या हो गया। अनजाने से मुंह फिरा चल जो दिए थे। जाने कितने ख्याल जेहन से गुजर गये। इतना कहते हुये वह बगल वाली कुर्सी पर बैठ गया। तभी लगा आँखों के सामने से सिंथिया मुस्कुराती हुई गुजर रही है। इतिहास के दोहराने का अंदाज मेरे मन को गुदगुदा रहा था। सब कुछ साफ नजर आ गया था। मन से बहुत बड़ा बोझ पल में उतर गया। एक अजीब सा आनंद मन में हिलोरे ले रहा था। वाकई हमारे सोचने-परखने की शक्ति हमारे अतीत से कितनी गुंथी हुई है।

टोरंटो 'कनाडा'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहानी

गर्भगृह

-क्षमाकौल

घर कहाँ था? करफल्ली मुहल्ले में न? अब कहाँ है? वह फिर मौन हो उठी ....ओ हाँ ......वे तो संदेह पुनर्जन्म में चले गए। देह ने स्मृतियाँ और कल्पनाएँ नहीं छोड़ीं। जरा भी नहीं। क्या यह परमहंसत्व का मूल्य है? क्या है? मैं उस मुंडेर को देखना चाहती हूँ। एक दिन राम-नवमी पर कितने ही लोग थे। एक सुंदर-सी युवती उस मुंडेर पर बैठी थी, कलाई पर एक मोहक घड़ी बाँधें। मुझे कुछ नहीं करना था उस समय समय का। किंतु मन हुआ उस सुंदरी से पूछूँ-

-दीदी समय क्या हुआ........ वह कलाई की उस घड़ी में देखेगी .... बताएगी .... बताएगी 25 वर्ष। इससे मुझे अस्तित्व बोध होगा या अनस्तित्व की गंभीर पीड़ा? उसने मुझे उस समय कलाई की उस सूक्ष्म घड़ी में से समय देखकर समय बताया था। वह एक बिंदु था। जो मेरी स्मृति से विलुप्त हो गया। वह घड़ी, वह सुंदरी, वह मुंडेर, वह विराट मंदिर.........उस सब में केंद्र बिंदु था वह समय का अंक.........जो आज मेरे स्मरण लोक में नहीं। वह कलाई, वह घड़ी, वह मुंडेर, वह मंदिर और मैं। हम सब भेंट चढ़ गए हैं उन नकाबपोशों की जो उस समय बिंदु के ठीक उन्नीस वर्ष बाद आए और राम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान उस सुंदरी की कलाई, उस मुंडेर और मुझे, विध्वंस में डाल गए।

क्या समय था उस समय वह भी स्मृति के ध्वंसलोक में है.......पर मेरा समय पूछना, उसका घड़ी देखकर बताना ....उसका वह प्रदीप्त मुख, उसका मुंडेर पर बैठी होना मेरी चित्त-मति में विद्युत आपूर्ति वाले चित्र सा लगता है। यह विद्युत मेरे मस्तिष्क और मन की तारों से होकर गुज़रती है......... ।

कल वहाँ जाएँ?'' उस (रजनी) के पति ने वैभव से पूछा जो वहाँ रोज़ी रोटी कमाने के जुगत करते करते छद्म नामों को बदल कर जी रहा है।'' कल आप शंकराचार्य और ज्येष्ठेश्वर जाएँ। ज्येष्ठा देवी के मंदिर।'' अब वे आपस में ड्राइवर के साथ पैकेज और यात्रा के मोलों तथा उसके द्वारा बताई दरों के बारे में बातचीत कर रहे हैं। उसे सहसा ध्यान आया-प्रात: जब सूर्य उगेगा .... प्रकाश होगा वहाँ जाने में क्या परेशानी है....... वह ऐसे बोली जैसे उसे कोई तरकीब सूझी हो। पर पति बोले - नहीं पहले शंकराचार्य, फिर ज्येष्ठा देवी मंदिर, फिर समय बचेगा .... तब देख लेंगे। असंभव गतंव्य होता जा रहा है। गढ़ें और और गढ़े.......धंसे अस्थि मज्जा रक्त के भीतर भीतर ठीक ....हाँ जाहि विधि राखे राम ताहि विधि रहिए....... ।'' उसने उनका निर्णय मौन और सहजता से स्वीकारा।

अरशद ने गाड़ी को अंधेरे में से तेज़ चाकू की तरह चलाया और दुर्गानाग के कृष्णा ढाबा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

के पास रोका। अंदर अंदर चुपचाप आश्चर्य विगलित 'कृष्णा ढाबा? कृष्णा ढाबा?'' यह कैसे? यहां......दूं।''

रजनी किंतु बहुत भूखी है। नहीं नहीं उसे भूख नहीं लगी। वह सदेह थी..........नहीं नहीं वह विदेह है देह रहित........लेकिन नहीं वह भूखी है.........भूखी........भूखी............समय को लौटाने की भूख और स्पर्श करने, चैतन्य होने की भूख से मरी जा रही है वह।

''अब?'' पूछा उसके पति ने उससे और वैभव से।

थोड़ा चलें ....? उसने आकांक्षा बताई। निर्णय पति के ऊपर छोड़ते हुए।

''चलते हैं। खाना हज़्म होगा।'' उसने शाल अच्छे से ओढ़ा।

ढाबे के सामने ढेरों फर टोपी वाले, पेपर माशी की वस्तुएँ बेचने वाले थे क्योंकि ढाबे में वही खा रहे थे जिनकी धरती के इस हिस्से पर अपनी रसोई नहीं थी। चारों ओर से उसे अपनी मातृभाषा सुनाई दे रही है, फिर भी अपनत्वविहीन अंधेरे में। उन्हें पता है कि वे नहीं जानते वे कौन हैं। यहाँ भीतर एक छोटा-सा मंदिर है। वहाँ एक मद्रासी बाबा जी देखरेख कर रहे हैं और अच्छी खासी भूमि उसने मंदिर परिसर की वापस प्राप्त कर ली है जिस पर डल के मांझियों ने ज़बरदस्ती कब्ज़ा किया था। लोग प्राय: उस मंदिर पर पत्थर मारते हैं। मगर उस बाबा की दिलेरी है। डरता नहीं। चले......देखें?'' यह वैभव का सुझाव था। -''हां'' रजनी के पति ने हामी भरी। गली अंधेरे और कीचड़ से भरी थी। बीच में पानी से भरे खड्डु शरदाकाश में से प्रतिबिम्बित निर्विघ्न निष्कलंक चंद्रमा बताए जा रहे थे.........हां यह स्वप्नपथ था। स्वप्नपथ भी......अग्निपथ भी। कीचपथ भी.........मगर सुपथ भी था। यह पथ उन तीनों के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पथ है यह इस संसार में कोई और नहीं जानता था जगतनियंता को छोड़कर। मंदिर का नाम है झुरहयार।'' वैभव बोला। यह तो इतिहास को बिगाड़ कर रख दिया........ वस्तुत: यह है सुरेश्वरी। 'डलझील' का असली नाम है 'सुरेश्वरी'। यह वितस्ता के तट पर उसकी प्रतिमा का स्थल है। मुझे क्या पता........यहां तो इसी नाम से पुकारा जाता है इसे। हाँ, तभी तो मैं बता रहा हूँ इसका वास्तविक नाम तो मंदिर के हंता है। मगर मंदिर तो हमारा जीवन स्रोत है। उनके संबोधन और हमारे संबोधन में धरती-आकाश का अंतर होगा ही। इन्होंने कहां कहां नहीं बदले हैं नाम। अरे पूरे हिंदुस्तान भर में।''

बंड से कुछ लोग आ रहे है इसलिए वे मौन हो गए। अब वे बंड का आरोहन करने लगे। सामने महाकाली और कालभैरव की मूर्तियां मूर्तिमंत हो उठीं। द्वार से प्रविष्ट होते ही। लक्ष्मीनारायण का एक विराट भित्तिचित्र। अब वे दूसरी तरफ उतर कर मंदिर में प्रवेश कर गए। रजनी के पति ने घंटी ज़ोर ज़ोर से बजाई। रजनी के हदय को कुछ शांति-सी मिली इस ध्वनि से।

संध्या समय जब वे हारी-पर्वत पर मां झारिका की श्री चक्रमूर्ति सम्मुख आसीन थे.......सहसा पूरा नगर विचित्र और भयावह ध्वनि-सघनता के महासमुद्र में खो गया। हर दिशा और हर स्पीकर से ध्वनियां मिलकर ऐसे आपस में टकराई मानों ध्वनियों का चक्रवात हो और युद्ध या महाकाल की चेतावनी दे रहे हों। ठीक उन्नीस जनवरी उन्नीस सौ नब्बे की-सी ध्वनियों का विकराल समुद्र। उन ध्वनियों में मानव की हिंसक इच्छा का तुमुल था न कि मानव की जीवनेच्छा की लय। वे इससे डरे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं थे.........पर आकलन किया था। नवीनतम। मानो सतीसर कांप रहा हो। क्योंकि जलोद्भव भूख के मारे तड़प-तड़प कर अपना आहार खोज रहा है........ मानों अपनों को ही आहार बनाने की विवशता का त्रास हो उसे।

लयात्मक घंटियों के बजने की लय झील की धीमी और ठिठुरती तरंगों पर आरूढ़ होकर दूर-दूर तक शुभ फैलाती गई और उन्हें दिखाई दी सुरेश्वरी की मूर्ति। दूर।

देखो वहां तक यह मंदिर परिसर वापस प्राप्त किया है इन बाबा जी ने.........इधर यह हवन करते हैं'' विभु ने कुंड दिखाया। जो वे यों भी देख चुके थे अच्छा यहां हवन होते हैं ?'' एक सुखद आश्चर्य की जिज्ञासा थी उसकी।

''प्राय:।''

हवन के दिन वे सब के सब इस बंड के सहारे दीवार पर चढ़ कर जमा होते हैं। सीटियाँ बजाते हैं। फब्तियाँ कसते हैं। काफिरों और काफिरी को माँ बहन की सुनाते हैं। बाबा जी को तो अपशब्दों के अंबार में रख देते हैं........ फिर प्रसाद भी आकर ग्रहण करते हैं।'' हां ?'' हतप्रभता से रजनी ने पूछा।''और क्या?'' एक प्यारी-सी और आह्लाद भरी मुस्कान के साथ वैभव ने उसे विश्वास दिलाया। वह प्रसाद तो उनके लिए कुफ्र है। हराम है।'' कुछ कुफ्र-बुफ्र नहीं। जितना कुफ्र ये करते हैं, कोई नहीं करता। यह मज़हब ही पॉलिटिक्स है.........और कुछ भी नहीं।'' अबूझ सी मनस्थिति चीन्ही अपने भीतर रजनी ने ओर पति को सहज पाया। अब वे भीतर गए। देखा महाकाली का घोर उपासक है बाबा।''

रजनी नहीं समझ पाई कि उसका पति बाबा से बातें करेगा या नहीं .... जबकि उसके भीतर एक विराट संभावना की जिज्ञासा जगी है।

प्रत्येक प्रतिमा के सम्मुख शीष नवाकर उसने देखा उसका पति बाबा के कक्षोन्मुख है। वह प्रसन्नता में डूब गई।

जैसा कि विभु ने कहा था कि बाबा हिंदी अधिक नहीं जानता। जो उससे हिंदी में कहा जाता वह समझता पर उसके हिंदी उत्तर का अर्थ ध्यानपूर्वक सुनकर तथा संदर्भगत रूप से ही निकालना पड़ता। उन तीनों ने बाबा जी का चरण स्पर्श किया। ....किसी विराट-संभावना की आशा के समाचार के कारण। वह यही बताता रहा कि - वे पत्थर मारते रहते हैं ....मैं भी धैर्य से अंदर उनके थकने की प्रतीक्षा करता रहता हूं।''

''अमरनाथ यात्रा में लगभग प्रतिदिन आठ-आठ, नौ-नौ सौ यात्री भोजन करते हैं।''

प्रसाद लेकर वे चल दिए।

गेस्ट हाऊस में उन्हें ठण्ड की भयंकरता ने आ घेरा। इतनी ठण्ड आज तेईस वर्षों बाद लग रही है। यह जानी-पहचानी किंतु बिछुड़ी ठंड। माँ ने इस तापमान में अपने तिरेसठ साल गुजारे। पिता ने चौंसठ। नाना, नानी, दादी, दादा क्या भाग्य था उनका। आरंभिक क्षण से अंतिम क्षण तक। इसी मिट्टी-आकाश के। इसी मिट्टी आकाश में। हम न इधर के, न उधर के। हमारे बच्चों के लिए आश्चर्य लोक। सामूहिक वन्चना और पराजय। गहन पीड़ा। उन्हें कुछ करना नहीं था। रजाइयों में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

घुस वे स्वयं को गर्माने के प्रयास में लग गए। और कुछ विश्लेषण करते रहे। जैसे अरशद की वे बातें.......जब उसने कहा कि शहर का हाल अब ठीक है। देर रात तक दुकानें खुली रहती हैं और हड़तालों की कॉल कोई नहीं मानता। विश्लेषण यों था कि वह झूठ बोल रहा था। पिछले सप्ताह की दी हुई सभी कॉलों पर शत-प्रतिशत क्रियान्विति हुई।

अरशद यह भी बोला था कि इस वर्ष यहां तेरह लाख पर्यटक आए। स्थान नहीं था कहीं खाली। पर्यटक फुटपाथों और सड़कों पर सोये और बहुत से को, टैक्सियों के ड्राइवर अपने अपने घर ले गए।

वह फिर बोला था- ''अब उस बुड्ढे गिलानी की कोई नहीं सुनता। इंडिया गवरमैंट ने उसे खूब पैसे दिए हैं। उसके दिल में पीसमेकर (पेसमेकर) भी लगाया। फिर भी वह बाज़ नहीं आता। अपने बच्चों को दूर विदेश में सुरक्षित रखा है और इधर गरीबों के बच्चों को मरवाता है।'' मानो वह कह रहा हो कि अब हम भी जिंदा रहना चाहते हैं......मरना नहीं चाहते......भले कोई राजनेता या कवि भड़काएं कि 'जिंदा रहने के लिए लोग मरते हैं-.......क्या तुम भी नहीं मरोगे........और जो भी ऐसा कहते हैं वे कान खोल कर सुने......कि....नहीं......जीवन बड़ा सुंदर है।'' रजनी मामी। ये सब अकेले में मिलते हैं तो मिठास और दयनीयता घोलते हैं, मगर एक से अधिक का जमावड़ा हुआ तो फिर ये अलग ही लोग होते हैं। बल्कि लोग नहीं कुछ और ही होते हैं। खूंखार......बहुत खूंखार। मैं एक दिन नाई के पास गया बाल बनवाने। कुछ मिनटों के बाद दुकान में दो और युवक आ गए। एक ने बात छेड़ दी। सुमित मेरा यार है जम्मू में। संचार माध्यम में। लगा गीलानी को गरियाने। मैंने गला पकड़ा साले का। भाई यह नहीं सहूंगा। साफ मार डालूंगा। बचना है बच। ज़्यादा का एक गीत दिलेरी से अपने मां बाप पर तरस खाना न छोड़......।'' रजनी मामी! फिर उन में शुरू हुई एक के बाद एक वाही-तबाही काफिरों, सेक्युलरिज्म और समाजवाद के विरुद्ध। ऐसी ऐसी गंदी गंदी गालियां कि बस मितली आए। उनको लग रहा था कि मैं जो बाल बनवा रहा हूं उन्हीं में से एक हूं। क्योंकि चुप भी हूं। अचानक दरवाज़ा खुला और वह लड़का भीतर आया जो मुझे जानता था। अचानक मैं भयभीत हो उठा। मैंने पापा को मिसडकॉल दी। भाग्य से पापा ने तुरंत वापस कॉल किया। मुझे दुकान से रफूचक्कर होने का बहाना मिला।'' ओफ्फो।'' होंठ चबा उठी रजनी। और इसी सारांश के साथ रजनी ने कम्बल के भीतर सिर रख दिया। कटार-सी यह सर्दी। वह वैभव से बोली - विभु वह रजाई भी डाल।'' तुम्हें पता है जब 1990 में हम भागे थे हम घर में दो दो गद्दे बिछाकर बहुत आरामदायक बिस्तर में सोते थे। मस्जिदों की आवाज़ें बता रही थीं कि जल्दी ही हमें वीरानों, अभावों में भटकना है। पत्थरों, मिट्टी और रेत पर सोना है.........और इस के साथ ही वह एक अजीब हंसी हंस दी। विभु जो रजाई लाने के लिए उठा था, उसकी यह हंसी देखने के लिए क्षणभर रुक गया। एक ज्ञानी की हंसी, एक व्यंग्यकार की हंसी। दुःख और सुख भाव-अभाव में जीवित होने के शौर्य की हंसी। रात भर तेज हवाओं ने, पुनः पुरानी परिचित हवाओं ने उन्हें आलिंगनबद्ध रखा, सुबह धूप खिली थी। उदासी रहित धूप। वह उठी और बाहर झांका। उसकी दृष्टि दूर दूर तक चली गई। ऐसा क्यों न करें कि शंकराचार्य के बदले हम वहीं जाएं .... स्कूल और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मंदिर ....ज्येष्ठा देवी, खरयार और हब्बा-कदल से होते हुए। भगवान गोपीनाथ और गणेश-मंदिर हो आने के बाद।'' उसने सहसा जिस तीव्रता से कहा। उसका पति सहज मान गया। बोला - ठीक है। शंकराचार्य जाएंगे मगर।'' सीढ़ियां न चढ़ पाऊं मैं अगर ....?'' ठीक।'' अरशद को कार्यक्रम बताया गया। वैभव बैंक ऑफ बड़ौदा पर उतर गया। अरशद सीधे हब्बा कदल की तरफ मुड़ गया। यहां सांगोपांग भगवान जी बैठे हैं। वितस्ता का यह किनारा। पहले हंसी में हमेशा धड़कता मिलता, आज हिचकियां बंधी हैं मानो रोते रोते। ये सद्यः खंडहर। विस्तता के आर-पार के ये घर अपनी चाल-ढाल से हवाओं पर लहरा रहे हैं। और बराबर बता रहे हैं हम प्रेतों के नहीं मनुष्यों के घर हैं........आस है हमें उनके लौटने की।'' वह काठलेश्वर देख रही हो ?'' अच्छा वह मंदिर। कबाइली हमले का सबसे बड़ा शरणार्थी शिविर रहा है यह ? वह रहा सुभाष प्रेमी का घर। और वह अशोक कौल का। वह देख रही हो टेढ़ी-मेढ़ी खिड़कियों वाला........यहां हम किराये पर रहे हैं। तब मैं सातवीं में पढ़ता था........।'' वह चुपचाप ताक रही है मंदिर के गुंबंद को, जो अक्षुण्ण है और बहुत विशिष्ट। वह एक सुख संजो रही है। जैसे मानो सर्वनाश में इस गुंबद में छिपा उसका घर बच गया हो किसी तरह। उसका पति वीडियो ले रहा है......और वह है कि आतुर है, गणेश मंदिर से भी हो आने के लिए। सिपाहियों ने मंदिर खोला था। सिपाहियों ने मंदिर धोया था। धूप जलाकर सुगंध की थी। गर्भगृह पर ताला था। न होता गणेश जी का पादपद्म चूम लेती। इस मूर्ति की विशिष्टता है कि तलुआ आराम से चूमा जा सकता है, और उस समय किसी वरदान के चलते श्रद्धा उमड़ आती है जैसे आंसू। तेज़ी से परिक्रमा कर वे बाहर आए। ''धन्यवाद।'' रजनी के पति ने उन सिपाहियों से कहा। सारी हिंदू दुकानों पर अब मज़हबी बैठे थे। मकानों में वे रह रहे थे। मकानों में वे रह रहे थे या नहीं मगर बाहर से मकान अपने मूल-निवासियों की आहटों की आस में कान खड़े रखे थे। कनीकदल पर उसके पति ने कहा - रजनी! इस घर में जन्मा हूं मैं। इसका एक वीडियो लूं?'' पर उसने इस पर अनुक्रिया रद्द कर दी। आप जरूर लीजिए। लीजिए! लीजिए! कोई कुछ नहीं कहेगा ड्राइवर ने कहा, पर उसने नहीं लिया। नीचे करफल्ली मुहल्ले की तरफगाड़ी मुड़ी। अब उसने एक एक गली पहचानी। अचूक। सोचने लगी रजनी-आगे वह घर भी देखने को मिलेगा - जहां वह जन्मी थी।

अब आगे मैं भी आपको दिखाऊंगी वह घर जहां मैं जन्मी हूं.......यह रहा।''

उसके पति ने गाड़ी से उतर कर घर का वीडियो लिया, आसपास लोग देखते रहे। शंकित। अब स्कूल और मंदिर अत्यंत निकट आ रहा था। उसका हृदय यों स्पंदित हो उठा मानों बस अभी फट के पता नहीं कहां गिर पडेगा बाहर। यहां से मुड़िए.......और बस अब रुकिए।'' जुत्शियों की वह अटारी उजाड़ थी। और एक टूटी खिड़की से काला कुत्ता देख रहा था। कभी कभार भौंक भी रहा था। पर दरवाजे (ड्योढ़ी) पर ताला था। छः अपार सुंदर बेटियां। अद्वितीय सुंदर मां। एक भाई। एक बार सब के सब खसरे की चपेट में आए थे तो वह सखी सुषमा जुत्शी को जब देखने आई थी तो देखा था अटारी पर (चूंकि गर्मियों के दिन थे) सात आठ बिस्तर लगे थे। मां आधी बीमार कभी किसी को पानी देती उबाल कर और कभी चाय। फिर कभी बाहर आकर खुद भी लेटती। उसने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घंटा भर रुककर रसोई के सारे बर्तन धोये थे और पानी उबाला था। चाय बनाई थी। आज उसी अटारी पर कुत्ता है.......जो पता नहीं क्या कह रहा हैं। पता नहीं कहां गए हैं वे सब के सब। कौन कौन नहीं। उस गली की ओर मुड़ते ही स्कूल की भव्य इमारत, नामपट्ट और उसके भी ऊपर शोधपीठ दिखा करता था। पर वहां खुला आसमान था और नंगी जमीन। पीछे के मंदिर की ध्वस्त दीवारों का भयावह दृश्य। मंदिर के सुनहरे रंग के चार गुंबद और एक मुख्य गुंबद जो वितस्ता के किसी भी पुल से दिखाई देता था। उसके मुख से चीख निकली........जो निकली भी और घुट भी गई। दाई की तरफ का परीक्षा भवन था तो वहां मगर अब वह किसी का घर बना था। बाहर एक हरी झंडी थी जिस पर चांद और तारा था। यहां उसने राजा भोज का संस्कृत नाटक खेला था, श्रीकृष्ण का मटकी नृत्य किया था। एक गीत जो भारत माता को समर्पित था के लिए नसरीन भारत माता बनी थी मंच के बीचोंबीच तल में से एक कमल के फूल में से प्रादुर्भूत हुई थी। यह सब सोचना उसके लिए विचित्र हो उठा। उस जीवन का और इस जीवन का तालमेल ही छिन्न गया। इसी भवन में उसने प्रधम से नौंवी कक्षा तक की छ:माही एवं वार्षिक परीक्षाएँ दी थीं।

अब एक अत्यंत संकरी गली थी। जहां से स्कूल की दीवार खत्म तथा मंदिर की दीवार शुरू होती है। दीवार के एक टूटे हिस्से से भग्न मंदिर दिख रहा है। अंदर भी भग्न और बाहर भी सर्वनाश से लिप्त। सर्वनाश। सर्वनाश। सर्वनाश। उसे उस गमले की खोज थी, जिसमें कोई छोटा सा पौधा रहता था। जो विराट और विरल था। एक पूरे बड़े पत्थर को लेकर बनाया। गमले तक पहुंचने की अवधि में उसने सोचा-गमला तो होगा। वह कोई ईशमूर्ति थोड़े न थी, उसे क्यों तोडेंगे।'' पर अगले क्षण उसने देखा वह राजसी गमला, बिरली नक्काशी से युक्त एक तरफ अधटूटा पड़ा था। किसी जीवित के मृतक होने का तीव्र बोध कराता हुआ। वितस्ता के ऊपर हवन कक्ष और भण्डार कक्ष का कोई चिह्न नहीं, सिर्फ वितस्ता के घाट को जाने वाली सीढ़ियों के ऊपर लकड़ी के दो विराट खम्बे खड़े थे जो उन कमरों की करुण कहानी कह रहे थे। मंदिर के गर्भगृह में तीन-चार बच्चे जुआ खेल रहे थे। तोरण-द्वार पूर्णरूपेण ध्वस्त था।' इतनी सशक्त प्राचीरें ....कैसे तोड़ी गई होंगी?'' आंसुओं में डूबी वह पूछ बैठी। बम धमाकों से। इनके पास सारा अस्त्र-शस्त्र है।' - अंदर गर्भगृह के मखमल की भस्म भी नहीं दिखाई दे रही कहीं। राम, सीता, लक्ष्मण की अत्यंत मोहक मूर्तियां वो हनुमान जी .... वे तैंतीस करोड़ शालिग्राम .... कहां होंगे मुझे लगता वे सभी इस नदी में जहां से मूर्तियां दुर्दांत रूप से उखाड़ी गई थीं, उन पर भारतवर्ष, हिंदुओं और हिन्दू धर्म पर भयानक भयानक अपशब्द उर्दू और अंग्रेजी में सघन रूप से लिखे थे। चाँद सितारे और पाकिस्तान जिंदाबाद के नारों से दीवार को गोद दिया गया था। पति ने उसकी बांह पकड़ी और ज़ोर से कहा - चलो अब यहां से जल्दी। यहां खतरा है। तुम रो क्यों रही हो? क्या होगा रोने से?'' उसके बोलने में क्रोधमिश्रित गंभीरता थी। वह थोड़ी संयत होकर बोली - एक परिक्रमा क्या ....आप भी? वह नर्म पड़ गया, किंतु पूछा - किसकी? किसकी परिक्रमा करोगी। इस विध्वंस, इस महाविनाश की? नहीं उन अक्षुण्ण स्मृतियों की.........और वह आंसुओं में फट पड़ी..........पर खुद को तुरंत रोका भी। किसी एक मूर्ति का कोई चिन्ह भी नहीं यहां। पीठ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के भव्य पत्थर वे निकाल निकाल कर ले गए हैं।' कहां ले गए होंगे।'' घरों के लिए। घरों में लगाए होंगे। वे विशेष पत्थर थे। महाराजाओं द्वारा गढ़वाए गए।'' इन्हें यह अशुभ नहीं पड़ते?'' पड़ेंगे अब?'' कहते हुए रजनी ने पति के मुख पर जाने की अधीरता और भय भांपा मगर अपने भीतर के विकराल प्रश्नों को वह किसी से पूछना चाहती थी। किसी से नहीं तो कम से कम इन खण्डहरों से ही। इतनी बरबरता! वह चुप रहा। यहां पुनः वैसा ही भव्य मंदिर नहीं बन सकता क्या?'' तुम चलो.......अब.........।'' किंतु वह पुनः गर्भगृह में वापस घुस गई.......और अश्रुओं के पारावार में गलने लगी। बोली उस दिन भूकंप आया था...........भयानक भूकंप.........।'' किस दिन.........क्या हो गया है तुम्हें..........।'' मैं छठी में पढ़ती थी सुबह यहां आती थी स्त्रोत पाठ हो रहा था। दीवारें, मूर्तियां हिल गई। पुजारी और पाठ करने वाले रुक गए। कुछ क्षण बाद जब हिलना रुक गया स्त्रोत पुनः आरंभ हुआ...........दिन में जब परीक्षा देने स्कूल गई वहाँ चारों तरफ शोर था कि चींकराल मुहल्ले के सभी हिन्दू घरों में आग लगी है........एक भी नहीं बचा ....और यह कि वह सत्ताईस मई था। और नेहरू मर गया था। इसीलिए भूकंप आया था.......और करीब चौंसठ हिंदू घर जल कर भस्म हो गए थे।'' ....अच्छा है, मेरी स्मृति वे भी हैं। पर भूकंप इसलिए नहीं आया था, अलबत्ता हिन्दुओं से डाउन टाउन पूरा रिक्त कर दिया गया था। उस 3 लोकों को मिनी पाकिस्तान बोला जाने लगा था उसी दिन। नहीं रुका था वह भूकंप। निरंतर चलता रहा..........।'' अब चलो तो..........अगर दो चार लोग इधर आए और हमें घेर लिया तो ....'' कुछ क्षण रुक कर फिर बोला मैं इसीलिए यहां आना नहीं चाहता था............मैं पिछली बार एक डेलीगेशन के साथ आ चुका था। तुम्हें नहीं बताया। पता था तुम नहीं सह पाओगी.........'' मैं नहीं सह पाऊंगी या आप नहीं कह पाएंगे........?'' उसके पति के चेहरे पर सांत्वना लौट आई जब उसे गर्भगृह से निकलने को तत्पर देखा। इस बीच गर्भगृह में जुआ खेलने वाले बच्चे बाहर टूटे पत्थरों पर आग जलाने का प्रयास कर वास्तव में उनके गर्भगृह खाली करने की प्रतीक्षा कर रहे थे...........।

90-बी - भवानी नगर जानीपुर
जम्मू -180007
(जम्मू-काश्मीर)
मो. 9906001813

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहानी

एक और भीष्मप्रतिज्ञा

स्वाति तिवारी

कालान्तर में मेरी कोई सन्तान आपकी पुत्री की सन्तान का अधिकार छीन न पाये इस कारण से मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं आजन्म अविवाहित रहूँगा। उनकी इस प्रतिज्ञा को सुन कर निषाद ने हाथ जोड़ कर कहा ''हे देवव्रत! आपकी यह प्रतिज्ञा अभूतपूर्व है।'' इतना कह कर निषाद ने तत्काल अपनी पुत्री सत्यवती को देवव्रत के साथ हस्तिनापुर भेज दिया।

देवव्रत ने अपनी माता सत्यवती को लाकर अपने पिता शान्तनु को सौंप दिया। पिता ने प्रसन्न होकर पुत्र से कहा 'वत्स! तूने पितृभक्ति के वशीभूत होकर ऐसी प्रतिज्ञा की है जैसी कि न आज तक किसी ने की है और न भविष्य में करेगा। मैं तुझे वरदान देता हूँ तेरी इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने के कारण तू भीष्म कहलायेगा और तेरी प्रतिज्ञा भीष्म प्रतिज्ञा के नाम से सदैव प्रख्यात रहेगी।' भीष्म ने सभी दिशाओं और देवताओं को साक्षी मान कर आजीवन ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा ली।

पता नहीं क्यों महाभारत की यह कथा मुझे पढ़ना पसंद है, जब भी यात्रा पर जाती हूँ सफर काटने के लिए यही पुस्तक उठाती हूँ । लोग कहते हैं महाभारत घरों में नहीं रखी जाती, पर मैं रखती हूँ। मुझे महाभारत न रख कर घरों में महाभारत रचने वालों से अच्छा घर में रख लेना लगता है। आज इसी पुस्तक को पढ़ते हुये एक समानान्तर कथा अचानक याद आ गई है, लौट रही हूँ वापस अपने घर। मायके की देहरी से आते वक्त साथ है एक और दूसरी महाभारत की पूरी गाथा -------- मन मे कितने ही सवाल थे जो अचानक आज हल हो गए थे। सोचती हूँ पिता शांतनु का वरदान क्या अलग-अलग युग में अलग-अलग लोगों को हस्तिनापुर से हस्तांतरित होता रहा होगा तभी तो घर-घर की महाभारतें सदियों से जारी हैं और पिता के उस वरदान को जो देवव्रत को दिया गया था, तब से अब तक कितनी संतानों ने श्राप की तरह भोगा है, क्या युग बदल जाने से युगांतर हो जाते है ---------------- मन उस वरदान और श्राप के बीच कहीं उलझा हुआ है । गाड़ी अपनी रफ्तार से चल रही है, जैसे समय चलता है पर पीछे छूट गई एक प्रेम कहानी के मर्म को कागज के पन्नों पर समेटने की जद्दोजहद से उलझी हूँ -------- शायद कोई सूत्र आपके हाथ लग जाये।

यदि आज ओसारे का छज्जा भरभरा कर ना गिरता तो रुक्मिणी आत्या के जीवन के अकेलेपन को मैं इन पृष्ठों पर नहीं समेट पाती। एक हफ्ता हुआ मुझे गाँव आए। भैया का फोन आया था आई की तबीयत बिल्कुल ठीक नहीं है और पद्मा वहिनी को लेबर पेन्स के साथ अस्पताल में भर्ती करवा दिया है। स्वाभाविक है ऐसे संकट के वक्त भैया मुझे ही तो याद करेंगे। पद्मा वहिनी की पहली डिलेवरी है और आई चलने-फिरने से लाचार। साइटिका का दर्द बना रहता है। घर देख लेती

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं, वही बहुत हुआ। अस्पताल, छोटा बच्चा, जच्चा कितने काम हैं, अकेला संदीप क्या करेगा सोचते हुए मैं हफ्ते-पन्द्रह दिनों की तैयारी के साथ गाँव पहुँच गई थी। यूँ देखा जाए तो सामने वाले पुश्तैनी मकान में रुक्मिणी आत्या भी रहती हैं। पद्मा को स्नेह भी उसी तरह करती हैं जिस तरह वे अपनी बहू या बेटी होती तो करतीं, पर आत्या की कोई सन्तान नहीं है। वे अविवाहित हैं और जापे-जचकी का उन्हें कोई अनुभव नहीं।

आत्या को मैंने सदा यहीं, इसी मकान में अपने मायके में देखा। वे कभी ससुराल क्यों नहीं गई, उनका ब्याह क्यों नहीं हुआ? यह जानने की कोशिश ही नहीं की। बस घर में आत्या हैं जो जाने कब से ओसारे के बीचोंबीच लगे शीशम के खंभे के सहारे बैठी अपने कार्य करती रहतीं। बचपन से मैंने उस खंभे से पीठ टिकाए रुक्मिणी आत्या को ऐसे ही देखा है। जब तक मेरा ब्याह नहीं हुआ था मैं भी वहीं उसी ओसारे में डेरा डाले रहती थी। एक मेज कुर्सी लगी थी। आत्या बताती हैं- बचपन में बाबा ने आत्या के पढ़ने के लिए बनवाई थी, पर आत्या दसवीं से ज्यादा पढ़ नहीं पाई, बड़ी अच्छी टेबल कुर्सी है, वो भी रेलवे-स्लीपर की लकड़ी से बनी। आई अक्सर मेरे बाबा से कहतीं, ''लड़की उस मनहूस टेबल- कुर्सी पर पढ़ने बैठती है! जिसके लिए बनी थी उसका उद्धार तो हुआ नहीं, मेरी लड़की को क्या कामयाबी दिलवाएगी?''

बाबा हँसने लगते- ''मेज कुर्सी किसी का भाग्य नहीं गढ़ते?''

आत्या मेरे बाबा के बड़े बाबा (ताऊ) की एक अकेली सन्तान थीं। पुश्तैनी घर तीनों भाइयों के साथ-साथ ही लगे थे, जिसमें छज्जे, ओटले और ओसारे सब एक साथ थे। आत्या मुझे संदीप से ज्यादा लाड़-प्यार करतीं। तीनों घरों में कभी यह पता नहीं चला कि काका बाबा के घर हैं। खाना अलग-अलग बनता, पर कोई कहीं भी खा लेता। हाँ, छोटी काकू दादी थोड़ी तेज-तर्रार थीं और निगरानी और लगाई-बुझाई भी कर लेती थीं। वे मेरे बाबा की काकी थीं। उनकी एक बेटी और एक बेटा था। इस नाते मेरी दो आत्या थीं-एक रुक्मिणी आत्या और दूसरी कुमुदिनी आत्या। रुक्मिणी आत्या भोली-भाली सरल हृदया और कुमुदिनी आत्या झगड़ालू थीं।

मैं अक्सर आत्या के आसपास खेलते हुए ''आत्या भूख लगी है।'' या कभी ''आत्या बालों में तेल डाल दो, आत्या चोटी गूँथ दो'' जैसे अनावश्यक कामों में आत्या को उलझाए रहती। आत्या भी एक थाली में ढेर-सा खाना परोस मुझे पकड़ा देतीं और फिर ओसारे के खंभे से सट कर अपनी वायल की साड़ी में फूल टाँकने बैठ जातीं या वहीं बैठी-बैठी मेरे बालों में तेल-वेल डाल कर कस कर दो चोटी गूँथ देतीं। अब तक कहती हैं- ''शालू तेरे बाल इसीलिए इतने लम्बे हैं... खूब तेल डलवाती थी मुझसे।''

गाँव पहुँची तो पता चला संदीप के घर बेटा हुआ-पद्मा वहिनी के बेटे को सँभालना था, इसलिए तीन दिन तक अस्पताल में ही रहना पड़ा। संदीप थोड़ा बच्चा उठाने लगा, तब घर जाने की छुट्टी मिली। घर लौट रही थी तो पैर स्वतः नए फ्लैट की जगह पुश्तैनी घर की तरफ ही उठे। रुक्मिणी आत्या अब भी अकेली वहीं रहती हैं। छोटे काकू वाली जमीन बेच प्रभु काका अमेरिका चले गए और कुमुदिनी आत्या पूना अपने ससुराल में हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनके दोनों बेटे डॉक्टर हैं। गाँव वाले इस घर में एक पीढ़ी गुजर जाने के बाद बस ये रुक्मिणी आत्या ही बची हैं आई के साथ, और इतनी प्रॉपर्टी बेचारा संदीप ही देखता है। सिविल इंजीनियर तो है ही, बिल्डर भी हो गया है। सारी खाली पड़ी जमीन पर उसने मल्टीस्टोरी बना कर फ्लैट बेच दिए हैं। दो बड़े-बड़े फ्लैट खुद के लिए भी रख लिए। एक खुद का और दूसरा रुक्मिणी आत्या का, पर आत्या ने घर बदलने से इन्कार कर दिया था। वे वहीं रहती हैं पास वाले पुश्तैनी मकान में, जिसे नगरपालिका ने खतरनाक घोषित कर दिया है, पर आत्या को उस भुतहा होते घर से जाने क्या लगाव है। कहती हैं, ''मरूँगी तो यहीं। इसी के मलबे में दब कर।''

विचारों में मग्न मैं दरवाजे पर पहुँच गई। दरवाजे पर अभी भी बड़ी कुंडी ही लगी है। मैं उसे किसी मन्दिर के घण्टे की तरह पकड़ कर बजाती हूँ।

थोड़ी देर में आत्या ने दरवाजा खोला तो पूरे वातावरण में अजीब-सी नीरवता फैल गई। पूरे घर में जैसे आत्या की आत्मा की परछाइयाँ फैली हुई हैं। दोपहर के ढलते-ढलते शाम फैलने लगी थी। वे गर्दन उठा ध्यान से देखती हैं, फिर मुस्कराने की कोशिश में एक आत्मीय चमक उनके चेहरे पर फैल जाती है। ''अच्छा तो तू है शालूरानी?''

''आत्या,कैसी हो?'' कहते हुए मैं लिपट जाती हूँ।

''अच्छा तो पद्मा अस्पताल गई क्या?'' वे पूछती हैं।

''हाँ, उसे तो बेटा हुआ है तीन दिन का हो गया।''

''क्या?''

''तुमको नहीं बताया आई या संदीप ने?'' मुझे आश्चर्य हुआ।

''नहीं रे....आता होगा। बता देगा। अब मैं उसकी बात नहीं मान रही न...इसलिए नाराज है वह।''

''कौन-सी बात?''

''यही फ्लैट में उनके साथ रहने की।''

''पर आत्या, यहाँ तुम्हें डर नहीं लगता? इतना बड़ा खाली घर। आज गिरा या कल....कैसे अकेली रहती हो! मान लो ना संदीप की बात।''

''नहीं रे शालू...तू भी यही चाहती है कि मैं अपने अतीत से अलग हो जाऊँ? मेरे पास भविष्य तो है नहीं, वर्तमान में ऐसा कुछ नया नहीं जिसके सहारे जिन्दा रहा जा सके। हाँ, यादों से भरा अतीत है जिसके सहारे मैंने जिन्दगी काट ली।''

''आत्या, अब तो संदीप का बेटा है न, वही तुम्हारा भविष्य है। उसके लिए नए घर में रहने चलो।''

''नहीं शालू...मुझे जिन्दा रहने के लिए अब किसी नई रोशनी की जरूरत नहीं है। अतीत की परछाइयों के साथ मैं यहीं रहना चाहती हूँ। नए घर में जाने पर मेरा अतीत यहीं छूट जाएगा। मेरे बाद उन्हें वैसे भी कौन याद करेगा! और एक दिन मैंने भी अपने विगत में मिल जाना है। पिण्डदान करते वक्त पितरों से पिण्ड मिलाया जाता है न, बस मैं वही कर रही हूँ। जीते-जी अपने को उन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पितरों से अलग नहीं कर रही। सोते-बैठते वे मुझे यहाँ महसूस होते हैं। कभी मुझे लगता है, बाबा वहाँ कुर्सी पर बैठ कैसे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। कभी लगता है, काका पास की खिड़की से आवाज दे रहे हैं-''रुक्मी तेरी आई से पूछ क्या सब्जी बनी है।''

''आत्या, बस करो...'' मैं रो पड़ी थी।

''जानती है, शालू सीढ़ियों से चढ़ कर आते हुए हेमन्त की चप्पलों की आवाज तक सुनाई देती है मुझे।'' आत्या भावुक हो आई थी।

''आत्या बड़ी भूख लगी है क्या बनाया है तुमने?'' मैं वातावरण को बदलने के उद्देश्य से पूछती हूँ।

''हाँ, हाँ, चल हाथ धो। पटा डाल। मैं गरम करती हूँ, पातलभाजी और ज्वार की रोटी बनाई है।'' आत्या रोना भूल जाती हैं। घी नहीं होगा घर में इसलिए रोटी रूखी ही थी। आत्या को रोटी थाली में रखने में संकोच हो रहा था। मैंने परिस्थिति सँभालते हुए कहा, ''आजकल रोटी में घी डॉक्टर मना करता है। हमारे यहाँ सब रूखी रोटी खा रहे हैं। तुम घी मत लगाना रोटी में।''

''अच्छा, अच्छा।''

प्यार भरी उन ज्वार की रोटियों में गजब का स्वाद था। रात में मैं आई के पास घर गई थी। ग्यारह बजे होंगे। हवा तेज चल रही थी। लग रहा था, बस मानसून आने ही वाला है। थोड़ी देर हुई थी कि कुछ भरभराने की आवाज सुनाई दी। एकदम चिल्लाते हुए मैं उठी और खिड़की से देखा, हमारा वह पुश्तैनी घर ताश के पत्तों के महल की तरह पसर रहा था। मैं साड़ी कमर में खोंसते हुए दौड़ी, ''आत्या, आई, आईग् आत्या वहीं हैं, घर गिर पड़ा।''

मेरे पीछे आई भी बाहर तक आ गई, पर मैं सुध-बुध भूल आत्या-आत्या करती पहुँच गई। ओसारे में आत्या वहीं खंभे के पास सिमटी हुई सो रही थीं। मैंने खींचते हुए आत्या को बाहर निकाला, आसपास के फ्लैट से भी लोग आ गए थे। आत्या जैसे नींद में थीं। वे विश्वास नहीं कर पा रही थीं कि एक हिस्सा गिर गया और उन्हें नींद में भनक तक नहीं मिली।

उस रात आत्या मेरे साथ संदीप के फ्लैट में आ गईं। आई ने दूध गरम कर आत्या को दिया। वे रोए जा रही थीं, ''शालू। आज सब कुछ खत्म हो गया इस मलबे को देख-देख कर मैं जी नहीं पाऊँगी।'' वे खिड़की में खड़ी हो देख रही थीं फिर देखते ही देखते ओसारे का छज्जा भी भरभराकर धराशायी हो गया।

आत्या को मैं पलंग पर ले गई।

''आत्या आज शाम से एक प्रश्न मन में कौंध रहा है, पूछना चाहती हूँ।'' वे देखने लगीं।

''आत्या, तुमने शादी क्यों नहीं की?''

आत्या ने अपने घुटनों पर हाथ रखा, फिर उठ कर खिड़की के पास चली गई। कुछ देर चुप रह कर बोलीं, ''शादी होती तो बच्चे होते। संपत्ति वंश से बाहर चली जाती, इसीलिए।''

''तो क्या फर्क पड़ता उससे?''

''तुझे नहीं, तेरे आई-बाबा को तो फर्क पड़ सकता था ना।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''तो क्या आई-बाबा ने....?''

''नहीं रे, भाग्य ने किया मेरे साथ।''

मैं अविश्वास से परेशान हो उठी और आत्या के पास आ गई। आत्या के कन्धे पर विश्वास का हाथ रखा तो वह रो पड़ीं, ''शालू...''

''हाँ आत्या, मैं आपके साथ हूँ। कह डालो! अपने अन्दर के दर्द को अपनी पीड़ा को रोक रखा है तुमने। अब बहा दो, कब तक रोकोगी दर्द के सैलाब को?''

आत्या पर हुआ कोई पारिवारिक अत्याचार या उपेक्षा ही उनके अकेलेपन का उद्‌गम बिन्दु है। जड़बद्ध मूल परंपरागत चुप्पी के संस्कारों पर करारे प्रहार की ज़रूरत थी। खानदान की इज्जत के नाम पर वर्जनामूलक व्यवस्था में बने कायदे और बेटियों की आचार-संहिता की अभेद्य दीवार-तले ही ऐसे संस्कार जीवन को सड़ाते हैं। मुझे लगा शायद आत्या के शब्दों के साथ बहुरूपी सामाजिक यथार्थ का वीभत्स रूप आज सामने आने वाला है। यह परिवारों और सम्बन्धों में व्याप्त खोखलेपन का ही प्रमाण सिद्ध होगा। मुझे एक अगली पीढ़ी की बेटी होने के नाते पिछली पीढ़ी की बेटी के पीड़ादायी अकेलेपन को जानना तो चाहिए ही। मैंने आत्या की पीठ पर हिम्मत का हाथ रखा।

''शालू, तू मुझे गलत मत समझना।''

''नहीं आत्या, हम दोनों इसी खानदान की बेटियाँ हैं। मात्र पीढ़ियों का अन्तर है तो क्या हुआ, दिल और भावनाएँ तो एक-सी ही हैं न।''

''मैंने तुझसे कहा था न, मुझे सीढ़ियों पर हेमन्त के चढ़ने की आवाज आज भी सुनाई देती है।''

''हाँ, पर हेमन्त कौन है, आत्या?''

''हेमन्त वही है जिससे कुमुदिनी की शादी हुई थी।''

''क्या? पूनेवाले आतोबा?''

''हाँ शालू, मैं और हेमन्त एक-दूसरे से बहुत प्यार करते थे। हेमन्त अंग्रेजी पढ़ने मेरे बाबा के पास आते थे। वे इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे थे और उन्हें विलायत जाना था। बाबा को भी पता था, हम एक-दूसरे को पसन्द करते हैं।

''हम एक-दूसरे पर एक दिन इसी ओसारे में समर्पित हो गए थे... प्यार का अथाह सागर था हेमन्त के पास। मैं आज भी ओसारे के खंभे के पास हेमन्त के उस सामीप्य को याद करती, महसूस करती रही हूँ। बस वही एक पल मेरे जीवन का सुख था। छोटी काकी जानती थीं कि हम प्यार करते हैं। फिर भी उसने जब देखा हेमन्त विलायत से पढ़ कर लौटने वाला है, इतना अच्छा वर वे कुमुदिनी के लिए कहाँ ढूँढ पातीं। बस तब हेमन्त के पिता दीवान साहब को बताया कि हेमन्त को हमारे परिवार की लड़की पसन्द है और दीवान साहब ने वचन दे दिया कुमुदिनी के लिए हेमन्त से विवाह का। हेमन्त ने केवल हमारे खानदान का नाम फोन पर सुना था और पिता से हाँ कही थी। मेरे बाबा इस सदमे से चल बसे, हेमन्त का ब्याह कुमुदिनी से हो गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''मैं अभिशप्त रह गई इस खण्डहर की तरह यहीं भटकने के लिए। हेमन्त जब बारात लेकर गए तो फिर कभी इस घर की देहरी नहीं चढ़े। हाँ, पति का दायित्व निभाया कुमुदिनी को दो बेटे देकर। तेरे आई-बाबा मेरा साथ दे सकते थे, पर भाई से झगड़ा कौन ले, फिर मेरे बाद मेरे बाबा के हिस्से की यह प्रॉपर्टी तेरे भाई संदीप को ही तो मिलेगी, शायद यह विचार भी रहा हो मन में... जो भी हो, पारिवारिक शतरंज पर मैं एक पिटी हुई गोट रही और मेरे बाबा हारे हुए जुआरी।''

आई जाने कब से दरवाजे पर खड़ी थीं। चल कर आत्या के पास आ गईं, ''रुक्मिणी ताई, तुमने मुझे गलत समझा।''

''छोड़ो आई, सब गलत थे आत्या के मामले में।'' मुझे गुस्सा आ रहा था।

''नहीं शालू... दरअसल हेमन्त की शादी में मैं चुप इसलिए थी कि मैं चाहती थी कि रुक्मिणी का रिश्ता अपने गरीब भाई से करवा दूँगी, बस यही गलती हुई। रुक्मिणी ने तो भीष्म-प्रतिज्ञा ले ली थी अविवाहित रहने की।''

आई और आत्या लिपट कर रो पड़ीं और मैं भीष्म-प्रतिज्ञा के साक्षी रहे उस ओसारे के भरभरा कर गिरे मलबे को देख रही थी जिसके नीचे कितना कुछ दबा। 'मन और इन्द्रियों को जीतने वाला, आसक्तिरहित बुद्धि वाला मनुष्य, जिसे कोई स्पृहा नहीं है वह, ज्ञानयोग द्वारा कर्म करते हुए भी कर्मबंधन से मुक्त होता है।'

ई एन-1/2 चार इमली, भोपाल (म.प्र.)

मोबा.- 9424011334

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कहानी

अपने-अपने हिस्से का कबाड़

-निरुपम

यह यार्न मिल अब शहर के बहुत करीब आ गयी है या यों कहो कि शहर इस मिल के पास चला आया है। पहले यह मिल शहर की खास चीजों में शुमार होती थी, लोगों को रोजगार मुहैय्या कराती थी, शहर के लिए गौरव की बात थी पर बीमार होकर कुछ दिन मजदूर आंदोलनों से घिरी रही। अंत में बंद हो गयी। कई घर बेरोजगार हो गये, कई आत्महत्यायें हुईं। सबसे पहले बड़े अफसरान नई नौकरी मिलते मिल छोड़ कर चले गये। मजदूर, कर्मचारी आन्दोलन, धरना, प्रदर्शन करके थक गये और बकाया सैलरी की उम्मीद और आगे के रोजगार की आशा छोड़ कर, अपनी रोजी-रोटी तलाशने कहीं चले गये।

मिल अब वीरान है सुनसान मिल के बाहर बस चौकीदार रहता है। मिल क्यों बंद हुई किसी को पता नहीं। अफवाहें बस अफवाहें हैं। कहते हैं कुमार ग्रुप का दीवाला निकल गया। कोई कहता है मजदूरों की दादागीरी और मैनेजमेन्ट की नाकामी से मिल बंद हुई है। कारण जो भी हो शहर का गौरव बढ़ाने वाली, शहर की पहचान मानी जाने वाली मिल, अब एक वीरान इमारत की शक्ल ले चुकी है।

शुरू में कुछ कर्मचारी मिल के अंदर बने आवासों में बकाया राशि पाने की जिद में रहते थे पर बिजली के भारी बकाया की वजह से मिल की बिजली कट गई। बिजली कटते ही पानी की व्यवस्था भी ठप्प हो गई। कुछ लोग कहते हैं मिल मालिकों ने साजिश करके बिजली कटवा दी है ताकि कर्मचारी आवास छोड़ कर भाग जायें। अफवाह यह भी है कि जमीन लीज की है और सरकार इस जमीन को आवासीय क्षेत्र में तब्दील कर अपने लोगों को सस्ते में बाँटना चाहती है। मिल का जो भी हो कुल मिला कर यह मिल मजदूरों को अधर में छोड़कर बंद हो गई है।

वर्षा, दिन-रात की चहल पहल, शोर शराबे में डूबे इलाके की वीरानी, भयानक हो गयी है। दूर से बदरंग दीवारें, जंग लगे लोहे की संरचनायें, झाड़-झाड़ियाँ इस वीरानी की भयावहता को और बढ़ाती हैं। रात को तो ये मंजर और खौफनाक लगता है। मिल के बाहर इस वीराने के गार्ड रूम में बत्ती जलती रहती है और चौकीदार बैठा ऊँघता रहता है। ना कोई आने वाला, ना कोई जाने वाला, बस समय काटने के लिए चौकीदार बीड़ी फूँकता है, सड़क से गुजरते वाहनों को देखता रहता है। जब फैक्टरी चालू थी तो आसपास तमाम छोटी-छोटी दुकानें थीं। अब महज एक चाय का टपरा बचा है, जो शाम को बंद हो जाता है।

रात को फैक्टरी में अंदर जाने की हिम्मत चौकीदार की भी नहीं होती है। फैक्टरी के अंदर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कई बार रात को खटपट की आवाजें आती हैं पर चौकीदार की हिम्मत नहीं है कि वह मिल के अंदर जाये। चौकीदार तो बस सुबह होने की प्रतीक्षा करता है।

फैक्टरी के अंदर रात के वीराने में वह बिजली के तार और धातुओं के टुकड़े एकत्र करने में लगा है। इतनी रात को यहाँ पुलिस आयेगी इसका डर नहीं है फिर भी चोरी करते समय वह डरा और चौकन्ना है। मिल में अब कुछ बचा नहीं है पर बिजली की फिटिंग, इंटरनल फिटिंग का बहुत सा छोटा-मोटा सामान है। वह महीनों से मिल में सामानों की खोजबीन करता आ रहा है। हर रात मिल की पिछ्ली दीवार फाँदकर आना और खोजबीन कर थोड़ा बहुत पीतल, ताँबा और एल्यूमीनियम का सामान इस बिल्डिंग के विभिन्न स्थानों से तलाश कर जमा करना उसका रोजगार हो गया था इससे उसका दिन भर का खर्च निकल जाता है।

मजदूरों-मालिकों का विवाद चल रहा है। फैक्टरी में कहने को बाहर ताला लगा है पर मालिक ने रातों-रात सारा कीमती सामान यहाँ से हटा लिया है। उसने रात में कई बार ट्रकों को आते जाते देखा है। वह तो इस बिल्डिंग से बरसों से परिचित है। जब भी खतरा देखता है किसी अंधेरे सुरक्षित स्थल पर छिप जाता है उसे क्या करना सामान मालिक ले जाये या कोई और ले जाये उसे तो बस अपने काम से काम है।

बिल्डिंग बहुत बड़ी है वह धीरे-धीरे एक-एक हिस्से की सर्च करता रहा है, अभी भी बहुत सा हिस्सा बचा है। लगता है अगर बिल्डिंग ऐसी ही वीरान रही तो चार छः महीने उसकी रोजी-रोटी चल जायेगी। काम बोरियत भरा है, खतरे और मेहनत का भी पर उसकी जिंदगी इस दिशा में कुछ मजदूरी और कुछ जिद की वजह से आयी है। इस फैक्ट्री में काम करते-करते अचानक बेरोजगार हो जाने के बाद, जोखिम उठाने की हिम्मत उसमें ना जाने कहाँ से आ गयी। उसके बहुत से बकाया राशि का हिसाब मिल ने नहीं किया है, ना उम्मीद है। लेवर कोर्ट का मामला जाने कब निबटे वह अपने तरीके से गुस्सा निकाल रहा है, अपनी राशि वसूल रहा है। वह जानता है कि वह गलत काम कर रहा है, पर वह अपने तर्क गढ़ कर अपनी नैतिकता को बचाये है।

थैले के वजन का अंदाज उसने किया, ठीक था ज्यादा भारी उठाना फिर उसे लेकर बाउन्ड्री पर चढ़ना मुश्किल होता है। बाहर ना कुछ दिख रहा है ना किसी के होने की उम्मीद है फिर भी उसने बाहर किसी के होने की आशंका को टटोला, आहट ली और अभ्यस्त कदमों के भरोसे अंधेरे में रास्ते पर अंदाज से धीरे-धीरे चल दिया।

दीवार पर चढ़ते समय उसे लगा कि आवासीय क्षेत्र में किसी मकान में हल्की सी रोशनी है। वह कभी आवासीय क्षेत्र में नहीं गया, उसकी जिज्ञासा विस्तार ले रही थी, पर उसे इस समय वहाँ जाना असुरक्षित लग रहा था। वह दीवार से दूसरी तरफ कूद गया।

आज की रात भी अंधेरा था। एक थैला और अपने औजार लेकर वह मिल के अंदर कूदा। अभी तक उसके दिमाग में कल जागी जिज्ञासा कुलबुला रही थी। उसने झोला दीवाल के पास सुरक्षित रखा और अंधेरे में आवासीय इलाके में कल के प्रकाश को तलाशने लगा। अंधेरे में हल्का से हल्का प्रकाश भी सुगमता से दिखता है। वह उस प्रकाश का पीछा करता हुआ बढ़ने लगा। वह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इस तरफ कभी नहीं आया था इसलिए अंधेरे में बड़ी सावधानी से चल रहा था। कई बार उलझते टकराते, वह उस इमारत तक पहुँच गया जहाँ वह हल्का प्रकाश आ रहा था। उसने मकान के पास दबे पाँव आवाज तक पहुँचने की कोशिश की। मकान के अंदर की आहट लेने की कोशिश की। ऐसा लग रहा था कि अंदर कोई है।

वह जायजा ले रहा था तभी उसे पीछे से किसी ने दबोच लिया। यह इतना अप्रत्याशित था कि घबरा गया। अंधेरे में कुछ भी देख पाना सम्भव नहीं था। उसने घबरा कर कहा – ''भाई तुम कौन हो ?''

''पहले तुम बताओ, तुम कौन हो और यहाँ क्या कर रहे हो ?''

''मेरा नाम चंद्रशेखर है, मैं इसी मिल का बेरोजगार हो चुका मजदूर हूँ।''

''पर यहाँ क्या कर रहे हो ?''

मैं बताता हूँ, पहले मुझे छोड़ो। हाँ, ये जरूर है कि तुम्हें नुकसान पहुँचाने के इरादे से नहीं आया हूँ। मैं तो यह देख कर आ गया कि इस उजाड़ बस्ती में यह प्रकाश कैसा है।''

''ठीक है, घर के अंदर आ जाओ।''

वह शख्स शायद वहाँ के भूगोल का अभ्यस्त था। वह उसे अपने अंदाजे से घर के अंदर ले गया। अंदर हल्के प्रकाश में दोनों ने एक-दूसरे का चेहरा देखा। कमरे में अंदर एक मात्र दरी बिछी थी, दोनों बैठ गये। उसे पहले की अपेक्षा निश्चिन्तता महसूस हो रही थी पर वह अभी भी आशंकित था।

''मैंने अपना परिचय दे दिया। आपका परिचय जानना चाहता हूँ।''

''तुम यहाँ किस लिए आये हो पहले यह बताओ।''

''मैं यहाँ तुम्हें नुकसान पहुँचाने नहीं आया। सिर्फ प्रकाश देख कर जिज्ञासावश आ गया हूँ यदि तुम आश्वस्त करो कि मुझे नुकसान नहीं पहुँचाओगे तो मैं तुम्हें सब बता दूँगा।

वह शख्स ठंडी सांस भरते हुए बोला- ''मैं तुम्हें क्या नुकसान पहुँचा सकता हूँ?''

''खैर मुझे लगता है इस इलाके में दोनों घुसपैठिये हैं और दोनों एक-दूसरे से डरे हैं।''

''तुमने सच कहा।''

''इस वीरान इलाके में तुम क्या कर रहे हो?''

वह शख्स फिर बोला-पहले अपना मकसद बताओ।

''मैं अब काफी आश्वस्त हो गया हूँ। मैं बता चुका हूँ मैं इस मिल का पूर्व कर्मचारी हूँ रोजगार हूँ। मेरा बहुत सा बकाया मिल ने नहीं चुकाया है। मिल के कबाड़ से अपना हिस्सा लेकर उसकी भरपाई कर रहा हूँ। अब तुम अगर अपना परिचय दो तो हम आगे बात कर सकते हैं, नहीं तो मैं चला जाऊँगा।'' वह शख्स भी अब तक खतरों की आशंका से उबर चुका था ''उसने कहा मेरा नाम रामेश्वर है। मैं भी तुम्हारी ही तरह अपने हिस्से की तलाश कर रहा हूँ।'' वह शख्स इतना कह कर चुप हो गया। उसने भी चुप्पी साध कर उस शख्स को आगे बोलने का न्यौता दिया। वह शख्स जैसे अभी भी बोलने की मुद्रा में नहीं दिख रहा तो आतुरता में उसने प्रश्न किया-''तुम भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्या मेरी तरह ही........?''

''बहुत कुछ, पर मेरे पास ये सब करने का कोई जायज कारण नहीं है। मैं सोच रहा था कि मैं कोई नैतिक आधार खोज लूँ फिर तुम्हें बताऊँ।''

उसे लगा कि सामने वाले शख्स ने उस पर व्यंग्य किया है पर वह चुप रहा और अपने अंदर को टटोलने लगा।

अपनी दुविधा से बाहर निकलते ही उस शख्स ने कहा – मैं बगल के शहर का रहने वाला हूँ। चोरी मेरा शौक और पेशा था। क्यों था ये बता कर ना मैं अपने लिए सहानुभूति बटोरना चाहता हूँ ना अपनी गल्तियों को जायज ठहराना चाहता हूँ। शहर में पुलिस ने मेरी हिस्ट्रीशीट खोल दी। मुझसे हर चोरी के केस में पूछताछ होने लगी। जो चोरी मैंने नहीं की कई बार उसमें भी मुझे मुल्जिम बना दिया गया। मैं वहाँ से भाग आया, छिपने का ठिकाना खोजते यहाँ आ गया। कई महीनों से यह जगह मेरी शरण स्थली है।''

''पर यहाँ...........?''

''यहाँ भी मेरी रोजी-रोटी वही है। तुम्हारी तरह मैं भी यहाँ से अपने हिस्से का कबाड़ ले जाकर बेचता हूँ।''

''खैर तुम्हारी साफगोई व ईमानदारी मुझे अच्छी लगी। मैंने तुमसे जो कहा वह स्वयं को जस्टीफाइड करने या सहानुभूति पाने के लिए नहीं कहा। जो सच था ईमानदारी से कहा है, कोई मुलम्मा नहीं चढ़ाया है।'' वह जैसे सफाई देने की स्थिति में आ गया था।

''अगर मेरी बात चुभी हो तो क्षमा चाहता हूँ।''

''नहीं, ऐसा कुछ नहीं है।''

उसे जाने क्यों लगा सामने वाला व्यक्ति ज्यादा सहज है उसकी तरह बेचैन नहीं है। वह उस शख्स से जैसे और बात करने से कतरा रहा था उसने कहा – ''अच्छा आज चलता हूँ मुझे अपना काम भी तो करना है फिर कल मुलाकात होगी।''

वह बाहर निकल कर अंधेरा में गुम हो गया।

आज उसे मकान तक पहुंचने में कल की अपेक्षा कम दिक्कत हुई, कल का अनुभव काम आया। अंदर कमरे में एक कल की तरह हल्की रोशनी थी पर वह शख्स नजर नहीं आया। उस शख्स का ना मिलना शंकायें पैदा कर रहा था और वह बेचैन होने लगा। उसे एक पल के लिए तो लगा कि आज बिना अपना काम करके तुरंत यहाँ से भाग जाये। थोड़ी देर बाद वह शख्स लौटा तो उसे राहत महसूस हुई।

''कहाँ चले गये थे ?''

''बस फैक्टरी के गेट तक चौकीदार से मिलने।''

''चौकीदार तुम्हारे बारे में जानता है ?''

''हां, वही तो रोज मेरी छोटी-मोटी चीजें ले जाकर बाजार में बेचता है और मेरे लिए खाने की कुछ चीजों का भी इंतजाम करता है।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''मैं तो हमेशा चौकीदार से डरता रहा, दरअसल वो मुझे पहचानता है।''

सच है, हम एक-दूसरे को अपना असली चेहरा दिखाने से डरते है।''

''शायद सच है।''

''पर अब फैक्टरी बिकने वाली है, तुम कब तक यहाँ रह पाओगे?''

''मैं भी ज्यादा दिन यहाँ नहीं रहूंगा। मैं तो वास्तव में यहाँ का बिकने लायक सामान इकट्ठा कर रहा हूँ, बस उसे बेच कर कहीं दूर निकल लूंगा।''

''आगे क्या करोगे।''

इतना ज्यादा में जिंदगी के बारे में नहीं सोचता, कुछ नहीं तो अपना वही पुराना काम किसी नये शहर में पर तुम क्या करोगे ?''

''सोचा नहीं पर मैं भी तुम्हारी तरह किसी नये शहर में अपना वही पुराना काम करूंगा।''

''यही जो कर रहे हो।''

''नहीं जो करता था।''

''इस काम में क्या बुराई है ?''

वह कहना चाहता था कि यह काम उसका पेशा या शौक नहीं है, वह तो यह काम बस मजबूरी में कर रहा है पर उसने कहा नहीं। उसे इस बात की पूरी आशंका थी कि उसका तर्क सुन कर सामने वाला शख्स उसे अपने धारदार व्यंग्य से आहत कर देगा।

''तुम चाहो तो हम साथ यहाँ का सामान इकट्ठा कर सकते हैं, तुम उसमें से अपना हिस्सा ले लेना।

वह जैसे असहमत होने की स्थिति में नहीं था। उसने कहा - ''मैं तो उधर की बिल्डिंग के चप्पे-चप्पे में घूम चुका हूँ, अब कबाड़ बहुत कम बचा है।''

फैक्टरी के हिस्से का बड़ा कबाड़ मशीनरी वगैरह तो मिल के मालिक ही ने यहाँ के बड़े अधिकारियों के साथ मिल कर चोरी से निकलवा लिया है। छोटा मोटा यहाँ के कर्मचारी ले गये होंगे। वहाँ जो बचा है वह अधिकतर अंडर ग्राउण्ड फिटिंग या ऊपरी भागों के हिस्सों पर तार या पाइप की फिटिंग के रूप में बचा है।''

''तुम वहाँ गये हो ?''

''हाँ मैंने पूरी बिल्डिंग का मुआयना कर लिया है, कुछ जानकारी चौकीदार से भी मिल गई है। जब मिल से मशीनरी निकलवाई गई तो बड़े हिस्से में से छोटा हिस्सा चौकीदार को मिला था। आवासीय इलाके में बहुत दिन तक लोग रहे थे वे अचानक पानी-बिजली की समस्या से भागे थे, अतः मकानों का सामान लम्बे समय तक सुरक्षित रहा है। हाँ भागने वाले अपने हिस्से का सामान जरूर ले गये।''

.... उसने कोई उत्तर नहीं दिया। उल्टे पूछा - कितना कबाड़ होगा ?''

एक ट्रक। अधिकतर लोहे का सामान है कुछ कॉपर और एल्यूमीनियम भी है। छोटा-छोटा सामान जो कुछ कीमत रखता था मैं इतने दिनों में बेच चुका हूँ।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''इतना सामान बेचोगे कहाँ ?''

''तुम कहाँ बेचते हो?''

''मेरे मोहल्ले में कबाड़ लोग खरीदने आते, मैं तो एक झोले में कबाड़ ले जाता हूँ, आसानी से बिक जाता है।''

''कबाड़ का धंधा कितना अच्छा है। कबाड़ी कभी नहीं पूछता यह सामान कहाँ से आया, वह स्वामित्व पर कभी प्रश्न नहीं करता, वह तो खरीदता है चल देता है। उसके कबाड़खाने में भी शायद कभी कोई किसी प्रकार का प्रश्न नहीं उठाता है। ना सामान की पहचान होती है ना सामान के मालिक की। कबाड़ वाले कबाड़ी, तुम्हें मालूम है ये कबाड़िये कबाड़ से सोना कमाते हैं। जितना बड़ा कबाड़ी होगा कबाड़ में उसका हिस्सा उतना ही ज्यादा होगा। खैर, तुम्हें मालूम नहीं होगा, तुम तो इस काम को मजबूरी की तरह करते हो। मैं हर काम व्यवसाय की तरह करता हूँ अतः मैं तो उसके सारे घर घाट जानने की कोशिश करता हूँ।''

इस तीखे व्यंग्य से आहत होने के बाद भी उसने इसे नजरअंदाज कर दिया।

''सामान कहाँ से निकालना है ?''

''जो सामान मैं हाथ में निकाल सकता था निकाल लिया। अब तो सामान्य औजारों की जरूरत होगी। मैं चौकीदार की मदद माँगता पर इत्तेफाक से तुम मिल गये।''

चलो कल से शुरू करते हैं।''

''हाँ, सुबह चार-पांच बजे आ जाओ यह काम रात के अंधेरे में नहीं होगा। सुबह के हल्के उजाले और सन्नाटे में रात से कम सुरक्षा नहीं होती है।''

दूसरे दिन से दोनों का काम शुरू हो गया। वह देख कर आश्चर्य चकित हो गया कि उस शख्स ने पाइप, बिजली के तार, नल की टोटियाँ ऐसा ही जाने कितना कबाड़ एकत्र कर रखा है। दो दिन के परिश्रम में दोनों ने मिल कर पाइप, एंगल और बिजली के तार निकाल डाले। सच में जमा सामान एक ट्रक भर तो हो गया था।

सामान जमा होने के बाद उस व्यक्ति ने कहा - ''आज चलो कबाड़ी और चौकीदार से बात कर लेते हैं।''

''चौकीदार के पास मैं नहीं जाऊँगा, तुम्हें बताया कि वह मुझे जानता है।''

''तुम चौकीदार के बारे में और चौकीदार तुम्हारे बारे में सब जानते हैं फिर भी पर्दादारी? है ना अजीब, खैर, मेरे पास कोई नैतिकता का पर्दा नहीं है, जिसके पीछे मैं अपनी असली चेहरा छिपाना चाहूँ।''

बात कड़वी थी पर उसे पचानी पड़ी। उसने बलात् हँसते हुए कहा - ''तुम जो भी कहो पर यह काम तुम कर लो, कबाड़ी के पास मैं चल सकता हूँ पर बात तुम्हें करनी पड़ेगी।''

वह हँसा, उसकी हँसी ने वह सब कह दिया जो उस शख्स द्वारा इस मौके पर कहना अप्रत्याशित लग रहा था। पर वह जैसे अपने इस आधार पर कायम रहना चाहता था कि ये सारा कार्य वह विवशता में कर रहा है, उसकी आत्मा, जमीर अभी भी जिंदा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कबाड़ी के संसार में पहुँच कर उसे आश्चर्य हुआ। शहर से दूर एक खुले स्थान पर दीवारों से घिरा उसका गोदाम था। खुले में विभिन्न बेतरतीब ढेरों में सामान रखा था। लोहे, प्लास्टिक, पीतल, एल्यूमीनियम आदि के सामान विभिन्न अलग-अलग ढेरों में रखे गये थे। आदमी की रोजमर्रा के उपयोग से जुड़ा सामान बदरंग और टूटी-फूटी स्थिति में भरा पड़ा था। उसे लगा आदमी कितना उपयोगितावादी है, जो भी चीज उसके लिए अनुपयोगी हो जाती है उसे वह जीवन से निकाल देता है। सामान क्या शायद रिश्ते भी अनुपयोगी होते ही आदमी अपने जीवन से निकाल देता है।

वह बड़े-बड़े ढ़ेरों के बीच खड़ा अनावश्यक सामानों का मुआयना करता रहा, तभी दूसरे शख्स ने कहा - ''चलो कबाड़ी से बात कर लेते हैं।''

''तुम जाओ मैं थोड़ी देर से आता हूँ।''

वह फिर हँसा और चल दिया। उसे इस हँसी पर बहुत खीज उठी। वह अपनी खीज से बाहर निकलने के लिए बेमतलब सामानों को फिर देखने लगा।

थोड़ी देर बाद वह शख्स और कबाड़ी उसके पास आ गये। उसने ऐसे व्यवहार किया जैसे उस शख्स और कबाड़ी के बीच हुई डील से उसका कोई वास्ता नहीं है। उसे लगा कहीं आते ही डील की बात ना शुरू हो जाये इसलिए उसने यों ही कहा - ''आप का काम मेहनत का है।''

''मेहनत का है पर इसमें जो और पहलू जुड़े हैं उन्हें आम आदमी सोच नहीं पाता है, मुझे तो इसमें बहुत आनंद मिलता है।''

''और पहलू ?''

आपने कभी सोचा है कि बेकार हो चुकी चीजों को ना तो आदमी रखना चाहता है ना मोहवश फेंकना चाहता है। हम उन चीजों के सही दाम देकर आदमी को इस दुविधा से मुक्ति दिलाते हैं। आपने कभी नहीं सोचा होगा कि आदमी अपनी कबाड़ से निजात पाकर और उसकी कीमत पाकर कितना खुश होता है। यह धंधा दूसरों को खुश करने का भी है।''

हाँ, मैंने ऐसा पहले कभी नहीं सोचा।''

''इसके अलावा भी आप सोचें कि हम बेकार हो चुकी चीजों को काम लायक बनाने के लिए खरीदते हैं। यदि हम ना खरीदें तो ये बेकार ही रहेंगी। इसके अलावा यह भी सोचो कि इन बदसूरत चीजों को हम खरीद कर उनके पास भेजते हैं जो इन्हें फिर से खूबसूरत बनाते हैं। बदसूरत से खूबसूरत बनाने के काम में हमारी बहुत बड़ी हिस्सेदारी है। आप ने कभी सोचा है बाजार में बहुत सी खूबसूरत चीजें जरूरत की चीजें इन्हीं कबाड़ से बनती हैं।

उसे लग रहा था कि सामने वाला शख्स इन बातों से चिढ़ रहा था। वह बोला - ''चलें''।

''एक मिनट'' - उसे कबाड़ी की बातों में रुचि जाग रही थी। शायद इन बातों से वह और कबाड़ी दोनों अपने कार्यों का एक नैतिक आधार देने में जुटे थे। अपने अपराध बोध के तत्व को सकारात्मक पहलुओं में छिपाने लगे थे। उसने पूछा ''इतना कबाड़ आता कहाँ से है'' प्रश्न पूछ कर उसे लगा कि जैसे वह खुद घिर गया है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर कबाड़ी ने जैसे संभाल लिया - ''कबाड़ हर आदमी पैदा करता है। अगर हम कबाड़ को ठिकाने न लगायें तो शहर कबाड़ से भर जाये। इसके अलावा ये भी सोचिए कि कितने मजबूर यतीम बच्चे बेचारे यहाँ-वहाँ से ये कबाड़ ढूंढ लाते हैं। शहर भी साफ होता है। हम उन्हें पैसे देते हैं उनकी रोजी-रोटी भी चलती है। अब आप ही देखिए हम अपने काम से समाज सेवा भी करते हैं और शहर की सफाई में सहयोग करते हैं ।

यह सब बता कर कबाड़ी जैसे आत्मसंतुष्टि के शिखर पर था। इस धंधे की तारीफ सुनकर वह शख्स अब जैसे पूरी तरह खीज गया था। उस शख्स ने कहा ''मैं बाहर जाकर टपरे पर एक सिगरेट पीता हूँ तुम बातें करके आ जाओ।'' वह शख्स तेजी से चला गया जैसे वह आगे सुनने को तैयार नहीं था।

उसने फिर प्रश्न किया - ''इतना कबाड़ बिकने लगा है।''

''कितनी ही मिलें लोहे, प्लास्टिक जैसी चीजों को गला कर नई चीजें बनाती हैं और अब तो देश नहीं विदेश तक कबाड़ बिकने लगा है।''

''विदेश''।

''हाँ कबाड़ का बड़ा हिस्सा चाईना जाता है। वहाँ से नया सस्ता माल बन कर फिर हमारे बाजार में आ जाता है। कबाड़ से सस्ता माल बनाना, है ना कमाल का, इसीलिए तो चाईना तरक्की कर रहा है।''

कबाड़ी की अर्थनीति सुन कर उसके दिमाग में बहुत सारे प्रश्न थे पर उसे लगा कि अगर वह शख्स नाराज होकर चला गया तो उसका हिस्सा मारा जायेगा। उसने बातों को विराम देकर कबाड़ी को शुक्रिया कहा और उस शख्स के पास तेज कदमों से चल दिया।

उस शख्स ने सिगरेट का धुआँ छोड़ते कहा - ''कबाड़ शास्त्र समझ लिया। यहाँ हर आदमी अपने बदरंग कबाड़ पर बातों का मुलम्मा चढ़ा कर उसे चमकाता रहता है। मुझे तो ऐसी बातों से चिढ़ है।''

उसने कुछ नहीं कहा। दोनों कल सुबह फैक्टरी में मिलना तय करके अपने अपने गन्तव्य पर चल दिये।

सुबह सूरज निकलने से पहले ही हल्की रोशनी और सुनसान में ट्रक लोड होना था। उसके मन में हजार आशंकायें, सवाल, हिचक और डर था। वह सार्वजनिक रूप से सामने नहीं आना चाहता था। अनहोनी घट जाने की दशा में वह विवाद में नहीं पड़ना चाहता था। दूसरी तरफ उसे यह भी डर था कि यदि वह नहीं गया तो कहीं उसका हिस्सा न मारा जाये। वह हर खतरे से दूर रहना चाहता था और अपना हिस्सा भी चाहता था, आखिर उसने भी तो इसमें मेहनत की थी।

वह जानबूझ कर लेट गया और दीवार पार से ट्रक लोड होने की आहट लेता रहा। ट्रक वापिसी की आवाज को टोह मिलते ही वह दीवार पर चढ़ कर अंदर कूद गया।

जाकर देखा तो वह शख्स अंदर कमरे में अपना सामान पैक कर रहा था। उसने सफाई देते हुए कहा - ''आज आँख नहीं खुली इसलिए देर हो गयी।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने कहा - कोई बात नहीं, मैं जानता था कि तुम देर से आओगे।''

''कैसे ?''

''पता नहीं, पर पता था।''

''चौकीदार चला गया ?''

हां अपना हिस्सा लेकर चला गया। सबके अपने-अपने तर्क हैं पर अपना हिस्सा कोई नहीं छोड़ता। ये है तुम्हारा हिस्सा।'' उस शख्स ने रुपये उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा।

बिना गिने उसने रुपये जेब में डाल लिए, हिसाब पूछने की उसकी हिम्मत नहीं हुई। विदा लेकर वह आनन-फानन में दीवार फाँद कर घर की ओर चल पड़ा।

जिला न्यायाधीश

टीकमगढ़-४७२००१ (म.प्र.)

ग्राहकों को सूचना

मुद्रण और कागज की महंगाई के कारण अक्षरा के मूल्य में जनवरी २०१५ से वृद्धि की जा रही है। वार्षिक सदस्यों और एजेन्टों को परिवर्तित दरों से ही शुल्क भेजना होगा। अक्टूबर २०१४ तक जो वार्षिक, द्विवार्षिक, पंचवर्षीय या आजीवन शुल्क भेज चुके हैं उन्हें 'अक्षरा' यथावत भेजी जाती रहेगी। नये ग्राहकों से निम्नानुसार शुल्क भेजने का अनुरोध है:-

एक प्रति	25 रुपये
वार्षिक	150 रुपये
आजीवन	2000 रुपये

हमें विश्वास है कि 'अक्षरा' जैसी वैचारिक और साहित्यिक पत्रिका को आप सभी का सहयोग पूर्ववत मिलता रहेगा।

सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहानी

ढीली होती बुनावट

-शीला मिश्रा

जैसे ही एक धचके के साथ ट्रेन रुकी, मालती की नींद खुल गई। कोई बड़ा स्टेशन था शायद। तभी उसका ध्यान बगल में लेटे गोविंद की तरफ गया, वो तो अपनी जगह पर नहीं था। मालती का दिल बैठ गया। उसने गोविंद-गोविंद चिल्लाना शुरू किया, पर कहीं से कोई प्रतिक्रिया नहीं आई। अलबत्ता जनरल डिब्बे में यहां-वहां लुढ़क कर सो रहे लोग उसकी तरफ गुस्से से देखने लगे। मुनिया जो अभी तक मालती से चिपकी सो रही थी, उसको गोदी में लेकर मालती उठी और गोविंद-गोविंद चिल्लाती हुई उसे पागलों की तरह ढूँढ़ने लगी। फिर जो जगा हुआ दिख जाता उससे गोविंद का हुलिया बता कर उसके बारे में पूछने लगती, पर गोविंद कहीं नहीं मिला। तभी गाड़ी चल दी। रोती-सुबकती मालती मुनिया को चिपकाए गठरी बनी बैठी रही। एक गहरी तीव्र उदासी उसके चेहरे पर छा गई। ट्रेन ने जैसे ही आगे बढ़ना शुरू किया। अनहोनी के डर से मालती का शरीर काँपने लगा। एक अनजाने डर से उसने मुनिया को जोर से भींच कर चिपका लिया। आधे घंटे बाद एक स्टेशन आया, एक पुलिस वाला चढ़ा, वो बड़ी उम्मीद से उसे आवाज देकर बोली-"भैयाजी हमारा बिटवा चोरी चला गया है। जरा ढूँढ़वा दो।" पुलिस वाला शरीफ था। उसके पास ठिठक कर खड़ा हो गया फिर सारी जानकारी लेने लगा-"कहाँ से चोरी गया ?" "कितने साल का था?" "क्या पहने था?" कहाँ से चढ़ी हो?" कहाँ जाना है?" वगैरह वगैरह। मालती बड़ी उम्मीदों के साथ सारे सवालों के जवाब दे रही थी। इस बीच दो स्टेशन और निकल गये। तब तक मुनिया भी जाग गई, मालती ने उसे बिस्किट खाने को दे दिया।

तभी सोनहला गांव आ गया। वो एक हाथ से मुनिया को सँभाले, दूसरे हाथ से अटैची व थैला संभाले जल्दी से दरवाजे की तरफ बढ़ी। आँखों से आँसुओं की धारा तथा मन में एक बेचैनी व डर, कि रमेश को क्या जवाब देगी? दरवाजे पर आते ही रमेश दिख गया। उसने रमेश को थैला व मुनिया को पकड़ाया फिर अटैची लिये उतर गई। "गोविंद कहाँ है?" रमेश आश्चर्य से बोला। "वो तो गुम हो गया" मालती रमेश की आवाज सुन जोर से रोते हुये बोली" अरे गुम, क्या मतलब तुम्हारा" रमेश हक्का-बक्का उसे देखे जा रहा था। भय व गुस्से के मिले-जुले भाव उसके चेहरे पर आ रहे थे। तभी वह पुलिस वाला भी ट्रेन से नीचे उतरा, मालती की हालत देखकर स्वयं रमेश के पास आ गया और उसे पूरी बात बताई। फिर रमेश व मालती को ढ़ाँढस बंधाते हुए बोला-"यहीं स्टेशन के पुलिस सहायता केन्द्र में रपट लिखवा दो, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ। डरने की कोई बात नहीं है।"

उस पुलिस वाले के सहयोग से रमेश ने रेल्वे स्टेशन पर बने पुलिस सहायता केन्द्र में रपट लिखवाई। गोविंद की कोई फ़ोटो तो उनके पास अभी थी नहीं। रमेश ने कहा कि वह शाम को आकर थाने में जमा करा देगा। इस पूरी कार्यवाही के दौरान बेचारी मालती होंठ भींचकर रो रही थी, मानों अपनी असमर्थता के आंसू बहा रही हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रमेश-मालती मुँह लटकाए घर पहुँचे, बड़ा बेटा गोपाल दौड़ कर बाहर आया, मुनिया को गोद में ले लिया। फिर गोविन्द के बारे में पूछने लगा। गोविन्द का नाम सुनते ही रमेश फट पड़ा ''तेरी माँ अपने मायके क्या गई, गोविंद को ही गुमा आई'' फिर मालती को देख कर बोला ''खबरदार जो अब कभी मां-बाबूजी की रट लगाई।'' रमेश का गुस्सा देख कर गोपाल सकपका गया।

अब पूरे परिवार के बीच एक सन्नाटा-सा पसरा रहता। सभी मशीन की तरह बिना बोले अपना-अपना काम करते। मालती बेमन से खाना बनाती। सब थोड़ा-थोड़ा खाना खा कर उठ जाते। इस बीच कोई किसी से बात नहीं करता। जब मुनिया तुतलाती आवाज में गोइन-गोइन कहती तो मालती का कलेजा मुँह को आ जाता। जिस दिन मालती गोविन्द की पसंद की सब्जी बनाती, सारा दिन थाली में खाना सजाये खुद भूखी बैठी रहती। बस एक आस कि गोविन्द जल्दी से दौड़ कर आ जाये और वह अपने हाथ से उसे खाना खिलाये। ''न जाने वो किस हाल में होगा,'' ''कुछ खाने को उसे मिलता होगा कि नहीं-''ये सोच-सोच कर मालती थरथरा-सी जाती। एक माँ अपने कलेजे के टुकड़े को कल्पना में भी भूख से व्याकुल नहीं देख सकती। मालती की उदास आँखें फिर दरवाजे पर टिक जातीं, अपनी संतान को प्यार करने की प्रकृति सुलभ लालसा से।

उधर रमेश रोज स्टेशन जाकर पूछताछ भी करता रहता। गोविन्द की फोटो वह थाने में जमा कर चुका था। कभी-कभी उसका मन करता कि वो पास के गाँव व शहर जाकर गोविन्द को ढूँढे पर मालती की दशा देख कर उसे अकेले छोड़कर जाने की हिम्मत नहीं पड़ती। गोपाल ने स्कूल के बाद बाहर जाकर खेलना बंद कर दिया था। माँ की ऐसी हालत देखकर अपनी पढ़ाई के बाद वह मुनिया को भी संभाल लेता। मालती मंदिर में नियम से सुबह दिया जला कर आती। घर में सभी, अभी भी उम्मीद का दामन थामें हुए थे।

आठ महीने गुजर गये। एक दिन एक हवलदार उनके दरवाजे पर आया और कहने लगा कि ''शहर में एक गिरोह पकड़ाया है, जो बच्चे चुरा कर उनसे भीख मंगवाता है, पूरे दस बच्चे हैं, उसमें एक लड़का तुम्हारा भी है, हमारे साथ चल कर उसकी पहचान कर लो।'' मालती आश्चर्यमिश्रित खुशी से एकटक उसकी तरफ देखती रही जब थोड़ा संभली तो गोपाल से बोली -''जा दौड़कर अपने पापा को बुला ला। मैं तैयारी करती हूं। हम सब चलते हैं गोविंद को लाने।''

वह खुशी के आँसू बहाती जा रही थी और एक थैले में सामान रखती जा रही थी।

रमेश के आते ही सब हवलदार के साथ पुलिस की गाड़ी में शहर की ओर चल दिये। मालती उस पुलिस वाले को मन ही मन धन्यवाद दे रही थी। जो उसकी सहायता कर रहा था। वह रमेश से बोली कि ''पुलिस कितनी अच्छी होती है, न जाने लोग क्यों कहते हैं कि पुलिस कुछ नहीं करती।''

रमेश चुपचाप सुनता रहा। उसकी आँखें आतुर थीं अपने लड़के को देखने के लिये। तभी मालती का ध्यान गोपाल की ओर गया। जो एक हाथ में गोविंद के जूते पकड़ा हुआ था, वह पूछ बैठी-''ये क्यों ले आया?'' वह मासूमियत से बोला-''उसके पास पैर में पहनने के लिये चप्पल, जूते नहीं होंगे, इसलिये मैंने उसके जूते रख लिये।'' मालती सोचने लगी ''केवल दस साल का ही तो है गोपाल, पर अचानक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कितना बड़ा हो गया है। कठिन परिस्थिति बाल मन पर अपना असर छोड़ती ही है।''

जीप एक थाने के बाहर आकर रुकी। रमेश-मालती फुर्ती से नीचे उतरे और लगभग दौड़ते हुए थाने में प्रवेश कर गये। एक बैंच पर चार लड़के बैठे हुए थे। मालती ने दौड़ कर गोविंद को सीने से लगा लिया। रमेश को पुलिस वाले ने रोक कर फाइल में साइन करने को कहा। पीछे से गोपाल दौड़ता हुआ आया और गोविंद से चिपक गया। मुनिया जो ठीक से बोल नहीं पाती थी, गोइन-गोइन कह कर उसके धूल भरे बालों को छू रही थी, हरेक अपने हिसाब से प्यार दर्शा रहा था, गोविंद अपनी मां से चिपका हुआ था। मालती कभी गोविंद का माथा चूमती तो कभी उसके बालों को सहलाती और कभी उसकी बलइयां लेती। खुशी से विभोर मालती कभी गोविन्द को निहारती तो कभी जोर से चिपका लेती। संतान से बिछुड़ने की पीड़ा व मिलने की खुशी सारी माँओं को एक-सी होती है।

सारी कागजी कार्यवाही करने के बाद वे सब थाने से बाहर आये। रमेश बोला कि ''अब गांव के लिये ट्रेन तो शाम को पांच बजे मिलेगी हम लोग स्टेशन पहुंचकर कहीं छाँह में बैठ जाते हैं। मैं खाने के लिए कुछ ले आऊंगा।'' स्टेशन पहुँच कर सबने मुंह-हाथ धोये। रमेश खाना लेने चला गया। मालती मुनिया को थपकी देकर सुलाने लगी। तब गोपाल, गोविंद से पूछने लगा-''क्या करते थे वे लोग तेरे साथ? मारते-पीटते थे क्या?''

''हां, एक-दो बार मारा था। पर जब मैं भीख के सारे पैसे उनको दे देता था, तो वो नहीं मारते थे।'' तभी मालती अचानक बोल उठी-''गोपाल, गोविंद को ज्यादा परेशान न कर। हम घर जाकर बात करेंगे। फिर गोविंद से बोली-आ जा तुझे मुनिया के साथ थपकी देकर सुला देती हूँ।''

नहीं माँ ''कहकर गोविंद गोपाल से और सट कर बैठ गया। गोपाल ने फिर पूछा-''तुझे कुछ खाने को देते थे?''

''बस रात में दो ब्रेड के टुकड़े। दिन भर तो हम यहाँ-वहाँ से मांग कर खा लेते थे।'' फिर थोड़ा गोपाल के और पास आकर बोला ''तुझे पता है जहां बड़े बच्चे पढ़ते हैं मैं वहां जाकर भीख मांगता था। वो सब बहुत अच्छे थे। मुझे बहुत कुछ खाने को देते थे, और जो कांच की बड़ी सी दुकान में पीजा, बर्गर मिलता है न, मैं जब वहां भीख मांगता था, तो दीदी भैया लोग मुझे वो भी खिला देते थे, कभी-कभी आइसक्रीम भी देते थे। बड़ा मजा आता था।''

गोपाल ने बड़े भोलेपन से पूछा-''क्या तुम्हें मेरी, मुनिया की और मां-पापा की याद आती थी ?''

गोविन्द कुछ सोचते हुए बोला-आती थी, जब बहुत तेज भूख लगती थी और खाने के लिये यहाँ-वहाँ भटकना पड़ता था तो मुझे लगता था कि बस जल्दी से कुछ अच्छा खाने को मिल जाये। अभी तुम्हें मालूम नहीं है कि शहर में एक से एक बढ़ कर खाने की अच्छी-अच्छी चीजें मिलती हैं।'' इतना कहते ही गोविन्द की आँखें खुशी से चमक उठीं। गोपाल आँखें फाड़े उसे देखे जा रहा था। वो समझ नहीं पा रहा था कि गोविंद आइसक्रीम, पीजा खा कर खुश है या मां-पापा से मिल कर।

रमेश पूड़ी-सब्जी-समोसे खरीद कर लाया। पूरा परिवार प्रेम से खाने लगा। रमेश बीच बीच में गोविंद के सिर पर प्यार से हाथ फेर देता। छह बजे ट्रेन आई, रमेश-मालती बच्चों को लेकर जनरल बोगी में चढ़ गये। बैठने की जगह नहीं थी। तभी गोविंद गोपाल का हाथ पकड़ कर आगे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025 Grant

बढ़ते हुए बोला कि हम आगे जाकर जगह देखते हैं। फिर जैसे ही ट्रेन चलनी शुरू हुई गोविंद गोपाल से बोला-"पापा से कहना कि अब की बार मुझे ढूंढने नहीं आयें। मुझे अब यहीं अच्छा लगता है।" यह कहकर वह तेजी से कूदते-फांदते दूसरे दरवाजे से नीचे उतर गया। सब कुछ इतना अचानक व फुर्ती से हुआ कि गोपाल भौचक सा उसे जाते हुए देखता रहा, उसके गले से आवाज ही नहीं निकली, शब्द गले में ही अटक गये। आँखें फाड़े वह ये समझने की कोशिश कर रहा था कि उससे दो साल छोटा भाई इन आठ महीने में इतना कैसे बदल गया। जब थोड़ा संभला, तो रमेश मालती के पास आकर हकलाते हुये बोला-"वो वो, गोविन्द-गोविन्द दूसरे दरवाजे से भाग गया, वो यहीं रहना चाहता है। कह रहा था कि-कि अब मुझे मत ढूंढना।"

रमेश व मालती हक्के-बक्के से एक-दूसरे की तरफ देख रहे थे। इतने दिनों की मानसिक यंत्रणा के बाद पुत्र को पाने की खुशी वे अभी ठीक से महसूस भी नहीं कर पाए थे कि.... उन्हें सहसा विश्वास ही नहीं हो रहा था कि उनका बेटा उन्हें छोड़ कर भीख मांगने चला गया। रमेश अपना सिर पकड़ कर बैठ गया। उसे अपने ऊपर क्रोध भी आ रहा था कि उसने गोविन्द को अपने पास जकड़ कर क्यों नहीं रखा? उधर मालती का चेहरा एकदम सफेद पड़ गया, वो जोर-जोर से रोने लगी। वह बड़बड़ाती जा रही थी कि "अपने हाथ का बना खाना भी उसे नहीं खिला पाई। न जाने कब देख पाऊँगी उसको, न जाने कब खिला पाऊँगी उसको।" फिर थक-हारकर उसकी सिसकियों ने बहते आँसुओं में पनाह ले ली।

थोड़ी देर बाद मालती ने बड़ी धीमी आवाज में रमेश से पूछा-"अब हम क्या करेंगे? फिर से पुलिस के पास जायेंगे? न जाने क्यों बार-बार तुम्हारा लड़का भाग जाता है।" 'न जाने क्यों' ये सुनते ही गोपाल सच को समझने की कोशिश करने लगा। उसकी आँखों के आगे कभी गोविन्द का चेहरा आता तो कभी गोविन्द को बताये पीजा-बर्गर-आईसक्रीम अलग-अलग रूपों में दिखाई देने लगे और फिर धीरे-धीरे सभी खाने की चीजें गोविन्द के चेहरे के साथ गड्ड-मड्ड होती हुई गोपाल को दिख रही थीं। वह दुखी तो था ही साथ में आश्चर्यचकित भी कैसे शहर के आकर्षण ने उसके मासूम भाई को अपने मोहपाश में जकड़ लिया।

गोपाल ने धीरे से अपने माँ-पापा की ओर देखा। उसकी उदास, हताश व निराश बैठी हुई माँ मुँह में साड़ी का पल्लू दबाये सिसक रही थी और पापा-उनके चेहरे पर झुंझलाहट, गुस्सा, नारागी, डर व बेबसी के मिले-जुले भाव तेजी से आ रहे थे।

एक माँ की आँसुओं से भीगी हुई ममता बाजारवाद के आगे हार गई। गाँव का सीधा-सादा, निश्छल, गरीब, बेबस परिवार खाली हाथ अपने घर लौट रहा था। ट्रेन की रफ्तार के साथ ही इन तीनों की आँखों से आँसू निःशब्द बहते जा रहे थे और मौन अपनी अनूठी शक्ति से उनका दर्द बयां कर रहा था।

मकान नं. -4, रॉयल रेसीडेन्सी
थाना शाहपुरा के पास, बावडिया कलां
भोपाल 462039 (म.प्र.)
मो. ९९७७६५५५६५

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघुकथा

-नीता श्रीवास्तव

मुद्दतों बाद

शो रूम की बढ़ती भीड़, गहराती शाम और मेरी थकान से बेफिक्र मेरी बिटिया ड्रेस चुनने में लगी थी अपनी फ्रैंड्स के संग। किशोरियों के उत्साह पर अपनी थकान का पानी कैसे फेरती? इसलिए मेरी नजरें खाली कुर्सी तलाश ही रही थीं कि ये शब्द सुनाई दिए- 'इधर बैठ जा बिट्टी।'

देखा तो पालथी मार कर बैठीं... झक्क सफेद बालों वाली वृद्धा, जब तक मैं बैठ न गई। हथेली से गादी थपकाती रहीं... उनकी गर्दन हिलती रही। समझते देर न लगी कि ये इस भव्य शो रूम के मालिक की नानी-दादी है।

'सूट खरीदने आई हो?' यह प्रश्न तो बातचीत शुरू करने की भूमिका थी। फिर तो उन्होंने न मुझे बोलने को मौका दिया और न बोर होने का। कोई टॉपिक नहीं छोड़ा उन्होंने। बहू-बेटियों का ब्यौरा, अपने सोने-जागने की समस्या, पर दादी-पर नानी बन जाने की गौरवगाथा के संग बीच-बीच में मेरी भी जानकारी। और यह सुनते ही कि मेरी सिर्फ एक बेटी ही है तो रूठने का उपक्रम करती मेरा कंधा झकझोर कर बोलीं-एक बेटा तो हो जाने देती, सहारा हो जाता।

फिर दूसरे ही क्षण भूल सुधार करती सी बोल पड़ीं-''चलो भगवान एक बेटी को ही लायक बना दे तो वही दुनिया भर का सहारा बन जाएगी। किस काम का दर्जन भर का कुनबा। अब मुझे ही देख... सारा दिन बैठी रहती हूँ चुपचाप, हैं सब, पर सब अपने में व्यस्त-मस्त फुरसत किसे है मुझसे दो बोल बतियाने की... टुकुर-टुकुर देखती रहती हूँ सबको।''

क्षण भर को चुप हुई फिर मेरी खुली बांहों को जिस शिद्दत से सहलाया, उससे साफ जाहिर था मानों एक अरसे से उन्होंने किसी को छुआ न हो- ''बिना बांहों के ब्लाउज शाम को मत पहना करो, मच्छर काटेंगें।'' माँजी की पनीली आंखों में पीड़ा देखने के बावजूद भी बिटिया के आते ही मुझे उठना ही पड़ा। मेरे थामें हाथों को धीरे से छोड़ती हुई बोलीं'' अच्छा बिटिया... और आना तुम आईं तो साध पूरी हो गई किसी से बोलने बतियाने की, कलेजा ठंडा हो गया आज तो... मुद्दतों बाद।

ममता

''काकी... मुझे बेटा हुआ है... '' मोबाइल पर सद्य:प्रसूता माया खुद बोल रही थी, थी तो खुशखबर, मगर माया का उतावला होकर खुद बताना.... मुझे अजीब सा लगा, यूं लगा जैसे वह कुछ और भी कहना चाह रही थी।

सगी काकी हूँ माया की... मन न माना तो छठी से पहले ही बिना बुलाए ही पहुँच गई उसके ससुराल... बेटी की सुध लेना मेरा भी फर्ज है।

कमरे में एकान्त होते ही मैंने माया से पूछा- 'तू तो बेटा-बेटी में कोई फर्क न मानती थी, फिर क्या हुआ...? अगर बिटिया होती तो... तो क्या तू उसका स्वागत नहीं करती ...? इतनी ही खुश नहीं होती?''

''मत पूछो काकी... गोद भराई के रोज सासू माँ ने एक किस्सा सुनाया था कि हमारे कुल के पूर्वज बेटी पैदा होने पर बहुत बड़ा जलसा मानते थे फिर तीसरे दिन बेटी को माँ का दूध भरपेट पिलवा कर, बालिका को दाई माँ या घर की वृद्धा को सौंप दिया जाता था। वह स्त्री बच्ची के मुँह में मुट्ठी की मुट्ठी शकर भरती जाती थी... साथ में लगातार कहती जाती थी- 'जा बिटिया मुँह मीठा करके जा और जल्दी से अपने भैया को भेज देना ... जा जल्दी जा, काकी... काकी... भगवान की दया से बच गई मेरी बिटिया।''

उफ... सिहर गई मैं, माया की खुशी का राज समझ में आ गया। उसकी सारी खुशी में बेटे के जन्म का तो कहीं जिक्र ही नहीं था, वह तो अपनी उस बिटिया के बच जाने की कल्पना से ही आनन्द विभोर है जो अस्तित्व में भी नहीं आई थी।

माँ की ममता के आगे मैं नतमस्तक हो गई, माया की आंखें प्रसन्नता से झर-झर बह रही थीं... और मेरी आंखें भी।

२९४, देवपुरी कॉलोनी
गुजरखेड़ा, महू ४५३४४१
जिला - इन्दौर (९८९३४०९९१४)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघुकथा

किसी का कौन हुआ उम्र भर, फिर भी...।

-ऋचा शर्मा

सौम्या हर बार की तरह इस बार भी गर्मी की छुट्टियों में बच्चों को लेकर मायके चली गयी थी। जैसे-जैसे बच्चे बड़े हो रहे थे मायके से उसकी दूरियां बढ़ती जा रही थीं। कारण वह समझती थी। जिन बातों को वह आज तक छिपाती थी या नजरअन्दाज करने की कोशिश करती थी वे बातें अब खुल कर बच्चों के सामने आने लगी थीं। बच्चे नासमझ नहीं रह गए थे और वह भी किन-किन बातों पर पर्दा डालती। उसने भी जैसा चल रहा है चलने दो का भाव अपना लिया था।

उस दिन तो सौम्या भी सकते में आ गयी जब भाई ने घर के सामान के लिए दिए पैसों का हिसाब माँगते हुए कहा-सौम्या! मुझे दो ना पैसों का हिसाब। पापा का इन्तजार क्यों कर रही हो। मैं और पापा एक ही तो हैं।

मयंक मासूमियत से बोला- मतलब...? और मेरी मम्मी? वो भी तो नाना-नानी की बेटी हैं। इसी घर की?

सौम्या ने बच्चों के सामने बात बढ़ाना उचित नहीं समझा। बच्चों के मन में रिश्तों को लेकर कड़वाहट नहीं घुलनी चाहिए। सच, जब रिश्ते पूरी गरमाहट के साथ रजाई की तरह बच्चों को अपने में लपेट लेते हैं तो बच्चों की दुनिया ही बदल जाती है। और ऐसा ना होने पर अपनों के प्रति ही अविश्वास का भाव...।

सौम्या ने उस समय तो बात टाल दी लेकिन भाई का वाक्य उसे कचोटता रहा। उसे याद आया वह दिन जब शादी के बाद वह अपने को रोक नहीं सकी और भावुकतावश एक सादे लिफाफे में मुँह दिखाई में मिले रुपए रख कर भाई को भेज दिए थे। भाई के मोह में वह उस दिन यह भी नहीं सोच पाई कि सादे लिफाफे में रख कर रुपये नहीं भेजने चाहिए, मनीआर्डर करना चाहिए था। ऐसा एक लिफाफा तो मिल गया। दूसरा नहीं पहुँचा शायद किसी ने रुपए निकाल लिए होंगे। आज वही भाई उससे पैसों का हिसाब माँग रहा है, वह भी एक एहसास करा के कि तुम अब इस परिवार से अलग हो।

सौम्या ने उस दिन ही यह तय कर लिया था कि वह माता-पिता के लिए ही मायके जाएगी। जब तक वे जीवित हैं तब तक भाई-भाभी की किसी बात पर वह ध्यान ही नहीं देगी। हाँ इतना जरूर था कि अब वह मायके अकेले जाने लगी थी। पति और बच्चों के सामने मायके में अपमान सहना जरा कठिन होता है।

समय किसी के लिए रुकता नहीं। माँ-पापा की मृत्यु के बाद मायके जाना लगभग खत्म हो गया। जब रिश्तों में तरावट नहीं रही तो दीवारों का मोह क्या करना। धीरे-धीरे घर, शहर सब छूट गया। जब पलट कर देखती तो आश्चर्य होता कि जीवन के पच्चीस साल जिस घर में बिताए थे वहीं आज कदम रखना मुश्किल है। उसे फिराक गोरखपुरी का शेर याद आया-

किसी का कौन हुआ यूँ तो उम्र भर, फिर भी।
ये हुस्नो-इश्क तो धोखा है सब मगर, फिर भी।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लड़की को बचपन से ही परायी अमानत कहा गया है। मुझे लगता है कि लड़की कभी परायी होती ही नहीं। लड़की तो माता-पिता से जितना दूर जाती है उनसे उतना अधिक जुड़ती जाती है। मायके को छोड़ कर वह ससुराल में अपने को जोड़ती है। नए सिरे से नए-नए रिश्तों में वह स्वयं को ढालती जाती है। लेकिन...

लेकिन, पर, परंतु जैसे शब्द उसके जीवन से हट नहीं पाते। ससुराल में उसे पति के मुँह से अक्सर यह सुनने को मिल जाता था कि 'ये हम सब भाई-बहनों की बात है तुम बीच में मत पड़ा करो।' इस वाक्य में छिपे भाव को उसने बिना किसी विवाद के स्वीकार कर लिया था। लेकिन उस दिन वह सन्न रह गयी जब उसने ससुरजी को अपने लिए यह कहते सुना-'अरे! सौम्या बहू से क्या पूछना। दूसरे घर की लड़की है वह। हमारे सुख-दुख से उसे क्या लेना-देना। सास ने भी लंबी साँस लेकर मूक सहमति जता दी थी।'

सौम्या अवाक् रह गयी। ससुराल में आकर सत्ताईस वर्ष होने को आए। सुख-दुख के कितने पल उसने ससुराल में एक साथ बिताए, अपनी सारी जिम्मेदारियां निभाई फिर भी...? मायके में तो लड़की को बचपन से ही परायी अमानत कहा गया। भाई ने एक वाक्य में एहसास करा दिया था-'वह और पापा एक परिवार के हैं और मैं अलग' ससुराल में भी आज उसे पराया कहा गया? सौम्या सोचती रह गयी-वह किसकी अपनी है? जन्मदाता माता-पिता की या माता-पिता समान सास-ससुर की? या शायद किसी की भी नहीं? किसी की भी........?

१२२/१ अ, सुखकर्ता कालोनी
(रेलवे ब्रिज के पास) कायनेटिक चौक,
अहमदनगर - ४१४००५ (महाराष्ट्र)

पड़ोसी

-पूरनचन्द गुप्ता

बच्चे बड़े हो गये थे। अतः मेरा मकान छोटा पड़ने लगा। मैंने एक कॉलोनी में नया मकान देख लिया। लोगो को मालूम पड़ा कि गुप्ताजी अपना मकान बेच रहे हैं। दो-तीन खरीददार आये। लेकिन कीमत सुन कर वापस चले गये। एक दिन दोपहर को एक सज्जन आए। पूछा आप मकान बेच रहे हो। मैंने कहा-हाँ बेचना है। उसने पूछा-कितने तक। मैंने कहा-पच्चीस लाख। वह कहने लगा कि इसकी कीमत तो बीस से ज्यादा की नहीं है। मैंने कहा भाई तुम ठीक कह रहे हो। मकान तो बीस लाख का है। मैंने कहा-बात तो ठीक है। लेकिन पाँच लाख पड़ोसी के। वह कुछ समझा नहीं। इतने में पड़ोसी आ गया। उसने आते ही कहा-भैया आप मकान क्यों बेच रहे हो? अगर बच्चों की शादी करना है तो पांच लाख रूपये मैं दूंगा। आप मकान बेच कर मत जाओ। खरीददार सुनकर आश्चर्य करने लगा। मैंने कहा-भाई अच्छा पड़ोसी मिलना मुश्किल है। मकान तो बहुत मिल जायेंगे। वह मेरा मुंह देख रहा था। पड़ोसी चुपचाप सुन रहा था।

अतः मकान से ज्यादा अच्छे पड़ोसी की होती है। जो वक्त बेवक्त काम आ जाये।

कनाट रोड
महू (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लघुकथा

प्राणिनाम् आर्तनाशनम्

-भारती राउत

रात के बारह बजे, सिनेमा का दूसरा शो देख कर एक युवा दंपति, तांगे से लौट रहा था। टक-टप, टप-टप केवल घोड़े की टाप सुनाई दे रही थी। बेतहाशा ठंड के कारण कुहरा सा छाया था। सारी सड़क सूनी पड़ी थी।

युवक ने विदेशी ऊनी सूट पहनकर, सिर पर गुलुबंद भी बांध रखा था। उसकी स्त्री रेशमी साड़ी पर स्वेटर और कश्मीर के बने पश्मीने की कीमती शाल ओढ़े बैठी थी। फिर भी दोनों कड़ाके की ठंड से कांप रहे थे।

अंधेरे में सड़क के आस-पास आंखें फाड़-फाड़ कर देख रही महिला ने सहसा अपने पति का हाथ दबा कर कुछ इशारा किया।

''क्या हुआ?'' युवक ने धीरे से पूछा।

''वो देखो, सड़क के किनारे फुटपाथ पर।''

उतने ही धीमे स्वर ने युवती ने प्रतिउत्तर दिया। युवक ने तब तांगे वाले से तांगे की गति धीमी करने को कहा। तांगा धीरे-धीरे रुक गया। युवक ने कोट की जेब से टार्च निकाल कर उजाला किया। दोनों ने फुटपाथ पर नजर दौड़ाई।

यहां से वहां तक लगभग बीस, पच्चीस असहाय, बेसहारा, बेघर लोग सोए पड़े थे। उस ठिठुरती ठंडी रात में किसी के पास भी कुछ ठीक से ओढ़ने के लिए नहीं था। कोई गठरी बना, घुटने छाती से लगाए बिना कुछ ओढ़े ही सोया था। किसी ने एक छोटा अंगोछा ही कंधे और कानों को ढांकने के लिए डाल रखा था। किसी-किसी के पास पुरानी पतली चादरें तो थीं, पर इतनी छोटी कि सिर से लपेटो तो पैर खुले पड़े। उनमें कुछ स्त्रियां भी थीं। ये अपनी पहनी हुई धोती को ही खींच-खांच कर, पैरों को ठंड से बचाने की कोशिश में, खुले सिर ही सोई पड़ी थीं।

युवती ने धीरे से अपने पति से कहा ''इनको ठंड से बचाना चाहिए।'' जवाब में केवल ''हूँ'' सुनकर उसे तसल्ली नहीं हुई। वह सोचने लगी आखिर आधी रात में कर भी क्या सकेंगे? इतने में उस युवक ने तांगे से नीचे उतरते हुए, तांगे वाले से कहा-

''सवारी का ध्यान रखना मैं अभी आता हूँ।'' तांगे वाले ने उनकी फुसफसाहट से प्रगट हुई दोनों की दयालुता को शायद भाँप लिया था। विश्वास दिलाते हुए बड़ी अदब से बोला-''बेफिक्री से जाओ डॉक्टर साहब। मैं हूँ यहां।''

पांच मिनिट बाद ही पति के जूतों की खट-खट की आवाज से उस स्त्री ने अंदाज लगाया कि वे ऊपर की मंजिल पर गए हैं। फिर कुंडी खटखटाने और किसी को आवाज देते हुए उस महिला ने पति की आवाज भी सुनी।

थोड़ी देर बाद, एक व्यक्ति अपने आप को खूब अच्छी तरह शाल से लपेट कर डॉक्टर साहब के साथ नीचे सड़क पर आ गया। उसके हाथ में बड़ी-बड़ी चाबियों का गुच्छा खनक रहा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

''कौन सी दवाई चाहिए डॉक्टर साहब? क्या कोई इमरजेंसी केस है?'' स्टोर वाले ने पूछा?

''तुम स्टोर तो खोलो'' डॉक्टर ने उसे आदेश दिया। वह उस शहर के एकमात्र प्रसिद्ध चौहान स्टोर का मालिक था। उसके स्टोर में दवाइयों से लेकर, रेडीमेड कपड़े, साड़ियां, ऊनी वस्त्र, क्रॉकरी और बहुत कुछ बिकता था। अभी की परिभाषा में उसे एक डिपार्टमेंटल स्टोर कह सकते हैं।

स्टोर का बड़ा दरवाजा खोलने के लिए चौहान ने जैसे ही सीढ़ी पर पैर रखा, किसी से उसका पैर टकरा गया। एक भद्दी सी गाली देकर, नींद से जगाए गए उस व्यक्ति को वह चीख कर डांटने लगा।

''इन सालों को रात गुजारने के लिए मेरे घर के सामने ही जगह मिलती है? साले हरामखोर, भिखारी कहीं के, दिनभर भीख मांगते हैं और रात को यहां मरने आ जाते हैं।'' वह और भी कुछ सुनाता, इतने में ही डॉक्टर साहब अपनी पत्नी के साथ स्टोर में दाखिल हो गए। चौहान ने झुक कर अभिवादन किया और अवाक् खड़ा हो गया।

डॉक्टर ने दृढ़ मुद्रा में उससे पूछा-''कितने कम्बल हैं तुम्हारे स्टोर में?'' जितने आप चाहें। कहते हुए चौहान ने लाल इमली के कंबलों के ढेर पर से ढंकी हुई चादर हटा दी।

मोल-भाव, सस्ते-महंगे की पूछ-परख किए बिना ही दोनों पति-पत्नी ने एक-एक कंबल उठा-उठा कर बाहर सड़क पर सोए एक-एक व्यक्ति को ओढ़ा दिया।

उनमें से कुछ तो गर्मी पाकर थोड़ा सा कुनमुनाए, फिर ठीक से ओढ़-आढ़ कर सो गए। जो जागे वे उठ बैठे और उन्होंने अंधेरे में ही अपनी उजली दुआओं से पति-पत्नी दोनों को आशीर्वादों से अभिषिक्त किया। मन से निकले उनके आशीष भरे उद्‌गारों की वर्षा से डॉक्टर-डॉक्टरनी की आने वाली पीढ़ियाँ तक अभिसिंचित हो उठीं।

एक बार में ही स्टोर के पूरे कंबलों की बिक्री हो जाने पर चौहान बेहद खुश हुआ। वह हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया और फटी-फटी आंखों से उन दोनों की दयानतदारी देखता रहा। डॉक्टर ने उसे सुबह दवाखाने आकर कंबल की कीमत के पैसे ले जाने की बात कही।

फिर मुड़ कर दोनों ने सोई हुई जनता को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और तांगे की ओर बढ़ गए। आधी रात के अंधेरे में वह गुप्तदान देकर उनका तांगा आगे बढ़ गया। न कोई प्रसिद्धि की चाह, न ही किसी प्रकार के नाम और वाह-वाही की अभिलाषा। अभिलाषा थी तो केवल एक, मानव मात्र के लिए काम आने की।

''कामये दुःख तप्तानाम् प्राणिनाम् आर्तनाशनम्।''

बी-१, अमर विहार,
डी जी क्यू ए
सर्विस आफीसर्स काम्प्लेक्स
वेस्ट पटेल नगर
नई दिल्ली - ०८

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

-केशव शरण

रचना-सातत्य

मेरे सामने
फिर एक सादा पन्ना है
और संत्रास से भरा जंगल

पूस की रात

मुझे खेत अगोरना नहीं था देहात में
इसलिए मैंने 'पूस का रात' पढ़ ली
पूस की रात में

संयम

संयम कितना जरूरी और आसान
था
मगर कहां संज्ञान था
पतन से पहले

चांद

धरती के सूने आंगन में
गहरी होती जा रही है सांझ
कहां हो चांद?

सोना-जागना

नींद नहीं आ रही है
और सोना है अभी
नींद नहीं आ रही है
और जागना है
ठीक समय पर

विश्वास

मैंने धोखा खाया
या नहीं खाया
लेकिन मेरा विश्वास उठ गया

विकल्प

कांटे, कंकड़ न चुनें
इस डर से जूता पहना
अब जूता काटता है
क्या कोई और रास्ता है

तितली

पंख फड़फड़ाती है तितली
गोया, फूल ने उसे पकड़ रखा है
गोया, वह रसपान नहीं कर रही

अंत तक

अभी मेरे पास वक्त है
ख्याल यही था मेरा
अंत तक

एस २/५६४, सिकरौल
वाराणसी २२१००२ (उ.प्र.)
मो. ०९४१५२९५१३७

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

-रमेशचन्द्र पन्त

बाजार में संशयग्रस्त

खुशियाँ
खरीदने के लिए
हम प्रवेश कर रहे हैं
बाजार में संशयग्रस्त
दुकानों की चकाचौंध में
नहीं दिख रहा है कुछ भी
फिर भी
कोशिश कर रहे हैं हम
देखने की
एक तलाश है
कभी न खत्म होने वाली
भरमा रही हैं दुकानें
क्या-क्या खरीदेंगे
समा जाना है सभी कुछ
समय के गहवर में
खिड़कियाँ-दरवाजे
बन्द रह जाएँगे
गुम हो जाएँगे लोग
चीजों के बीच
और एक-न-एक दिन
खुद भी
तब्दील हो जाएँगे
चीजों में
और कोई भी खरीद सकता है
उन्हें
एक तयशुदा मूल्य पर।

तुतले समय में

इस विकट समय में
थक गया है वह
उड़ते-उड़ते
ढोते हुए सपने
जो मुकम्मिल नहीं होने कभी
ऐसे में
लौटना चाहता है वह
तुतले समय में
जब उठा लेते थे पिता
कंधों पर
माँ
दूर नहीं होने देती थीं
आँखों से
घुटने के बल चलना
जैसे नाप लेना था
ब्रह्मांड को
धवल दंत-पंक्तियाँ
बिखेर देती थीं
एक कभी न खत्म होने वाला
सुख का साम्राज्य
हर किसी के चेहरे पर
कैसे तो
दिन थे वे
चले गए जाने कहाँ?
फिर
कभी न
लौट आने के लिए।

'उत्कर्ष' विद्यापुर
द्वाराहाट, अल्मोड़ा-२६३६५३
(उत्तराखण्ड)
मो. ९६३९३७३७३७

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

-वन्दना नाइक

टूटा दर्पण

(१)

हाथ में थामा वह दर्पण जो
किसी अनचाही आहट से चौंक कर चिटक गया था
और उसमें हमारे आधे कटे चेहरे नजर आए थे
और सिहर कर हमने अपने चेहरे हटा लिए थे।

उस चिटके दर्पण में दोबारा
सिर जोड़ कर देखने की कोशिश (ख्वाहिश) में
दर्पण (दो-टूक) दो भागों में बंट (हो) गया था
और उसका एक एक खंडित टुकड़ा
हम दोनों के हाथ में रह गया था (हिस्से आ गया था)।

उस सन्नाटे (भरी) की दोपहरी में फिर हमने
अपने अपने हिस्से का खंडित टुकड़ा थाम दो
विपरीत दिशाओं में एक
अंधी छलांग लगाई थी,
था जिसमें
दो ध्रुवों का अंतराल!

आज भी वह खंडित दर्पण का टुकड़ा
मेरे हाथ में है जिसके कटे, टेढे-तिरछे, नुकीले किनारे
मुझे चुभते हैं, मेरी हथेली लहू-लुहान होती रहती है
फिर भी उस दुखती हथेली से मैं उस आधे चेहरे को
दुलारती हूं, सहलाती हूं जो मेरा नहीं
तुम्हारा होता है।

प्रिय! एक टुकड़ा दर्पण तो तुम्हारे भी पास था
सच कहना! तुम भी कभी उसमें झांकते हो?
या तुमने उसे फेंक दिया है?

(२)

बुढ़िया के चारों बेटे
आंगन में तख्त पर लेटे-लेटे
विवशताओं के गोवर्धन
कानी अंगुलियों पर
उठाते रहे
संबंधों के ओछे कंबल बड़ी
तत्परता से एक-दूसरे को
उढ़ाते रहे।

गुदड़ी में सिमटी बुढ़िया
खूब समझ रही थी
बेटे किस बारिश में भीगने
से कतरा रहे थे।

कल सुबह उन्हें पिता की
विरासत पानी थी
और बुढ़िया!
बारिश में भीगी (हुई)
गठरी सी भारी थी।

फ्लैट नं. ३०३, रॉयल व्यू अपार्टमेंट
स्कीम नं. ५४, विजय नगर
इन्दौर (म.प्र.)
मो. ८०८५९५९१०६

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

-राजेन्द्र निशेश

धूप और गिलहरी

आँगन में उतरी है फुदकती धूप
और
पेड़ से एक गिलहरी,
दोनों बतिया रहे हैं
या
दोहरा रहे हैं
कोई मौन प्रार्थना!

सृजन और संघर्ष की
कथा रचने को
श्रमिकों का एक टोला
अभी-अभी निकला है
अपने घरों से
हाथों में रोटी की पोटली लिए
प्याज और अचार की गंध
घुलने लगी है हवाओं में।

सूरजमुखी ने भी
खोल दी हैं अपनी पलकें
हठीली कामनाओं ने
बाँच दिये हैं ताजा अखबार
बहकी खबरों के बीच
दिन को कुतरने लगा है
रफ्ता-रफ्ता बढ़ता शोर
जैसे कुतरती है गिलहरी
खट्टे, मीठे फलों को!

सहरा सहरा भटका कौन,
बुरे वक्त सा अटका कौन!

जीने की उम्मीद लिए था,
तब सूली पर लटका कौन !

इस बस्ती में प्यार बहुत था,
फिर आँसू सा टपका कौन!

पास नदी के वह रहता है,
बिलख रहा है प्यासा कौन!

तिनका तिनका घर बनता है,
फिर आंधी में बिखरा कौन!

उम्मीदों के पँख लगाये
परिंदे सा फिर भटका कौन!

२६९८, सेक्टर ४० सी,
चण्डीगढ़ १६००३६

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

-शुभदर्शन

प्रकृति के कितना पास थी माँ

प्रकृति के कितना पास थी
माँ
चिड़ियों को दाना डालती
छत पर
पानी का कटोरा रखती
वह भी बदले में
मां का पूरा ख्याल रखतीं
दूध खुला रख कभी
लग जाती मां की आंख
तो
बिल्ली को आते देख
इतना शोर मचातीं चिड़ियां
सब समझ जाती मां
कई बार
मां की बातों से
खीझ जाता मैं
पर
कपिला गाय,
यही नाम रखा था मां ने,
का बछड़ा
बार-बार आवाज देने
पर रंभाता
जैसे कह रहा हो
हुक्म करो मां!!
यह कैसा आकर्षण था
सपना-सा लगता है अब
सब देख चुका हूं
आंखों से फिर भी
तुम ये सब
कैसे करती थी-मां
मैं तो इंसानों के पास भी
नहीं जा पाया
ऐसा क्यों होता है
मां!
कि भूली बिसरी
किसी याद के साथ ही
खुल जाते हैं:-
सपनों के पन्ने
सपने
जिनमें तुम हो, बच्चे हैं
तुम्हारी पूरी गृहस्थी है
दर्दों की चाहारदीवारी है
यातनाओं का चरखा है
जिस पर
ममत्व का सूत कातती
तुम
झलक दिखा
हो जाती हो ओझल-
दिन भर
चांद पर बैठी बुढ़िया की मानिंद
पर
नहीं हटती आंखों से
तुम्हारे अभावों की तस्वीर
कण-कण में
हर उस चीज में
देखता हूं तुम्हें
जो
सजीव थी केवल
तुम्हारे दम पर
कल ही छत पर पड़ा
तंदूर देखा-उदास
निपट अकेला
पत्नी की उपेक्षा का शिकार
कुछ बोलती नहीं तुम
झांकती हो कभी
फ्रेम से
तो कभी बाहर आ
मेरी अंगुली थाम
घुमाती हो-
बचपन के बाग से
प्रौढ़ावस्था के जंगल तक
साइंस ने बहुत
तरक्की कर ली है बेटा
इशारे से दिखाती हो तुम
फसल बचाने को
खेतों में
न तो मचान की जरूरत है
और न ड्रम पीटने की
ठोंक कर मोबाईल टावर
लगा दिया है
हवा में कर्फ्यू
परिंदों का
घुसना मना है
शहर की कचहरी में
धारा १४४ के तहत
होगी कार्रवाई
पीटता है ढोंगी
साइंस का हरकारा।

७, फ्रेंडस कॉलोनी
मजीठा रोड,
अमृतसर-१४३००१ (पंजाब)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आहों की वंशी मत फूँको

-प्रेमशंकर रघुवंशी के चार गीत

आँसू की यमुना के तट पर,
आहों की वंशी मत फूँको,
पीर गुजरिया के अन्तर से,
सुधि के मेघ उमड़ आयेंगे।।

मैंने किसी भोर के चरणों,
अपनी उमर समर्पित कर दी।
खुद ही किसी किरन कन्या को,
अपनी हल चल अर्पित कर दी।
पीड़ा के इस महासिन्धु पर,
अब न व्यर्थ उर्मियाँ उठाओ,
आशा की पूरनमासी पर,
सौ सौ ज्वार उमड़ आयेंगे।।

थकी जिन्दगी की गोदी में,
सिसक सिसक कर रोईं साँसें।
कितनी बार दफन की मैंने,
अपने संयम की उच्छ्वासें।
जीवन की इस घोर निशा में,
अब न और कालिमा बिछाओ,
रजनी की आँखों में छल छल,
अनगिनत अश्रु उमड़ आयेंगे।।

कितनी भीड़ मची भावों की,
मेरी मनःस्थिति के द्वारे।
कुछ तो आन्दोलन में रत हैं,
कुछ बैठे हैं हारे हारे।
मन की भावुकता के आगे,
अब न और तुम शोर मचाओ,
कोलाहल में जाने कितने,
कोमल सपन उजड़ जायेंगे।।

विन्ध्य-सतपुड़ा की गह्वर शाम

चूल्हे में सुलगा कर आग,
सारी दिनचर्या को दाग,
घर भर की आँखों में धूल झोंक,
हिला सुर्ख रेशमी रूमाल,
भागी वह हिरनी की चाल।

दिशा दिशा भौचक्की,
बन्द हुई पनचक्की,
देर तलक शिखरों ने,
बार-बार लौटाया- नहीं रुकी,
काजल सब पोत गई
क्षितिजों के गाल।

खुला हुआ फाटक मुँह लटकाये,
बन्द हुआ बिना कुछ बताये,
आँगन ने मुड़ कर जब देखा तो,
घिनोची के बासन कुछ बुदबुदाये,
अरगनी कथरियों के धागों से,
पूछ रही अब तक के हाल।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गूँजे कूक प्यार की

जिस बरगद की छाँव तले रहता था मेरा गाँव।
वह बरगद खुद घूम रहा अब नंगे नंगे पाँव।।

रात-रातभर इस बरगद से किस्से सुनते थे,
गली द्वार बाड़े के बिरवे जिसको गुनते थे,
बाखर-बाखर कहीं नहीं थी कोई भी खाई,
पशु-पक्षी, मौसम, जड़-चेतन थे भाई-भाई,
किन्तु अचानक उलटी-पलटी संबंधों की नाव।

इस बरगद का हाल देख कर अम्मा रोती है,
भूख खेत में खलिहानों में अब भी सोती है,
नहा रही कीचड़ पानी से घर की मर्यादा,
चक्रवात चाहे जब उठते पहले से ज्यादा,
हुए बिबाई से घायल अब चंचलता के पाँव।

भौजी अब ममता के बदले देती है गाली,
दूर दूर तक नहीं दीखती मन में हरियाली,
चौपालों से उठीं बरोसी आँगन से पानी,
दूर दूर तक नहीं सुनाती कबिरा की बानी,
कथनी करनी न्यारे न्यारे चलते ठाँव-कुठाँव।

पंचायत परपंच परोसे शासन भी वादे,
राजनीति ने बड़े बड़े कद कर डाले आधे,
शहरों से पुरवा का बढ़ता सम्मोहन दूना,
मुखिया मुख ढाँके विवेक पर लगा रहे चूना,
लरिकाई की प्रीत न सह पाती अब मीठे दाँव।

धीरे धीरे सीलन घर के घर खा जाती है,
आपस में मिलने की गर्मी असर न पाती है,
समा रहा दलदल के जबड़े में पूरा खेड़ा,
सब मिल अब ऊँची धरती पर रख लो ये बेड़ा,
गूँजे कूक प्यार की घर घर रहे न काँव काँव।

इससे तो

एक बड़ा अन्तराल पाटने,
चिट्ठी के सिलसिले चले,
कब तक हम खबरों की पर्त-पर्त खोलें,
इससे तो मौन ही भले।

बिलावजह आदमकद शीशे में,
अपने को कैद कर लिया,
कब तक प्रतिबिम्बों से बात करें,
चौखट ने सन्धों से भेद ले लिया,
चेहरे पर उभरी जो स्याह स्याह रेखाएँ,
मिटी नहीं सौ-सौ उबटन मले,
इससे तो मौन ही भले।

दूर बहुत दूर से आता हुआ,
डाकिया लगता है पैगम्बर,
पास आ जब भी वह सिर हिला मना करे,
लगते तब अपने को आप ही दिगम्बर,
सहा नहीं जाता ये इसीलिए अब तो हम,
शहर छोड़ लापता चले,
इससे तो मौन ही भले।

प्रताप कालोनी (चाल के पीछे)
हरदा (म.प्र.) ४६१३३१

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

-अरविन्द अवस्थी के दो गीत

(१)

आदमकद शीशे हैं लेकिन
आदमकद तस्वीर नहीं है।।

जिधर डालिए नजर उधर ही
अफरा तफरी मची हुई है।
अपने को खुशकिस्मत समझें
जिनकी इज्जत बची हुई है।
भारी भरकम है शरीर पर
उठती मन में पीर नहीं है।।

पेड़ों पर मौसम का गुस्सा
देखो कैसे बरस रहा है।
अनगिन खातों में अथाह धन
लेकिन मन तो तरस रहा है।
म्यान कमर में बँधी हुई है।
पर उसमें शमशीर नहीं है।।

छद्मभरी नदियों ने बढ़ कर
बस्ती को वीरान बनाया।
फूल समझ कर गले मिला पर
उसने दिल में शूल चुभाया।
बादल छाए हुए गगन में
लेकिन उनमें नीर नहीं है।।

सीता का अपहरण देख कर
लड़ा जटायु, नहीं रहा अब।
पीछे बड़ी-बड़ी बातें हैं
लेकिन मुँह पर कौन कहा कब।

मझधारें ही मझधारें हैं
दिखता कोई तीर नहीं है।

(२)

जब आती है याद तुम्हारी
मन में लहरें उठने लगतीं।।

साँसों में आती गरमाहट
आँखों में जाता भर पानी।
पोर-पोर में घुलने लगतीं
बिछुड़े पल की अमर कहानी।
पलकें भी काबू से बाहर
होकर फिर-फिर गिरने लगतीं।। जब आती है ...

शब्दों की आहट को सुन कर
दिल की साँकल खुल खुल जाए।
उस अतीत के आसमान में
मन का पंछी उड़ता जाए।
चुटकी भर खुशियों के पल में
तरुण लताएं उगने लगतीं।। जब आती है ...

वे गुलाब के फूल नहीं अब
बिना तुम्हारे अच्छे लगते।
अनजाने में अगर छू गए
तो हाथों में काँटे चुभते।
नयन चुरा कर चपल हवाएं
अब मुझ पर ही हँसने लगतीं।। जब आती है ...

स्वर में भारीपन आ जाता
भाव नहाए-से हैं लगते।
दीवारें बन गईं आईना
रोम-रोम फूलों-से खिलते।
जहाँ, जिधर जाती हैं नजरें
परछाईं-सी छलने लगतीं। जब आती है ...

श्रीधर पांडेय सदन
बेलखरिया का पुरा, मीरजापुर (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मुनि देवेन्द्र सिंह के दो नवगीत

कहीं नहीं दिखे

हम घूमते रहे
डगर गली गांव
बादलों के पांव
कहीं नहीं दिखे।

धूप हर जगह कड़ी
प्यास सामने खड़ी
क्षत-विक्षत होठों के तट
हवा टूटी पतवार सी पड़ी
नदी और नाव कहीं नहीं दिखे।

चिड़िया चीख रही
रोशनदानों के आर-पार
आना-जाना सीख रही
ढूंढ़ रही चारों ओर
आंखें घुमा गोल-गोल
किधर गए
कहां रखे
पूछ रही
मौलश्री और छांव
कहीं नहीं दिखे।

शब्दों के जाल बुने
राह खड़े उद्धव ने
वृन्दावन ढूंढ़ थके
गोप और गोपियों की
आंखों में बाल पढ़े
ठग ने ठगा
ठगे घूमते रहे सभी
माधव के ठांव कहीं नहीं दिखे।

सच तो यह है

हंसो, गाओ या रोओ
मैं जगा हूं
कि तुम
आराम से सोओ,

मात्र इसलिए नहीं
कि तुम्हारा सगा हूं
इसलिए भी नहीं
कि तुम्हारी अटूट चाशनी में
पगा हूं।

सच तो यह है
कि अब तक मैं जीवित था
अब जी रहा हूं,
हर्ष और व्यथा को
सहजता से पी रहा हूं।
समय को
साहस से
साधना से
पकड़ रहा
सी रहा हूं।

ओ मेरे बीज!
ओ मेरी जड़!
सच तो यह है
आज मुझे लगा है
कि मैं
तुमसे लगा हूं!

५, वर्धमान परिसर, चूना भट्टी
कोलार रोड, भोपाल-४६२०१६

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

-संजय शुक्ल

भीड़ से बचते बचाते

भीड़ से
बचते बचाते हम,
साँझ ढलते
लौट आते घर।
रोज घर से निकलते जितना
लौट पाते हैं कहाँ उतना
छूट जाता है स्वतः ही कुछ
छोड़ आते हैं स्वयं कितना
नीड़ में
नुचते नुचाते हम,
लौट आते फड़फड़ाते पर।
पाँव झटकें, पर नहीं छूटतीं
ढीठ सड़कें साथ घर चलतीं
बीतते जिनमें रहे हैं हम
वे कभी घड़ियाँ नहीं घटतीं
रीढ़ से
सधते सधाते हम
पीठ पर इक शहर लाते धर
चीखने एकान्त में निकलें
शोर अन्तस का कहीं उगलें
चेतनाएं जम रहीं मन की
आग से अब कौन सी पिघलें
चीड़ से
जलते जलाते हम,
फेफड़ों में धुआं लाते भर।

२३, पंचशील पार्क
साहिबाबाद
गाजियाबाद (उ.प्र.) २०१००५

-हरिशंकर सक्सेना

तीखी हवाएँ

हाथ में कोड़ा लिए
तीखी हवाएँ आ गयीं

फिर समय के वक्ष पर
छल-छद्म के दलदल हुए
हाथ गीता पर रखा
फिर भी न गंगाजल हुए
आस्थाएँ क्रूरतम अभिशाप से
मुरझा गयीं

यातनाओं के महाजन से
हमें भी ऋण मिला
अर्द्धसामन्ती व्यवस्था का
यही है सिलसिला
लाल बहियों में उलझ कर
पीढ़ियाँ घबरा गयीं

राजपथ पर जो गए वे
लौट कर आए नहीं
सौम्यता पगडण्डियों की
अब उन्हें भाए नहीं
लाजवन्ती धारणाएँ
किस कदर पथरा गयीं

१४५, कर्मचारी नगर
बरेली-२४३१२२ (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुस्तक-चर्चा

सगोत्री विधाओं का 'अकेला मेला'

-केशव प्रथमवीर

चर्चित पुस्तक 'अकेला मेला' भी यह प्रमाणित करती है कि हिंदी साहित्य की प्रकीर्ण विधाओं में गिनी जाने वाली - डायरी, संस्मरण, आत्मकथ्य, पत्र, यात्रा वृत्तांत आदि सगोत्री विधाएँ हैं। ये सभी विधाएँ लेखक के जीवन-व्यक्तित्व से सीधे-सीधे जुड़ी होने के कारण, उनमें लेखक के 'मैं' की उपस्थिति निरंतर बनी रहती है। इस 'मैं' के आधार पर, इन विधाओं में लेखक के व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं का प्रत्यक्ष साक्षात्कार होता है। लेकिन बात यही नहीं है, ये सभी विधाएँ अलग-अलग होते हुए भी एक-दूसरे के साथ इस प्रकार गलबहियाँ डाल कर चलने लगती हैं कि उन्हें जिस दृष्टि से देखें वही दिखने लगती हैं। कहीं आत्मकथ्य में डायरी, कहीं डायरी में संस्मरण, कहीं संस्मरण में यात्रा वृत्तांत आदि-आदि। 'अकेला मेला' प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित, बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार, 'पद्मश्री' प्रो. डॉ. रमेशचन्द्र शाह की डायरी के कुछ बिखरे हुए पन्ने हैं। इन पन्नों की तिथियों के सन्-संवतों में क्रम की संलग्नता भले ही न हो, इनके कथ्य की रसानुभूति में तनिक भी अंतर नहीं आता है। आखिर तो डायरी के ही पन्ने हैं। उनमें किसी प्रकार के क्रम की संलग्नता खोजना ही बेमानी है।

दूर से खोए-खोए से 'अकेले' दिखते हुए, दार्शनिक वृत्ति के शाह साहब की इस डायरी में संसार भर का 'मेला' लगा हुआ है, जो उनके साहित्यिक व्यक्तित्व के ताने-बाने पर अच्छा-खासा प्रकाश डालता है। इसमें स्वदेशी-विदेशी साहित्यकार हैं, चिंतक हैं-विचारक हैं। कुछ सामान्य साहित्य के सामान्य पाठक हैं, कुछ मतलबी किस्म के काम निकालू लोग भी हैं। कहीं-कहीं, बीच-बीच में लेखक के जीवन, रूचि, अरुचि एवं अभिरुचि, स्वप्न-दिवास्वप्न, अंतर्द्वंद्व आदि की झलक भी है। हिंदी-अंग्रेजी की कुछ प्रसिद्ध पुस्तकों की चर्चा है। इन पुस्तकों में काव्य ग्रन्थ हैं, कथा साहित्य है, और कुछ जीवन-जगत के संबंध में गंभीर चिंतनात्मक ग्रन्थ हैं। आए दिन आयोजित होने वाले संगीत, साहित्य, संस्कृति आदि से संबंधित कार्यक्रमों की भी चर्चा है जो शाहजी जैसे साहित्य-संगीत की अभिरुचि वाले व्यक्तियों की डायरियों में प्रायः मिलती है। सैर-सपाटे और प्रकृति-प्रेम के कुछ प्रसंग हैं। कुल मिला कर एक अभिजात्य किस्म की विविधताओं से भरा हुआ एक 'मेला' है जो 'अकेले' एक मन का ही विस्तार जैसा लगता है।

कहावत है कि मनुष्य अपने संगी-साथियों द्वारा पहचाना जाता है। ये संगी-साथी कैसे मिलते या बनते हैं? माना तो यह जाता है कि मनुष्य जिस परिवेश में रहता है उसी परिवेश में से अपनी रूचि-अभिरुचि के अनुसार वह अपने साथियों का चुनाव कर सकता है। यह रुचि-अभिरुचि ही समान धर्माओं की खोज करती है। साथ ही यह भी माना जाता है कि कोई भी व्यक्ति अपने साथियों का चुनाव सिर्फ तर्क बुद्धि की कसौटी पर कस कर नहीं करता-नहीं कर सकता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तर्क-बुद्धि के आधार पर जो संबंध बनाते हैं वे प्रायः सामान्य व्यवहार या काम-काजी होते हैं। जिन संबंधों से एक प्रकार का आंतरिक सुख-संतोष प्राप्त होता है, वे संबंध भावात्मक लगाव की अपेक्षा रखते हैं। इसके लिए व्यक्तित्व की आंतरिक अव्यक्त-सी चाह-पिपासा काम करती है। यही है वह अभिरुचि जिसके कारण समान धर्मा, फिर चाहे निकट परिवेश में हों या दूर, खींच लेते हैं या खिंचे चले आते हैं। 'अकेला मेला' में प्राप्त डायरियों के पन्नों में लेखक के व्यवसायी साथियों या उनके निवास के पास-पड़ोसियों या उनके पारिवारिक सगे-संबंधियों का कहीं कोई जिक्र नहीं मिलता। ऐसा लगता है कि इन संबंधों के बीच लेखक नितांत निःसंग-'अकेला' है- कहीं कोई राग-द्वेष की रेखा नहीं है। जिन व्यक्तियों के साथ लेखक का अधिकाधिक समय व्यतीत हुआ है, (जैसा कि इन पन्नों में प्राप्त होता है) वे हैं - सर्व श्री निर्मल वर्मा तथा 'अज्ञेय'(वात्स्यायनजी) दोनों ही अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के चिंतक-विचारक साहित्यकार और 'ज्ञानपीठ' से सम्मानित। इनके अतिरिक्त अवसर पाते ही जिनसे भेंट होती रही है और जिनके साथ लेखक की सार्थक साहित्यिक चर्चाएँ हुई हैं, वे हैं, वरिष्ठ कथाकार जैनेंद्रजी, मुक्तिबोध, प्रसिद्ध अंग्रेजी कथाकार मुल्कराज आनंद, निबंधकार श्री विद्यानिवास मिश्र, कथाकार मनोहर श्याम जोशी, श्रीकान्त वर्मा, अमरकांत, रघुवीर सहाय, उदय प्रकाश, मलयज, रंगकर्मी वि.ब. कारंत आदि। लेखक की दृष्टि में वात्स्यायनजी एक आदर्श साहित्यकार हैं। पृ. 48 पर उनके संबंध में लिखा गया है- 'मुझे लगता है, साहित्यकार को ऐसा ही होना चाहिए।' (पृ.41 पर 21 जनवरी 1981 की डायरी में ' ' को संबोधित करके जो लिखा गया है, वह शायद वात्स्यायनजी के बारे में ही है। क्या लिखा है? पाठक पुस्तक पढ़ कर निर्णय कर सकते हैं)

किन्तु उनका अधिकाँश वार्तालाप निर्मल जी के साथ हुआ है। ('निर्मल जी के साथ मुझे बहुत अच्छा लगता है।' पृ.103) निर्मल जी जब भी अपने भोपाल निवास पर उपलब्ध रहे हैं, लेखक प्रायः प्रति दिन ही मिलते रहे हैं और दुनिया भर के श्रेष्ठ साहित्य पर चर्चाएँ ही नहीं की, बल्कि प्रसंगानुसार कुछ अच्छी किताबें-कुछ आलेखों का अध्ययन करने का अवसर लेखक को प्राप्त होता रहा है। पृ.61 पर निर्मलजी द्वारा 'उपन्यास' पर अंग्रेजी में लिखे गए एक आलेख पर लेखक ने लगभग तीन पृष्ठों का नोट लिखा है। अंत में उस लेख के प्रभाव को अंकित करते हुए लिखा गया है- 'मुझे यह लेख मानो मेरे भीतर के उपन्यासकार को संबोधित करते हुए लिखा लग रहा है, उसे ललकारता हुआ। मैं उसी तरह उसमें बिंधा हुआ महसूस कर रहा हूँ। ....जबर्दस्त चुनौती है यह, किंतु किस कदर इस प्रकार का लाभ अज्ञेयजी से भी लेखक को मिलता रहा है। यहाँ इतना ही संकेत किया जा सकता है कि जब कोई अच्छे साहित्य से थोड़ा सरोकार रखने वाला पाठक, इन पन्नों से गुजरता है तब उसे भी इन साहित्यकारों की निकटता का सुख तो प्राप्त होता ही है, साथ ही लेखक को जो ज्ञानानंद मिला है उसका लाभ भी मिलता है।

'अकेला मेला' के इन पन्नों में जो एक बात बहुत उभर कर आती है वह यह है कि लेखक बहुत ही अध्ययनशील व्यक्ति हैं-व्यसन की सीमा तक। भले उन्हें आप पढ़क्कू कह सकते हैं। ('पर उसने ऐसा पकड़ा, ऐसा बाँधा कि जब तक दोनों खंड पूरे नहीं चाट लिए, चैन नहीं पड़ा' पृ.277

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उनकी यह 'चाटने की आदत' किसी एकाध पुस्तक पर ही लागू नहीं होती।) विशेषतः चर्चित यूरोपीय साहित्यकारों-विचारकों के द्वारा लिखी हुई अच्छी पुस्तकों के संबंध में बहुत सारी प्रविष्टियाँ इन पन्नों में बिखरी पड़ी हैं। मानो ये डायरी के पन्ने नहीं, बल्कि पुस्तकों की समीक्षायें हैं। इनमें से कुछ के नाम हैं- ग्योएठे की 'पोएट्री एण्ड ट्रुथ', ए पोर्ट्रेट ऑफ़ दी आर्टिस्ट, रोम्याँ रोलाँ का भारत, दस्ताएवास्की का 'नोट्स ऑफ अंडर ग्राउण्ड', रिल्के का 'स्टोरीज ऑफ गॉड', येट्स का 'अ जनरल इंट्रोडक्शन टू माई पोएट्री', इसी प्रकार कामू, काफ्का, कीट्स, गोगोल, फ्राकनर, आर्तेगा गस्ते, ऊस्पेन्स्की आदि अनेक लेखकों के ग्रंथों के कथ्य-परिचय, सारांश, लेखक की प्रतिक्रियाएं आदि बातें इन पन्नों में भरी पड़ी हैं। ज्यादातर इन ग्रंथों के 'नोट्स' परीक्षार्थियों की तरह 1, 2, 3... आदि क्रमांक डाल कर लिखे गए हैं किन्तु मजेदार बात यह है कि उनका कथ्य इतना महत्वपूर्ण कि उबाऊ नहीं लगता। इसका एक कारण यह भी है कि ये नोट्स अधिकांशतः लेखक ने स्वयं हिन्दी में अनुवाद करके लिखे हैं। इनमें उन्हीं बातों को नोट किया गया है, जो स्वयं लेखक को और किसी भी जिज्ञासु को मननीय एवं उपयोगी हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, पृ. 49 पर दि. 25 मई, 1981 के दिन, लेखक को अज्ञेयजी द्वारा दी गयी 'गुर्जियफ' की पुस्तक जो उन्होंने अपने पिता के संबंध में लिखी है, का सारांश सूक्तियों में लिखा है – 1.खारा नहीं चाहते तो माधुर्य भी नहीं मिलेगा। 2-वह रसातल में है। इसलिए तुम शिखर पर हो।...... 10-प्रसिद्धि की दरकार है तो पत्रकारों से दोस्ती करो। चैन की नींद चाहिए तो पत्नी से दोस्ती गाँठो। अपनी धार्मिक आस्था खोने की इच्छा हो तो पादरियों से दोस्ती करो।

इसी प्रकार भारतीय लेखकों की पुस्तकों में महात्मा गांधी की 'हिन्द स्वराज', जयदेव सेठी की 'गांधी की प्रासंगिकता', मगन भाई देसाई की 'राम मोहन राय से गांधी तक', 'बापू के पत्र मीरा के नाम', साही जी की 'जायसी', सलमान रुश्दी की 'मिड नाईटस चिल्ड्रन', पूर्व-पश्चिम के शिष्यों द्वारा लिखी गयी 'स्वामी विवेकानंद की जीवनी', जयप्रकाश जी को समर्पित-'स्रोत और सेतु' आदि के संबंध में उपयोगी सारांश, अधिकांशतः क्रमांकानुसार प्राप्त होते हैं। पृ. 101 पर गांधी की प्रासंगिकता को 10 क्रमांकों में समेटते हुए अंत में लिखा गया है – इस पुस्तक को पढ़ते हुए मुझे आश्वस्ति हो रही है कि पिछले बरसों में मैंने जो कुछ भी आलोचनात्मक लेखन किया है, उसमें मेरा सोच सही दिशा में चलती रही है। .. लेखक ने गांधीजी के बहुत सारे साहित्य का भी अध्ययन किया है और उससे प्रभावित भी हुए हैं। पृ.39 पर 3 अक्टूबर,1980 के दिन गांधीजी की पुस्तिका हिन्द स्वराज पर यह टिप्पणी देखें-

'हिन्द स्वराज' फिर से देख जाने की प्रेरणा हुई। यह उन थोड़ी सी किताबों में है, जिन्हें हम बार-बार पढ़ने को प्रेरित होते हैं। क्यों? याद आया, पं. विद्यानिवास मिश्र ने इसे भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम का बीज ग्रन्थ (या मैनिफैस्टो) कहा है कहीं। यह सही लगता है। मेरे खयाल से श्री अरविंद का 'फाऊंडेशन ऑफ इंडियन कल्चर', जो एक बहुत भिन्न ढंग से लिखी गयी पुस्तक है, वह भी इस श्रेय की हकदार है। 'हिन्द स्वराज' के पूरक-सी। आगे उन्होंने 10 क्रमांकों में 'हिन्द स्वराज' का सारांश प्रस्तुत किया है। इस प्रकार लेखक के 'अध्ययन करने की शैली' किसी भी ज्ञानपिपासु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

के लिए अनुकरणीय और उपयोगी हो सकती है।

साहित्य और साहित्यकारों के अतिरिक्त इस डायरी के पन्नों में जो तीसरी बात दिखाई देती है, वह है लेखक के व्यक्तित्व के कुछ विशेष पहलू। स्तरीय पुस्तकें पढ़ने के संबंध में ऊपर संकेत किया जा चुका है। यह चस्का लेखक को उनके पिताजी से प्राप्त हुआ है। लेखक जन्मजात आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। इसलिए गांधी, विवेकानन्द, योगी अरविन्द तथा उपनिषद्-गीता आदि पर उनका गहरा अध्ययन-मनन और चिन्तन इन पन्नों में झलकता है। उनकी आध्यात्मिकता सिर्फ अध्ययन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वे एकांतप्रिय तथा ध्यान योग में ही रमे रहने वाले व्यक्ति रहे हैं। ध्यान और समाधि के रहस्य-लोक से उतर कर, किस प्रकार 'अंतर्द्वंद्व' से गुजरते हुए, लेखक साहित्य सृजन की दुनिया में प्रवेश करते हैं, इसके लिए पृ.80 पर, दि. 31 दिसंबर 1981 को लिखा गया उनका आत्मकथ्य पठनीय है।

अल्मोड़ा में जन्मे और पले शाह साहब के लिए यह स्वाभाविक ही है कि हिमालय-श्रेणियों की प्राकृतिक सुषमा उन्हें बार-बार याद आये। अपने बचपन के परिवेश को कौन भूल सकता है- ऊधो! मोहि ब्रज बिसरत नाहीं। सामान्यत: शांत, मितभाषी, संकोची और एक प्रकार के अभिजात्य स्वभाव के प्रो. शाह जब कहीं कोई नया विचार या भाव देखते, सुनते या पढ़ते हैं, तब बड़े भोलेपन से चमत्कृत होकर अपने आप से ही पूछते हैं- यह पहले मुझे नहीं सूझा, इससे पहले इस तरह किसी ने नहीं बताया। इसे पढ़कर मैं दंग हूँ। आदि।.... लोगों की कुत्सित, राग-द्वेषी, संकुचित स्वार्थी एवं घटिया किस्म की हरकतों से लेखक का सुसंस्कृत मन व्यथित हो उठता है। बेहिसाब बेहूदगी, सरासर झूठ, कुत्सा, अकारण द्रोह...निम्नतर स्तर के राग-द्वेष, इसी सबके घिराव में जीना पड़ता है मुझे। पृ.41, 21 जनवरी,1981 23 मई, 1981 के दिन (पृ.41), वात्स्यायनजी के स्वभाव के संबंध में लिखा गया है, कौन कहता है, वात्स्यायनजी चुप्पा हैं- कुछ बोलते नहीं। उन्हें भी अंतरंग संवाद की उतनी ही जरूरत, उतनी ही प्रेरणा होती है, जितनी किसी भी अन्य साहित्यकार को। पर...कहीं कोई संवादी तो मिले! अनुकूल और सचमुच जिज्ञासु, सचमुच प्रश्न पूछने वाला! .....बशर्ते

ठीक यही बात, स्वयं अकेला मेला के लेखक के स्वभाव पर भी लागू होती है। सामने वाला खुद भी समझदार और दिलचस्प बात करने वाला हो। (पृ.58)

बी-२, दर्शना पार्क
रोड नं. ८ सी
कल्याणी नगर, पुणे-४११००६ (महा.)
मो. ०९९२३५९४९९८

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक अविस्मरणीय स्मारिका

-कैलाशचन्द्र पन्त

विज्ञान परिषद, प्रयाग ने अपनी गौरवमयी यात्रा के सौ वर्ष पूर्ण कर लिये हैं। आश्चर्य होता है कि सन् १९१३ में उन दूरदृष्टा मनीषियों ने देख लिया था कि आने वाला समय विज्ञान का है और हिन्दी भाषा को उस दृष्टि से संपन्न करने की आवश्यकता है। विज्ञान परिषद ने सर्वप्रथम विज्ञान विषय पर हिन्दी में मौलिक चिन्तन और लेखन की नींव रखी थी। दो वर्ष बाद ही **'विज्ञान'** नामक पत्रिका प्रकाशित करने की योजना बनी। इस पत्रिका का विगत सौ वर्षों से निरन्तर प्रकाशन हो रहा है। श्रीधर पाठक और लाला सीताराम इसके प्रथम संपादक रहे। सौ वर्ष पूर्ण होने पर विज्ञान परिषद ने **विज्ञान शताब्दी स्मारिका** प्रकाशित की है। यह स्मारिका अविस्मणीय रहेगी-मुख्यत: इसकी सामग्री ज्ञानवर्धक होने के साथ ही ऐसी महत्वपूर्ण सूचनाएं भी देती है जो विज्ञान के छात्रों को शोध की नई दिशाएं उपलब्ध कराती है।

डॉ. विनोद शर्मा ने अपने आलेख 'सृष्टि और जीवन का विज्ञान' में यह स्पष्ट कर दिया है कि अक्षर से यह क्षर सारा जगत उत्पन्न हुआ है और अंत में यह क्षर जगत अक्षर (ब्रह्म) में विलीन हो जाता है। जब तक कोई पदार्थ या तत्व अकेला रहता है तब तक वह मौलिक है, और वही पदार्थ या तत्व किसी दूसरे पदार्थ के मेल से तीसरे पदार्थ या तत्व को जन्म देता है तो वह यौगिक कहलाने लगता है। इसलिये जो यौगिक है वह भी मौलिक है। दोनो में अंतर मात्र इतना है कि यौगिक पदार्थ या तत्व का साक्षात्कार इन आँखों से होता है लेकिन उन पदार्थ या तत्वों में छिपे मौलिक पदार्थ या तत्व को हम नहीं पहचान पाते। आधुनिक विज्ञान जिन तत्वों को भूत या महाभूत कहता है, उसका मूल अभिप्राय वही है। शर्माजी ने संक्षेप में दर्शन और विज्ञान की निकटता को सूक्ष्मता से रेखांकित किया है।

स्मारिका को पढ़ते हुए ऐसे अनेक प्रसंग मिल जायेंगे जो भारतीय विज्ञान परम्परा से पाठक को परिचित कराते हैं। शून्य, ब्रह्म, परमात्मा और सृष्टि के वैज्ञानिक रहस्य को समझने की कोशिश कराता के.पी.सिंह का आलेख पाठकों को रूचिकर लगेगा। श्रीमती मंजुलिका लक्ष्मी ने विज्ञान की हिन्दी लेखिकाओं का परिचय कराया है, तो प्रो. हरिदत्त शर्मा का आलेख संस्कृत में वैज्ञानिक वाड्मय इस दिशा में गहन शोध के लिये प्रेरित करता है। डॉ. नरेन्द्र सहगल का आलेख 'वैज्ञानिक लेखन का सफर' कठिन संघर्ष की दिलचस्प गाथा है।

स्मारिका पढ़कर संतोष होता है कि हिन्दी वाड्मय को समृद्ध बनाने की दिशा में अनेक क्षेत्रों में काम हो रहा है। इससे आशा बँधती है कि हिन्दी में विज्ञान का अध्ययन-अध्यापन असंभव बताने वालों का समाधान हो जायगा। क्योंकि अनेक युवा लेखक हिन्दी में मौलिक विज्ञान लेखन में दिलचस्पी ले रहे हैं। भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, रेल मंत्रालय आदि अनेक मंत्रालय भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में काफी रूचि ले रहे हैं। विभिन्न बैंकों द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं के द्वारा भी व्यापक कार्य हो रहा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समीक्षा

पुस्तक :उपन्यास: विकल्प
लेखक: सुखदेव प्रसाद दुबे
प्रकाशक : किताबघर, नई दिल्ली
मूल्य: 1100/-

विकल्पों के बीच विकल्प की कथा

-रमेश दवे

जीवन, जन्म से मृत्यु तक के अनेक विकल्पों की यात्रा है। मनुष्य-समाज विकल्पवान समाज है। इसीलिए समाज की प्रकृति बहुवचनीय है, बहुविकल्पीय और बहुआनुभाविक है। एक कथा-सर्जक जब जीवन की इस बहुवचनीयता से साक्षात्कार करता है तो उसके अनुभव इतने व्यापक हो जाते हैं कि उन अनुभवों को अपनी चेतना और संवेदन बना कर अपनी सर्जनात्मक बेचैनी को जाहिर करने लगता है। इसलिए कहानी हो या उपन्यास, वह अपने आधुनिक कलेवर में मनुष्य-संवेदी है, अनुभव-संवेदी है और उसे रचने वाला लेखक कहानी के ययार्थ या सत्य को अपना पाठ बनाता है तो सत्य कल्पना के स्पर्श से सौन्दर्य बन जाता है, ययार्थ का ठोस अनुभव संवेदन में बदल जाता है और रचना के शिल्प में भाषा समृद्ध हो जाती है। रचना सृजन की अभिव्यक्ति होती है। यह अभिव्यक्ति एक सर्जक कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक या अन्य किसी भी विधा में कर सकता है।

सुखदेव प्रसाद दुबे कवि-कथाकार तो दीर्घकाल से रहे हैं लेकिन तीन कविता संग्रह एवं दो उपन्यासों के साथ वे हिन्दी के सर्जक और पाठक समाज में जिज्ञासा के साथ प्रकट हुए। उनका प्रथम उपन्यास 'मनुष्य-मंथन' संयुक्त रूप से रचा गया था। समीक्षित उपन्यास 'विकल्प' उन्होंने एकल लेखक के रूप में स्वयं रचा है जो लगभग सात सौ पृष्ठों में एक बड़े और विविधता भरे फलक पर अनेक विकल्पों से आज के समाज के साभ्यतिक संकटों, संघर्षों और समस्याओं से संवेदनशील और समाज-चेतस लोगों का सामना करवाता है। उपन्यास कलेवर में विस्तृत और बहुआयामी होते हुए भी पाठ-गति में रचा गया है। कथासूत्र अनुभवों की सूक्ष्मता से रचे गए हैं जो लेखक ने प्राध्यापक, प्रशासक, पिता एवं एक सभ्यता-चेतस नागरिक के रूप में अपने सर्जन की अन्तर्भूमि में वर्षों से संग्रहीत किए हैं। इस आधार पर उपन्यास को सामाजिक-अनुभवों की ययार्थ-कथा कहा जा सकता है।

'विकल्प' की कथा मुनीन्द्र नामक एक युवक की कथा है। वह मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक, वकील, डॉक्टर और एक संवेदनशील मनुष्य है। वह स्वप्नदर्शी है, महत्वाकांक्षी है, ग्राम से जीवन-संग्राम प्रारंभ करता है और नर्मदा अंचल के कस्बे सोहागपुर से उठता हुआ विश्व के एक महादेश अमेरिका पहुँच जाता है। वहाँ ललिता जो उसकी पत्नी है, उसकी महत्वाकांक्षा और वासना के साथ वह जीवन के अनेक विकल्प तलाशता है। उसके दो बच्चे भी हैं। अमेरिका उसे अपने देश और अपने गाँव सोहागपुर जैसा नहीं लगता, वहाँ उसे अपने गाँव का नास्टेलजिया है और जब वह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अमेरिका से पिता द्वारा आत्महत्या के कारण गाँव लौटता है तो उसे अमेरिका याद आता है जहाँ उसके दो बच्चे अनुष्ठा और अनुभव एवं विलासिता ग्रस्त पत्नी ललिता है। उन्हें छोड़ कर आना और वापस जाना इन दो विकल्पों में से एक विकल्प अपने गाँव में रह कर समस्याओं, विसंगतियों, विपदाओं, पारिवारिकताओं, सिरी, शिखा, हेमा, लक्ष्मी आदि के बीच एक और जीवन विकल्प खोजने का संघर्ष है तो दूसरी ओर वह हरमीत-मारग्रेटा है जो उसकी बेटी को अमेरिका में पालते हैं क्योंकि माँ ललिता मातृत्व का विकल्प नहीं है। हरमीत प्रतिशोध की आग से बच कर परिवार और गाँव त्याग कर अमेरिका चला जाता है -वहाँ एक नया जीवन जीता तो है मगर वहाँ भी उसे अपने जीवन का सही विकल्प नहीं मिल पाता।

लेखक ने दो देशों, दो संस्कृतियों, दोनों के अन्तर-विरोधों, दो मानसिकताओं, दो महत्वाकांक्षाओं, दो-दो वासनाओं और प्रजातंत्र की प्रजा और शासक के बीच के दो-दो द्वंद्वों की एक महागाथा रची है जिसमें पात्रों की एक बड़ी श्रृंखला है, पर्यावरण प्रवचन है, जीवन दर्शन है, विडम्बनाएँ हैं, सम्बन्धों के तनाव हैं, उजड़ती पारिवारिकताएँ हैं, स्वार्थ-केन्द्र हैं और इन सबके बीच से मुनीद्र खोज रहा है अपने होने का विकल्प और अमेरिकी, जुलू अफ्रीकी, भारतीय एवं बहुराष्ट्रीयों के बीच मनुष्य होने का विकल्प। वास्तव में देखा जाए तो यह उपन्यास एक साथ अनेक विकल्पों का द्वंद्व है। लेखक ने प्रारंभ तो ग्रामीण या कस्बाई जीवन और भव्य विदेशी जीवन के अन्तर-विरोधों के विकल्प की खोज से की थी, लेकिन इस बीच विकल्पों के अनेक समूह निकल आए जो जीवन में यथार्थ से जुड़े हैं और ये यथार्थ लेखक के अनुभवों का औपन्यासिक सृजन हैं। इसमें वह सब कुछ है जो जीवन में सामान्य से सामान्य मनुष्य के जीवन में घटित होता है और वह भी है जो सामान्य से पृथक महत्वाकांक्षाओं से असामान्य बन कर सामान्य-असामान्य के बीच का संघर्ष करता है। मुनीद्र सामान्य भी है, असामान्य भी और असामान्य से वापसी के बाद पुनः सामान्य होने का एक स्वदेशी मॉडल भी।

हिन्दी के कथा-साहित्य का एक परम्परागत ढाँचा बना हुआ है जिसे कुछ हद तक जैनेन्द्र ने प्रेमचन्द के समकाल में तोड़ने की कोशिश की थी। इसके बाद निर्मल वर्मा ने सार्वभौमीकरण के प्रयोग दिए, कृष्ण बलदेव वैद ने तो भाषा, कथानक, पात्र सभी स्तर पर ऐसे शिल्पगत प्रयोग किए जिनसे उपन्यास या उनका कथा साहित्य उनकी अपनी शैली बन गया। मनोहर श्याम जोशी और कृष्णा सोबती ने भी लीक से हट कर कथा के नए रूप रचे, सुरेन्द्र वर्मा उत्तर आधुनिक परिवेश लाए लेकिन इन सबके बावजूद आज भी अगर प्रेमचन्द ही सर्वाधिक पढ़े जाने वाले कथाकार हैं तो प्रश्न उठता है हिन्दी का कथा साहित्य, प्रेमचंद से आगे क्यों नहीं गया? रेणु के प्रयोग, भाषा, ग्राम्य एवं आचंलिक जीवन ने कथा में एक नया आकर्षण तो अवश्य रचा मगर उन्हें आंचलिकता की पोशाक इस तरह पहना दी गई कि वे अपने सार्वभौमपन के साथ कई साल तक स्वीकारे ही नहीं गए। पोलिश-अमेरिकी कथाकार इसाक सिंगर यिडिश लोकभाषा में लिख कर भी यदि आंचलिक न होकर सार्वभौम है तो रेणु क्यों नहीं? रेणु शिल्प और कथात्मक संवेदन में कई बार प्रेमचंद से आगे जाते हैं लेकिन रेणु को पहले आंचलिकता के कटघरे से बाहर लाना होगा। 'विकल्प' उपन्यास में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दुबेजी ने आंचलिक से कथायात्रा का प्रारंभ कर विश्व महानगर तक के तनाव, द्वंद्व और विकल्प रचे हैं लेकिन इन विकल्पों को वे यदि कथा का एक ही केन्द्र रच कर आजमाते तो उपन्यास का संवेदनात्मक पक्ष अधिक प्रगाढ़ हो सकता था। दुबेजी ने कथा-चयन का विषय तो ठीक रखा लेकिन वे अपने जीवन के विभिन्न अनुभवों की पोटली उठा कर चले और पोटली खोलकर विकल्पों का ढेर उलट दिया जो कथा बिखराव की शिकार होकर केन्द्रीय भावभूमि से भटकती दिखाई दी। बावजूद इसके ये उनकी भाषाई एवं अनुभाविक क्षमता का प्रमाण है कि उन्होंने कथा को रोचक एवं उसकी निरन्तरता को बनाए रखने के अनेक विकल्प रचे हैं जो लगभग सात सौ पृष्ठों के उपन्यास में एक साथ जोड़ कर रख पाना कम चुनौतीपूर्ण नहीं है।

नर्मदा का तटवर्ती क्षेत्र संस्कृति, प्रकृति, खेती और साहित्यिक गति का क्षेत्र है। अमृतलाल वेगड़ ने जो नर्मदा परकम्मा की है उससे नर्मदा अंचल जीवंत हो उठा है। दुबेजी ने भी नर्मदा क्षेत्र की संस्कृति, प्रकृति, खेती के त्रिकोण के बीच एक तिर्यक रेखा खींचने की कोशिश आधुनिकता की विसंगतियों के द्वारा की तो अवश्य है लेकिन इन विसंगतियों को अनेक विकल्पों में रच देने से कथा की बुनावट थोड़ी ढीली लगने लगती है। इतना जरूर है कि यह उपन्यास अनेक शैलीगत प्रयोगों की कल्पनाशीलता का आभास देता है। भाषा का प्रवाह और बीच-बीच में यथार्थ के सपाटपन से हट कर बौद्धिक एवं दार्शनिक चिन्तन यह बताता है कि कथाकार मात्र सतही यथार्थ का लेखक नहीं है बल्कि उसके पास सांस्कृतिक बोध है, बौद्धिक विवेक है और भाषाई शिल्प है। शिल्प के उदाहरण तो प्रारंभ से ही मिलते हैं जब के प्रथम अध्याय का पहला विकल्प 'औरत या ईश्वर' देकर कथा के प्रति आकर्षण उत्पन्न करते हैं। आरंभ को भी वे जब 'अन-आरंभ' का नाम देते हैं तो लगता है कथा का अनंत किसी भी अध्याय से संभव है। दूसरा विकल्प वे 'भाग्य और कर्म' के बीच खड़ा करते हैं। इसे ही वे आरंभ भी कहते हैं। तीसरा विकल्प-'हृदय और मस्तिष्क' का है। 'भारत छोड़ो' का भी एक विकल्प वे व्यंग्यार्थ में प्रस्तुत करते हैं। ललिता, सिरी, शिखा के बीच वे स्त्री मानसिकता के पारिवारिक-सामाजिक विकल्प रचते हैं जो देश और विदेश के परिवेश से पैदा होता है। ललिता और मुनीन्द्र के बीच प्रिय-अप्रिय का द्वंद्व भी दो मानसिकताओं का द्वंद्व है। स्वास्थ्य संगठनों की भूमिका भी यहाँ उजागर की गई है। भूख, भोजन, भय और भोग की वे जो विसंगातियाँ रचते हैं उससे हमारे सामाजिक जीवन के विद्रूप प्रकट होते हैं। प्राक्कथन, प्रेरणा, कुलवृक्ष, कुलकथा एक प्रकार से परम्परा का नास्टेलजिया है। उपन्यास का तीसरा भाग दुबेजी ने 'अन-अंतिम' से रचा है जो अन-आरंभ का आगामी संस्करण है। 'एकोहं बहुस्याम' में एक ओर अनेक का दार्शनिक स्वरूप रचने की कोशिश की गई है। खण्ड चार में अंत लिखते हुए 'संघर्ष या समर्पण' का विकल्प रचा गया है।

अध्याय पाँच 'अंत या अनंत' की कथा रचता है जहाँ लोकसेवा और लोकप्रेम का विकल्प रचा गया है। लेखक उपन्यास के अंत तक पहुँच कर निराकरण तो नहीं देता, समस्याएँ हैं, वे कभी समाप्त नहीं होतीं। उनका विकल्प तो हो सकता है किन्तु अंत नहीं? वे अनंत हैं। इसलिए उपन्यास समाप्त होते-होते लेखक को एक दार्शनिक विचार गांधी के माध्यम से देता है और अंतिम वाक्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रचता है- "रास्ता एक ही है। रास्ता यही है। देह में छिपी आत्मा का बोध-आत्मजागृति। विकल्प मात्र सब भ्रम है"।

इस उपन्यास की मुख्य विशेषता है हमारे देश में मौजूद व्यवस्थागत विसंगतियों और विद्रूपताओं का उद्घाटन। मुनीन्द्र और उनके भार्गव परिवार से अनारंभ और अन-अंत तक बहती यह कथा एक ऐसी नदी की तरह है जिसके प्रवाह को अनेक प्रशासनिक टिबड्डे रोकते रहते हैं। कस्बे के दफ्तर हों, जिले के अधिकारी हों, पुलिस तंत्र की उलझाऊ और भ्रष्ट प्रक्रिया हो, अदालत हो, राजनीति और राजनेता हों, विधायक, सांसद एवं तरह-तरह के जन-प्रतिनिधि मंत्री आदि हों, ये हमारे लोकतंत्र की वास्तव में तो अनुशासनबद्ध और पवित्र व्यवस्था के अंग होने चाहिए लेकिन लेखक ने इनमें मौजूद विसंगतियों, जन विरोधी एवं संवेदनहीन लोकसेवा को जिस भाषा और जिस अनुभव के साथ लिखा वह उपन्यास में जिज्ञासा जागृत करता है। जब ग्राम्य, कस्बाई, महानगरीय एवं विदेशी जीवन की चर्चा लेखक ने की है तो यह भी स्पष्ट किया है कि विदेश जाना उपलब्धि या गर्व का विषय या आर्थिक समृद्धि का विषय नहीं है बल्कि वह हमें संस्कृति-विमुख अपने भारतीय लोकाचारों के सौन्दर्य से भटका कर हमारी रूचियों को विकृत भी करता है।

उपन्यास में जहाँ-जहाँ लेखक का वैचारिक या दार्शनिक हस्तक्षेप हैं, वहाँ उपन्यास भाषागत सौन्दर्य से खिल उठता है। बावजूद इसके यदि यह कथा अनेक स्तरों या गलियारों में रच कर बिखराई न जाती तो यह एक काम्पेक्ट और अधिक गहन एवं संवेदनशील उपन्यास हो सकता था। यह उपन्यास अनेक कथासारों को चुन कर पृथक से लिखा जाता तो इसमें कम से कम तीन उपन्यासों की रचना की संभावना थी जो दो प्रकार के जीवन की विसंगतियों, प्रशासनिक कुटिलताओं और जीवनगत सामाजिक विकृतियों के बीच जाने की मजबूरियों के कथानकों के साथ रचा जा सकता था। उपन्यास बावजूद अपने बड़े आकार के पढ़ने की उत्सुकता पैदा करने में सफल है।

एस.एच. 19, ब्लॉक-8,
सहयाद्रि परिसर, भदभदा रोड, भोपाल (म.प्र.)
मो. 94065 23071

समीक्षा के अभिनव सोपान-एक दृष्टि

-भगवान दास जैन

हिन्दी के समकालीन नवगीतकार तथा बहुआयामी कवि पं. गिरिमोहन गुरु की नव गीतिकाव्य कला पर केन्द्रित तथा लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार व प्रबुद्ध समीक्षक डॉ. पशुपति नाथ उपाध्याय द्वारा सुसंपादित ग्रंथ 'समीक्षा के अभिनव सोपान' शिव संकल्प साहित्य परिषद् नर्मदापुरम् द्वारा प्रकाशित हुआ है। इस समीक्षा ग्रंथ में भारत के कोने-कोने से हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वज्जनों द्वारा श्री गिरिमोहन गुरू के गीतों, नवगीतों पर लिखित कोई ४४-४५ आलेखों का सुष्ठु एवं सम्यक संचयन व संपादन किया गया है। परिशिष्ट के रूप में कुछ महत्वपूर्ण पत्रांश और विभिन्न प्रादेशिक पत्रिकाओं के गुरूजी के गीति कला विषयक मंतव्य भी प्रकाशित किये गये हैं। इन पत्रांशों और मंतव्यों से जहाँ एक ओर गुरूजी के कवित्व की व्याप्ति, विविधता एंव उत्कृष्टता का पता चलता है वहीं दूसरी ओर डॉ. उपाध्याय की विलक्षण संपादन कला भी स्पष्ट व्यंजित होती है।

बी-१०५ मंगल तीर्थ पार्क, समीप कैनाल
जसोदा नगर मार्ग, मणिनगर (पूर्व)
अहमदाबाद ३८२४४५ (गुजरात)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समीक्षा

पुस्तक: गैर हाजिरी के बावजूद
लेखिका: सूर्यबाला
प्रकाशक:अमन प्रकाशन,
कानपुर-208012(उ०प्र०)
मूल्य: 225 रूपये मात्र

'जीवन-सागर से मोती चुनती गैरहाज़िर स्त्री'

-मैथिली साठे

हिमालय के गर्भ से जन्मीं नदियों का लक्ष्य सागर में जा मिलना तो है ही; अपनी विशाल जलराशि सौंपना भी है, निरपेक्ष-निस्वार्थ भाव से। अस्तित्व-कीर्ति की चिंता उसे कहाँ? अपनी अमृत-बूँदों से मैदान-कछार सींचने हैं, तृषा बुझा; जीवनदान देना है, बहना है; सदा पथरीले रास्तों से; झाड़-झंखाड़ सहित, तभी तो वह पूजनीय है, माता है हम सबकी। सामंजस्यपूर्ण प्रकृति के कारण ही तो वह उद्दाम-हुंकारते सागर में विनीत भाव से विलीन हो जाती है, कि उसके मुहाने सैरगाह बनें; बच्चों की किलकारियाँ गूँजें और शुरू हो स्टीमर-जहाजों वाली पनीली दुनिया! नदी को और चाहिए भी क्या? यही तो है उसका मौलिक-सुख। सच है; पाने से कहीं ज्यादा सुख, देने में है। जो इस रहस्य को समझ ले गया, उसने जीवन-सागर से मोती चुन लिया समझिए।

इस संकलन को पढ़ते हुए लगा कि सूर्यबालाजी की कथा नायिकाएँ उपर्युक्त रहस्य को समझने में सफल रही हैं। कथाकार की कलम-कूची गंभीर परिस्थितियों-अनुभूतियों की शिनाख्त कर विहंगम दृश्य और बोलते चित्रों की सृष्टि कर देना सूर्यबाला जैसे समर्थ कथाकार के लिए ही संभव है। इन स्त्रियों की मर्मस्पर्शी वेदना को पाठकों की अनुभूति प्रत्यक्ष में परिणित करने की कला में भी वे सिद्धहस्त मालूम होती हैं। भूमिका के आधार पर ये ठीक है कि ''औरतों की ये जिन्दगियाँ रचनाकार के मानस की कल्पनाएँ नहीं हैं'' किन्तु लेखिका स्त्री जीवन की सीमा के वितान (विस्तार) को भी भलीभाँति जानती हैं, यह भी कि केदारनाथ, नेपाल की त्रासदी प्रकृति की असीम शक्ति-सामर्थ्य के प्रदर्शन के साथ ही साथ चेतावनी भी है कि लास्य-तांडव दोनों उसमें अवस्थित हैं। इसी से, बड़ी सजगतापूर्वक प्रत्येक स्त्री के आहत स्वाभिमान और त्रासद यथार्थ को रेशमी स्पर्श से सहेजा-सँवारा है।

इन कहानियों की नायिकाएँ निष्काम कर्मयोगी हैं। उनकी कर्मनिष्ठा और पुरुषार्थ के आगे सभी नायक बौने दिखाई देते हैं। भूमिका लिखने वाली डॉ.वंदना शर्मा ने बिल्कुल ठीक लिखा है कि ''सूर्यबाला का ऐसा हर स्त्री पात्र अपने होने में आदमकद है''। रमन की चाची के 'नवाब' और आदमकद के 'कामता मामा' दोनों ही अकर्मण्य बोदे हैं तो 'मेरी शिनाख्त' के कुमार और 'सुनों सुमित' .... के सुमित बेहद महत्वाकांक्षी। उनके लिए स्टेटस, पैसा ज़्यादा जरूरी है। चाची की हत्या का साहस किसी में नहीं, वह तो अपनी सहिष्णुता की पराकाष्ठा के बूते मानो इच्छामृत्यु का वरदान माँग ले गई। बचपन में पिता के घर से लाल ओहार में पालकी चढ़ कर आई थी,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
ससुराल से भी अर्थी चढ़, सुहागन बन; शान से बिदा हुई। रमन की चाची जैसी स्त्रियाँ इहलोक नहीं परलोक को भी मुट्ठी में कैद कर, नियति को चुनौती देती होती हैं। ऐसे कितनी अग्निपरीक्षाओं का स्वेच्छा-सहजता से सामना करती वे कुंदन सी दमकती हैं, जीवन-कानन में परित्यक्त हो जाने पर भी हिम्मत नहीं हारतीं, तब तक जब तक वह चाहे और एक दिन उसकी आर्तपुकार को समानधर्मा धरित्री सुनती हैं और दोनों एक-दूसरे में समा जाती हैं सदा के लिए ......

आज सर्वत्र स्त्री विमर्श के बहाने उसकी अस्मिता, स्वतंत्रता पर बहस छिड़ी हुई है किंतु सूर्यबाला की प्रत्येक स्त्री ने साबित किया है कि वह अ-बला नहीं है। यह तो उसी ने ऐसी लक्ष्मण रेखा खींच ली है कि उसका उल्लंघन वह करना ही नहीं चाहती। शायद इस रेखा के उल्लंघन का दुष्परिणाम वह जानती है। चाहे गीता चौधरी और कौमुदी हों या 'गैस' की अध्यापिका या फिर सुमित की पत्नी विनीता; उचित समय और आवश्यकतानुसार उनके आत्मविश्वास ने पूरी ठसक के साथ अपने सामर्थ्य की गवाही दी है।

भूमिका में एक बात और लिखी गई है जो उचित भी प्रतीत होती है- ''इन कथाओं में रची बसी औरतों का आम होना ही इस संकलन की विशेषता है''। तभी तो नवाबिन बहू (रमन की चाची) के नैन-नक्श पर टीका-टिप्पणी करती अम्माएँ, कितने ही घरों में दिखाई दे जाएँगी। हो सकता है संयुक्त परिवारों में अपेक्षाकृत यह समस्या अधिक हो किंतु आदमकद की 'मामी' क्यों भला बदसूरत कहाई जाए। श्रम में तो वह पुरुषों को भी लजा दे। वास्तव में स्त्री के अंतर्बाह्य सौंदर्य की तूलिका समान होना चाहिए। दादी-नानी-माँ और पुरखिनों से लेकर स्वयं मेरी पीढ़ी तक की स्त्री ने अपनी 'स्त्री' को जिलाए रखने के लिए बेहद संघर्ष किया है। इस संकलन की कहानियों के समान ही कई बार स्त्री ने ही स्त्री के अस्तित्व को कुचलने का षड्यंत्र रचा है। यूँ भी भारतीय संस्कृति के ताने-बाने में अपने अस्तित्व के तंतु खोजती स्त्री, युगों से पुरुष प्रधानता का दंश भी झेलती आई है।

आज स्त्री-पुरुष समानता की बातें करने वाली आधुनिकाएँ भी कम नहीं हैं। उसके दुष्परिणाम भी अलगाव के रूप में देखे जा रहे हैं। अहं की वेदी पर चढ़ते हैं पति-पत्नी किंतु बच्चे एकाकीपन की ज्वाला में झुलस रहे हैं। कुटुंब समाज भी इसकी आँच से अछूते रहीं रह पाते। फलस्वरूप युवाओं में नशाखोरी की प्रवृत्ति एवं लिव इन रिलेशनशिप जैसी विकृत पारिवारिक संरचना का चलन बढ़ गया है। प्रश्न यह उठता है कि गैरहाजिर होते हुए भी हाजिरी देती इस संकलन की स्त्रियाँ मध्यम वर्गीय परिवारों से हैं लेकिन इसका उत्तर क्या यह नहीं कि स्त्री के अस्तित्व के लिए पारिवारिक पृष्ठभूमियाँ उतना असर नहीं डालतीं और यहाँ विमर्श परिवेशगत न होकर समग्रता में अभिव्यक्त हो रहा है। सूर्यबाला की प्रत्येक स्त्री विवेकशील है। सीता के आदर्श रूप की प्रतिकृति है। आत्मगर्भा है, स्वयंसिद्धा है, कल्याणी है तभी तो बेटी, बहिन, पत्नी, माँ, भाभी, बहू के रूप में कुटुंब का कल्याण करती चलती है। अपने बारे में सोचने का समय ही नहीं निकाल पाती। तभी तो चूल्हे-सिगड़ी के दमघोंटू धुएँ में भी जी जाती है, कपड़े तहाती, पीतल के बड़े-बड़े हंडे-परातों को रगड़ती-चमकाती, बीमार पति की तीमारदारी करती, धान कूटती, सुलभ की पढ़ाई-लिखाई-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परवरिश का जिम्मा अकेले सँभालती है। बहुत हुआ तो उफ् कर देगी बस! वह भी बिना ऊब-झुंझलाहट के, अपनी थकान मिटाने को, किंतु इतनी चौकन्नी होकर कि आवाज कहानी पुस्तक से बाहर न जाने पाए।

रमन की चाची सास, जेठानियों और बोदे पति की ज्यादतियों को इसी जन्म में पूरा पाना चाहती है ताकि शेष न रहे कुछ आगे के लिए। बच्चों और पति की सेवा में लगी सुम्मी चाय की चुस्कियों में डूबी अपने बचपन की दुनिया में खो जाती है अक्सर। उत्तरार्ध की स्त्री बदहवास सी बनाने-धोने-सुखाने में व्यस्त है। सबको जोड़े रखने के चक्कर में वह टूटती जा रही है। आदमकद परिश्रमी मामी पति के बोदेपन को जानते-बूझते स्वीकार ही नहीं करती तो स्वत: एक पथरीली अभेद्य दीवार बन अपने परिवार की रक्षा भी कर ले जाती है। कौमुदी के यक्ष प्रश्न दोगुने-चौगुने होकर उद्वेलित करते हैं, लेकिन अपनी मर्जी से किए विवाह के रूप में समाज को नई दिशा देते हुए एक सटीक उत्तर भी दे जाते हैं। अनाम लम्हों के नाम वाली स्त्री घर-गृहस्थी के झंझावातों में सहनशीलता से पति की हर कमजोरी, हद से ज्यादा कंजूसी को परिवार चलाने के लिए आवश्यक करार देती हुई समझौता भी कर लेती है और छोटे बेटे का बिन माँगा आश्वासन भी पा लेती है। गौरा के जीवन की सुखान्तता एक आदर्श गुणवंती स्त्री के अनाथपन के बोझ से कहीं ज्यादा दूसरों पर बोझ की कसमसाहट को तो विलीन करती ही है। ताई के आशीष पाप-पुण्य के सबक के खजाने को भी अंतर्ध्यान कर लेती है। विम्मी का पति कुमार अपनी बढ़ती महत्वाकांक्षा के स्वप्न पत्नी की ब्रोकेड वाली मैक्सी, पतली आई लैशेस और बनावटी आचार-विचार के सहारे देखता है। लेखिका ने विम्मी की कसमसाहट को बेहतरीन ढंग से उतारा है- (पृ0 83) और रसोइये 'केशी' के माध्यम से वर्तमान मानसिकता की स्पष्ट तस्वीर खींची है (पृ0 82)।

गीता भाई-भाभी की सेवा, छोटे भाई के लिए अपनी इच्छाओं का त्याग, माता-पिता की इच्छा के लिए करती है पर भीतर के ज्वालामुखी के फटते ही जीवन की समझौतावादी विवशता के साथ-साथ भ्रष्टाचार की चिनगारियों के लावे को भी बहा ले आती है पैने प्रश्नों के साथ। कात्या अपने पति की कमजोरियों और बदमिजाजी का कारण स्वयं को मानते हुए मेधा से उन्हें ढाँप कर मुक्त हो लेना चाहती है उसकी यह सोच उसे किसी शापग्रस्त देवी के पद पर आसीन करने में समर्थ है (पृ0 107)। गैस के नायक महेश के पास गैस, खाना, रसोई, बच्चों की पढ़ाई और ऐसी अनगिनत माथा पच्चियों के लिए समय कहाँ वह तो औरतों ....। महेश का मूड-ईगो, बच्चों की जवाबदारी, मेहमाननवाजी, नौकरी की दुहरी-तिहरी भूमिका निभाती उसकी स्त्री अंत तक कोशिश करती है हार नहीं मानती। स्त्री के कारनामे की पीड़ा 100 में से 10 महिलाओं को भाग्य से मिलती है किंतु पत्नी की दुनिया है पति-बच्चे। अपनी सारी थकावट, मेहनत के बदले वह केवल प्यार पाना चाहती है अपने छोटे से वजूद को पाना चाहती है। सुख-सुविधा, संपन्नता से ज्यादा उसे अपनापन चाहिए पर निष्फल होने पर उबल पड़ती है। सुमिन्तरा भी आदमकद भाभी की तरह है कर्मनिष्ठ। पृ0 125 .... में उसका पति ढोढे उसके पुरुषार्थ को खुल कर स्वीकार भी करता है। झुमरिया का स्टार्ट होती टैक्सी पर रेत, मिट्टी, कीचड़ फेंकते हुए 'ढोढे मर गिया' चिल्लाना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तथा दोनों बहनों (पिमरिया, झुमरिया) का मुंडी से मुंडी सटा कर मिट्टी को ढोढे की कब्बर की शक्ल देना प्रकारांतर से उसी आक्रोष को व्यक्त करता है जो शायद नाम मात्र के पति के बारे में तरह-तरह की बातें सुनती पखखान बनी सुमिन्तरा न कर पाई। सुनो सुमित ...... की विनीता यों सन्नाटे में जीना नहीं चाहती किंतु सीखना नहीं पड़ता उसे कैसेट्स से संगीत के मद्धम सुरों को सजाना।

इन सभी स्त्रियों की भावाभिव्यक्ति में सूर्यबाला के भाषिक अधिकार-सामर्थ्य की मुक्त कंठ से जितनी प्रशंसा की जाए, कम है। अंचल, आयु, पात्र का ध्यान रखते हुए बड़ी सजगता से कथन कहे हैं। 'आदमकद' में लाजवंती की बेटी के मुख से निकले शब्द- ''नई मैं ....'' (पृ0 43) तथा सुमिन्तरा की बेटियाँ कहानी की छोटी लड़की ''सु .... है'' (पृ0 123) भाव विभोर कर देते हैं। रमन की माँ के कुछ गावड़ी से शब्द- ''अरे ....'' (पृ0 15) तथा चाचा के लिए ''भर्र-भर्र'' जुगाली करते बैल का प्रतीकात्मक कथन उनके पूरे व्यक्तित्व को उजागर कर देता है। सूर्यबाला की भाषा पात्रों की तरह ही ''आम'' है किंतु कुछ-कुछ प्रादेशिकता, आँचलिकता का पुट लिए है। कहानियों की तरह ही बेहद मिठास भरी। परिवेश-परिस्थितियों का विष्लेषण भी सूक्ष्म तथा यथार्थ से भरा। भाषा में, शब्दों में हिलोर है, जीवंतता है, कितने ही शब्द पाठक के लिए नए होने पर भी अर्थ खोजने की आवश्यकता नहीं रखते। हर पंक्ति शब्द को लेखिका पात्रों की भावनाओं से ही समझाती चलती है।

मल्लाहों के लोक जीवन, संस्कृति के जिन प्रसंगों को उद्घाटित किया है वे बेहद रंगीन हैं। ''और देखते ..... चीखती रही (पृ0 125)। गौरा गुनवंती कहानी में लगुन जैसे मांगलिक क्षणों में गाए जाने वाले मंगल गीतों ने प्रसंग और परिस्थिति में संवेदनशीलता के साथ-साथ रौनक भर दी। आदमकद में भाभी के गाँव की संस्कृति से परिचित कराते हुए- ''आँगन ...... जाने लगे (पृ0 47)।

इस संकलन की मिठास भरी कहानियों में, कहीं-कहीं नमकीन स्वाद भी मन को खिन्न करता रहा। त्रुटि प्रूफ रीडिंग की रही या कोई जल्दबाजी, पृ072 पर गौरा गुनवंती के बीच पुनः 'अनाम लम्हों के नाम' कहानी पढ़नी पड़ी। यानी पृ0 72-73 के बीच दूसरी ही कहानी के पृष्ठ छप गए (संस्करण प्रथम 2014) बीच-बीच में भी प्रूफ रीडिंग की गलतियों से व्यवधान आते-जाते रहे। एक वरिष्ठ कथाकार के श्रेष्ठ कथा संग्रह में, ऐसी चूक को पचा पाना जरा मुश्किल रहा। बहरहाल इस संकलन की उत्कृष्ट कथा सृष्टि एवं भाषा शैली के लिए अनेकानेक शुभकामनाएं ....।

सी-48, बरफानी धाम,
होशंगाबाद रोड, भोपाल-26 (म.प्र.)
मो. 09425117332

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समीक्षा

पुस्तक : तलाश सही आदमी की
लेखक: सत्यप्रकाश सक्सेना 'चिराग'
प्रकाशक: भेल साहित्य परिषद, भोपाल
मूल्य: 150/-

लिखि लिखि कागद कोरे

-माताचरण मिश्र

सत्यप्रकाश सक्सेना 'चिराग' का कवि निजी अनुभवों और अनुभूतियों पर विश्वास करते हुए अपनी निजी भाषा के साथ काव्य-यात्रा का आरंभं अपने प्रथम काव्य संग्रह 'पहले मुझे कहने दो' के साथ सन् उन्नीस सौ अस्सी में करता है। 'तलाश सही आदमी की' उनका दूसरा काव्य संग्रह है जो पैंतीस वर्षों बाद प्रकाशित हुआ है और इस तरह इस दृष्टि से भी देखा जाए तो कवि भी अब प्रौढ़ हो गया है, परंतु उसकी काव्यात्मकता किसी भी प्रकार चुकी या शेष हुई नहीं दिख पड़ती है और उन्हें कुछ और प्रखर, धारदार और परिपक्वता प्रदान करती दिखाई पड़ती है। एक सजग चेतन कवि के रूप में कहीं उसका मानना भी यही है कि सच्चा आदमी दुनिया का सबसे झूठा आदमी होता है, प्रख्यात चित्रकार और पेंटर पाब्लो पिकासो ने कहा था कि 'कला एक ऐसा झूठ है जो जीवन के सच से परिचित कराता है,' कविता भी अन्तत: कला इन्हीं अर्थों में है कि वह हमें जीवन के उसी सच से परिचित कराती है जिन्हें हम लिख-लिख कर झूठा करते जाते हैं।

प्रस्तुत काव्य संग्रह में कवि ने जीवन के उन मानवीय सत्य जो भले ही एक बारगी दिखने में न आयें परंतु उनमें जीवनानुभवों का गहरा अर्थ संग्रहित है जैसे उनकी 'चेतावनी' कविता जो पृष्ठ 16 में पढ़ने आती है -'दो इंच की जिभ्या। छः फुट ऊँचे आदमी को। कत्ल कर सकती है'। एकाएक हमें किसी पुराने कवि का कहा याद आता है-'बातहिं हाथी पाइये बातहिं हाथी पाँव' कविता के पुराने संदर्भ हमें जीवन हमें जीवन के बदले सच से इसी तरह परिचित कराते हैं, इसी तरह उनकी एक और कविता '' अच्छा आदमी हुआ करता था।' पृष्ठ 25 में पढ़ने में आती है, कृपया उसे भी ध्यान से देखें - ''क्योंकि अच्छा आदमी भी। अब चिड़ियाघर की वस्तु है। हमारी आने वाली पीढ़ी के लिए। इस अजूबा चीज को बचाए रखना। बेहद जरूरी है। ताकि नई पीढ़ी इस बात पर विश्वास कर सके। कि किसी जमाने में अच्छा आदमी हुआ करता था।'' कवि की काव्योक्तियों में कविता के तपे हुए अनुभव हैं और यह अनायास भी नहीं आई है उनमें जीवन के गहरे व्यंग्यबोध भी हैं जो चुटकियां जैसे लेते हैं कि तिलमिला कर निरुत्तर रह जाना पड़ता है।

बहके हुए साहित्यिक माहौल, में उनकी एक कविता 'गिरोह' विशेष रूप से दृष्टव्य है-'अफसोस तो है / कि हम किसी माधो सिंह / किसी मोहरसिंह के गिरोह में / शामिल नहीं / वरना हम भी / इनामी डकैत होते।' संग्रह की अन्य कविताओं में मानवीय जीवन के ऐसे हो सत्यान्वेषी स्वप्नबिम्बों का यथार्थपरक शब्द चित्रण है जिनमें कवि की आस्था और विश्वसनीयता को भलीभाँति परखा जा सकता है। कुल मिलाकर ये एक प्रबुद्ध काव्यधर्मी कवि की संस्कारशील कविताएं हैं। रेखाचित्रकार राघवेन्द्र तिवारी के रेखाचित्रों ने काव्य संग्रह को आकर्षक रूपसज्जा दी है। उम्मीद है कविता के सहृदय पाठकों में अपनी पठनीयता के कारण 'तलाश सही आदमी की' को अवश्य सराहा जाएगा।

ए,19 मिनाल रेसिडेंसी
गोविन्दपुरा, भोपाल 462023 (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समीक्षा

पुस्तक :नमि मेरी आंखें
लेखक: राज हीरामन
प्रकाशक:स्टार पब्लिकेशन प्रा. लि.
मूल्य: 250/-

नमि मेरी आँखें

-गोवर्धन यादव

स्टार पब्लिकेशन प्रा.लि. से प्रकाशित कविता संग्रह ''नमि मेरी आँखें'' मारीशस के यशस्वी कवि राज हीरामन का यह दसवाँ कविता संग्रह अभी हाल में ही प्रकाशित होकर आया है। इससे पूर्व आपके नौ कविता संग्रह (1) कविताएं जो छप न सकीं (2)छपकर रहीं कविताएं (3) चुभते फ़ूल(4) हंसते कांटे? (5)अंधेरे का उजाला (6) उजाले का अंधेरा (7) धरती तले अंधेरा (8) एक जमीन आसमान पर (9) नेहा की निधि प्रकाशित हो चुकी हैं. ''नमि मेरी आँखें'' सद्य: प्रकाशित है..

इस कविता संग्रह में कुल 43 कविताएँ प्रकाशित हैं, जिसमें अधिकांश कविताएं वियोग को लेकर लिखी गई हैं। कवि ने संग्रह को जो शीर्षक दिया है तथा अपने वक्तव्य में इस बात का उल्लेख भी किया है कि ये कविताएं उनकी दिवंगत पत्नि श्रीमती ''नमि'' की विरह पीड़ा में लिखी गई हैं। उन्हें केन्द्र में रख कर कवि ने अपने जज्बातों को उजागर करने का उपक्रम किया है। जिन्हें मैंने काव्य-भाषा, काव्य-अवधारणा आदि को लेकर अपने विवेक के आधार पर कुछ वर्गों में बांटने का उपक्रम किया है। यथा-

(1)स्वप्न बुनती कविताएँ और उसकी छायाओं को लेकर लिखी गईं कविताएं -आज, आए मौसम जाए मौसम, साथ संग, याद आती हो, रे तकिया, अमरत्व, शांति दूत, तमाम परिवर्तन और उतार-चढ़ाव तथा पैबंद पे पैबंद

(2) रागात्मक संबंधों को लेकर बुनी कविताओं में - कर ले श्रृंगार सखी, सपने में आई थीं तुम, कहीं, टूटा पर झुका नहीं. हौले-हौले, अरसों का प्यार

(3) वियोग को लेकर कविताओं में- ख्वाब बुने, साधना, कुछ आंसू, जख्मों पर पैबंद, कितना अच्छा था, सखी कह कर जाती, दर्दे घाव का फ़ूल, के लिए, आ जाओ तुम, अलविदा, बोलती लाशें, मेरा दर्द, अलग रास्ते

(4) प्रेम में डूबे मन को लेकर लिखी गई कविताओं में- मत पूछ, एक गीत गा रहा हूँ, शब्द आदि

(5) बादल को उमड़ता-घुमड़ता देख कर लिखी कविताएं- जा रे बारिश, आ रे बादल, बादल बन के आउंगा, रूठ कर आया हूँ, बादल घोड़ा, बारिश की रात

(6) अन्य में- बिकाऊ है देश, किसमें कितना दम है, दुनिया गोल है, गुरु के दोहे, दिया हूँ मैं, हां मैं दर्द बेचता हूँ, आ रे पंछी, रोटी और वोट, दिन शाम हुआ, बिम्ब, सूरज जेल में, आँखें, लगा आग पूंछ में, सूरज खोता नहीं, नीलकण्ठ तथा चाचा रामगुलाम आदि कविताओं को भी वर्गीकृत किया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जा सकता है, विविधताओं से भरे इस संग्रह के लिए लेखक साधुवाद का पात्र है। संग्रह में वर्णित कविताओं को पढ़ते हुए कहा जा सकता है कि-

कवि के भीतर मौजूद व्याग्रता, व्याकुलता और अधीरता के बावजूद भी ध्यान, मनन, चिंतन, धीरता, मंथरता और गंभीरता के साथ उनकी कविता ज्यादा दिखाई देती है। इन कविताओं में प्रेम की मधुर आँच है, प्रणय की ऊष्मा है और प्रेम का लौकिक सौंदर्य है, जो देश और दुनिया की सीमाएं स्वीकार नहीं करता। निश्चित ही कहा जा सकता है कि आपका प्रेम असीम और निश्छल रहा है। कवि ने अपने रागात्मक संबंधों को लेकर एक काव्यात्मक दुनिया निर्मित करते हुए अपने दुख-सुख, आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, संकल्प-स्मृतियों को अलग-अलग कोण से उल्लेखित किया है, इन कविताओं को पढ़ते हुए यह भी महसूस होता है कि तमाम तरह की ऐन्द्रिकता के बावजूद उनमें नारी के प्रति असीम सम्मान का भाव रहा है।

कवि ने अलक्षित रह जाने वाले प्रसंगों और भावों को पकड़ने की एवं अपने आसपास के जीवन और जीवानुभवों में धंसते हुए उन तमाम बिंदुओं को पकड़ने की भी कोशिश की है। कविताएं तो कई बार डायरी के पन्नों की तरह पर्सनल बातों को उजागर करती प्रतीत होती हैं। पति-पत्नी के संबंधों पर आधारित कविताओं में एक 'ताप' देखा जा सकता है, तो कहीं आलोचनात्मक टीपें भी हैं।

अपने छोटे-छोटे निजी दुखों के बीच रहते हुए काव्य संभावनाओं का सफरनामा लिखने में कवि का आत्मगत संसार बार-बार व्यक्त होता है। और उसने एक सचेत कवि की तरह अपने समय के सत्य को अपनी आँखों से देखने का और बतलाने का रास्ता चुना। कई छोटी-छोटी अन्य रचनाएं भी संग्रह में अपना विशेष स्थान बनाते हुए दर्ज हुई हैं, जिनकी गूंज देर तक मन में बनी रहती है।

संकलन की कविताएं राज हीरामन के रचनाकार के आत्म का पारदर्शी प्रतिरूप है। छल-छद्म, दिखावे और सारी बनावट से दूर, लाभ, लोभ वाली आज की खुदगर्ज दुनिया में, एक सरल, सहज, निष्कुंठ, निर्मल मन से हमारा सादर अभिवादन।

103, कावेरी नगर,
छिन्दवाड़ा 480001 (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समीक्षा

पुस्तक : माँ और बचपन
लेखक: कशिश और काश्मिक
प्रकाशक: बाल साहित्य केन्द्र, भोपाल
मूल्य: ४0/-

बाल मन को प्रोत्साहित करती कविताएं

-राधारानी चौहान

बाल-मन सहज, सरल, निर्दोष होता है, भावों की गागर यदि बचपन में ही भर-भर कर छलकने लगे, सम्वेदनाओं को अक्षरों की पहचान मिलने लगे, तो समझ लेना चाहिये बच्चे में रचनात्मक गुणों की अनुपम निधि अवश्य समाहित है, क्योंकि-होनहार बिरवान के, होत चीकने पात। काव्य संसार में सदैव विचरण करने वाली श्रीमती कुलतार कौर कक्कड़ ने अपने गुणों को अपनी बेटियों, नातिनों को संस्कारों के रूप में अन्तर्धारा के रूप में प्रवाहित किया है।

आज मेरे हाथों में कशिश और काश्मिक दोनों जुड़वा बहनों की पहली पुस्तक 'माँ और बचपन' कविता संग्रह है। मुझे सबसे ज्यादा आकर्षक कवर पेज लगा, जो कशिश और काश्मिक का बचपन बयां कर रहा है। ममता की छाँव तले बीत रहा बचपन, उनकी किलकारियों से गूँज रहा आँगन। चित्र देख अनायास ही ये पंक्तियाँ लिख बैठी। इन पचास कविताओं में कशिश और काश्मिक ने पचास तरह के रंग भर दिए हैं, पढ़ कर ऐसा लगा, जैसे किसी सुन्दर बाग में हर रंग, हर रूप के फूल खिले हुए हों। इतनी छोटी सी उम्र में इन बच्चों ने संसार की हर गतिविधि को अपनी नन्हीं लेखनी में समेटने का सराहनीय प्रयास किया है। घर, परिवार, समाज, देश, प्रदेश, पर्यावरण, भाषा, पर्व, प्रकृति को अपनी कुशाग्रता एवं बुद्धि कौशल से शब्दों में बाँधा है। इन भावी कवियित्रियों ने कुछ सपने देखे हैं, वह भी खुली आँखों से। तभी तो उनकी पैनी लेखनी सुखद भविष्य की कल्पना को साकार करना चाहती है-

आज की बालिका/जीना चाहती है कुछ अलग ढंग से/ एक चिड़िया की तरह उड़ान भरना चाहती है/एक स्वतंत्र नदी की तरह/अपने उत्साह से पार करना चाहती है।

समाज की वर्तमान स्थिति के प्रति भी इनकी कलम चिन्तित है, देखिए-

भारत घिरा हुआ है / एक काले साए से, जिसका नाम है भ्रष्टाचार/रोको इसे रोको, वरना हो जाएगा संहार।

इन किशोर रचनाकारों ने जीवन के सभी पहलुओं का बड़ी बारीकी से अवलोकन और मूल्यांकन भी किया है। इनकी कविताएँ छन्दों की प्रतिबद्धता में बंधी नहीं हैं परन्तु भाषा-सौन्दर्य, शब्दों की सरल-सहज अभिव्यक्ति में स्वत: ही झलकता है। मनोरंजन की क्षमता और रोचकता से भरपूर सभी कविताएँ बाल-मन को कहीं न कहीं प्रोत्साहित करती दिखती हैं। इन किशोर कवियित्रियों की लेखनी सकारात्मक जीवन जीने की प्रेरणा देती है। उन्हें ढेर सारी मंगलकामनाएं।

७७, गोमती कालोनी
नेहरू नगर,
भोपाल-४६२००३ (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पत्रांश

अक्षरा का १३८ वां अंक मिला। इधर कितनी ही पत्रिकाएं आ रही हैं किंतु अक्षरा का अलग तेवर, ज्वलंत चिंताएं इसे और अधिक विशिष्ट एवं अनिवार्य बना रहा है। श्री रमेशचन्द्र शाह का मूल्यबोध को लेकर श्रीमद्भगवतगीता का अनुशीलन अद्भुत अंतर्दृष्टि देता है, वह भी भारतीय, जबकि आजकल ऐसी दृष्टि से परहेज और कहीं और से कृत्रिम दृष्टि लेने पर बल दिया जा रहा है। श्री रमेशचन्द्र शाह इस क्षण हमारे बीच एक विरल विभूति हैं तथा उनके हमारे बीच होने का हमें अधिकतम आलोक प्राप्त करना चाहिए। जो कि सतत भारतीयता के आलोक को कुत्साओं से ढांपे जाने से बचाते हुए उस आलोक में निमज्जित हो जीवन मोती (मूल्य) खोजने की विधि प्रस्तुत करते हैं। कुछ माह पूर्व उनकी एक कविता भी 'नया ज्ञानोदय' में गीता की पृष्ठभूमि में छपी थी, मन आनंद से भर उठा था।

श्री शंकर शरण का 'शार्ली आब्दो' के प्रसंग में अवसरवादी/वामपंथी लोगों की निष्ठाहीन टिप्पणियों को मानवता विरोधी तथा मात्र अपने हित में सुरक्षा अर्जित करने के घृणितलक्ष्य को बताते हुए लिखा गया लेख सचमुच साहस और शक्ति बढ़ाता है और सत्य और निष्ठा से हिंसा के विरुद्ध आवाज उठाने वालों से कहता है कि आप सही हो और अकेले भी नहीं।

पर ऐसे घृणित आलेखों/टिप्पणियों जैसा कि नंदिता हक्सर ने किया है को धिक्कारने वाले लोग कितने हैं? कहाँ हैं लेखक (हिन्दी के) चिंतक/विचारक/कैसा भयावह समय है कि लेखक समय की चिंताओं से चिंतित नहीं अपितु अपनी (मृतप्राय) प्रतिष्ठा के लिए चिंतित हैं।

राष्ट्र के निर्माण में संतों की क्या भूमिका है/थी/रहेगी पर चर्चा आरंभ होनी चाहिए।

-क्षमा कौल, (जम्मू)

•••

'अक्षरा' समाज और राष्ट्र के प्रति दायित्व बोध के प्रति सजग रहती आई है। यह एक कटु सत्य है कि भारतीय समाज अपने नागरिक दायित्वों के प्रति उदासीन ही नहीं उनकी अवहेलना करते भी दिखाई देता है। हम पानी की कम उपलब्धता की शिकायत करते हुए भी उसका अपव्यय करने से परहेज नहीं करते, यातायात की दुर्दशा के दोषी भी हम आमजन ही हैं। अपनी ही सुविधाओं के लिये बनाये गए नियमों का पालन करने में हमारी कतई रुचि नहीं। परम्परा के नाम पर यातायात बाधित करने में हमें किसी प्रकार का संकोच या शर्म नहीं। नदियों के प्रदूषण के दोषी कल-कारखानों से कहीं अधिक नदियों को पूजने और माता मानने वाले भक्तजन ही हैं जो अपनी हानिकारक प्रथाओं को छोड़ना ही नहीं चाहते। स्वच्छता के प्रति हमारी धारणाएँ भी अजीब हैं जिनमें आग्रह (दिखावा) तो खूब है किन्तु हमें गन्दगी फैलाने से कतई परहेज नहीं है। ऐसे अनेक क्षेत्र हैं जहाँ सुधार अपेक्षित है।

यह लिखने का मेरा मन्तव्य यह है कि 'अक्षरा' अपने अंकों में इस दिशा में जागृति फैलाने में भी सक्रिय पहल करे-सीधे सीधे सन्देश द्वारा अथवा 'क्या आप आदर्श नागरिक हैं?' जैसी प्रश्नावली के माध्यम से। लेख और कविताओं के माध्यम से भी इस लक्ष्य की ओर बढ़ा जा सकता है। यदि एक पृष्ठ इस मिशन के लिये सुरक्षित किया जा सके तो यह आपकी साहित्यिक पत्रिका के लिये गौरव का विषय होगा।

-चन्द्रशेखर पन्त, इन्दौर (म.प्र.)

•••

भूल सुधार

अक्षरा मार्च-अप्रैल २०१५ के पृष्ठ संख्या ९८ पर छटी पंक्ति का एक वाक्य अशुद्ध और अधूरा छप गया है। वह वाक्य इस प्रकार है:-

नज़र, ग़ज़ल, शरीफ़, टेबल, ऐप्पल, ऐलिफैण्ट, वॉक, कॉल दीज़, फ़ेल आदि शब्दों का हिन्दीकरण करके उन्हें क्रमशः नजर, गजल, सरीफ, टेबिल, ऐप्पिल, ऐलिफ्रैण्ट, वाक या वौक, काल या कौल, दीज, फेल न लिखें और न ही इस प्रकार उच्चारण करें।

सम्पादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पापा, आप यह पत्रिका किसलिए पसन्द करते हैं?' इस प्रश्न के साथ, बेटी डॉ. ऋचा सत्यार्थी के हाथ में, 'अक्षरा', का ताजा अंक था। इन दिनों मैं बुढ़ार (शहडोल) में हूँ, ऋचा यहाँ महिला-रोग-विशेषज्ञ हैं। प्रश्न बहुत सटीक है। मैंने उत्तर दिया-'केवल श्री रमेशचन्द्र शाह जी के 'सबद निरन्तर' के लिए!' शाह जी की कलम में जादू है, और मैं उस जादू का, उस जादूगर का मुरीद-'... मेरी चेतना में अभी तक अन्तर्नाद की तरह वह श्लोक ज्यों-का-त्यों स्पन्दित हो रहा है... अचानक उस नाद ने मुझे जहाँ-का-तहाँ कीलित कर दिया था!'

श्री कैलाशचन्द्र पन्त का सम्पादकीय-'शोध की दिशा क्या हो?' अत्यन्त विचारोत्तेजक एवम् समीचीन है-'... निर्गुण और सगुण धाराएँ दो विपरीत दिशाओं में प्रवाहित नहीं हो रही थीं। दोनों ही भारत की आध्यात्मिकता से जुड़ी आस्थावादी प्रवृत्ति का स्वर निनादित कर रही थीं। एक नाम-जप को महत्व दे रही थी, और दूसरी समाज की सुविधा के लिएं, नाम के आधार पर रूप का यशगान करती दिखाई देती है।'

एक सुन्दर आलेख का और नाम लेना चाहूँगा, श्री शंकर शरण का - ''शार्ली अब्दो' पर भारतीय पक्ष'' ... 'समय आ गया है कि उन्हें अंधविश्वास से निकल कर (या-निकाल कर), स्ततंत्र विवेक की दुनिया में आने का आग्रह किया जाए। खुला निमंत्रण दिया जाए। वे इस्लाम की मध्ययुगीन, बंद कोठरी से निकलकर-मानवता की उन्मुक्त फुलवारी में आ जाएँ, जहाँ रंग-बिरंगे फूल खिले हैं।' प्रस्तुत अंक सदा की भाँति सदाबहार है। शुभाकांक्षाएँ।

-शैवाल सत्यार्थी, ग्वालियर (म.प्र.)

♦♦♦

अक्षरा पत्रिका के प्रकाशित-साहित्य का एक-एक लेख-आलेख, कविता आदि का प्रत्येक भाव, उसमें निहित ज्ञान, उनकी शैली वास्तव में अक्षर-सागर में डुबकी लगा नख-शिख तक सराबोर होने योग्य है। अक्षरा का विभिन्न पुष्पों (लेखों, कविताओं, कहानियों) से सज्जित उद्यान रमण कर प्रसन्न और आनन्दविभोर कर देने में समर्थ है। अक्षरा की संपादकीय प्रत्येक अंक की पाठक-मन पर एक अमिट छाप छोड़ने में सशक्त व सक्षम है। हिन्दी साहित्य में यह पत्रिका निश्चित रूप से अपना उज्जवल भविष्य बनाए रखेगी ऐसा दृढ़ विश्वास है। प्रशंसनीय सम्पादकीय के लिए साधुवाद। समस्त प्रकाशनार्थ रोचक-सामग्री जुटाने वाले साहित्यकारों को हार्दिक अभिनंदन। परिश्रमी एवं कुशल संपादक मण्डल एवं प्रकाशक को उज्जवल भविष्य एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए मंगलकामनाएं।

-सुंनीता शर्मा, पालम विहार, गुड़गाँव

♦♦♦

अक्षरा का मार्च-अप्रैल २०१५ अंक मिला। मीडिया की नकारात्मक भूमिका पर लिखा आपका संपादकीय विचारणीय है। लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहलाने वाले इस मीडिया का चरित्र बाजारु और बिकाऊ हो गया है। जिसे केवल अपनी टी आर पी और प्रसारण बढ़ाने की फिक्र है। कॉरपोरेट घरानों का हितैषी और मुखापेक्षी होने के कारण समाज में इसकी छवि धूमिल हो रही है। शैलेष मटियानी की कविताएँ पहली बार पढ़ीं, मैं तो उन्हें कहानीकार ही जानता था। उनकी छान्देय कविताओं में उनके अनुभव, उनकी संवेदना और प्रकृति के प्रति उनका अनुराग दिखाई देता है। हरीश निगम और ब्रज श्रीवास्तव के नवगीत, प्रेमकुमारी नाहटा की कहानी 'हैरत' अंक की गरिमा बढ़ाते हैं।

-शिवकुमार अर्चन, भोपाल (म.प्र.)

♦♦♦

आप द्वारा प्रेषित अक्षरा का नवीन अंक मिला। अच्छा लगा। समायोजित सामग्री एवं संयोजन अच्छा है। अक्षरा श्री गणेश का अक्षर ज्ञान से लेकर ज्ञान दे रही है। साहित्य सेवा कर रही है। 'विमला बुआ' के 'सपनों के शहर' में ले जाकर 'बंटवारे' को महत्व दे रही है। बचपन के गुण गाती पाठकों से साधुवाद बुलवा रही है।

-रितेन्द्र अग्रवाल, जयपुर-३०२०१७ (राजस्थान)

♦♦♦

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

DELHI PUBLIC SCHOOL

(Under the aegis of The Delhi Public School Society, New Delhi)

Opp. 11 Kms Milestone, Kamptee Rd., Nagpur. Ph.: 0712-3244005 / 06, 2980060.

www.dpsnagpur.edu.in dpsnagpur@hotmail.com

• FEW ADVANTAGES OF DPS, NAGPUR •

SPORTS INFRASTRUCTURE

- DPS has 17 acres of lush green and quiet campus at Nagpur that is ambient for education. 7 acres of land is exclusively devoted for sporting activities.
- 400 m running track; dedicated space for High Jump, Long Jump and Shot Put.
- Football, Hockey & Cricket fields.
- Dedicated courts and coaches for Lawn Tennis, Handball, Volley Ball etc.

CO-CURRICULAR ACTIVITIES

- Separate block for performing co-curricular activities.
- Fully equipped dance room (front & side glasses and wooden flooring).
- Music room with self sufficient instruments; Art & craft room.
- Activity room to develop motor skills of the pre school children.

ACTIVITY ROOM

- Activity room to develop motor skills of the pre school children.

TALENT SEARCH

- All students upto class V have to participate in all sports and co-curricular activities by rotation. This is done to assess the aptitude of the child.
- Students from class VI onwards participate in sports and co-curricular activities basing on their aptitude.

MUSIC

- COLLABORATES WITH SHANKAR MAHADEVEN ACADEMY FOR MUSIC IN THE SCHOOL

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वित्तीय सेवाएं विभाग
वित्त मंत्रालय
भारत सरकार

संचालनालय
संस्थागत वित्त
मध्यप्रदेश शासन

वेबसाईट/पत्रिका

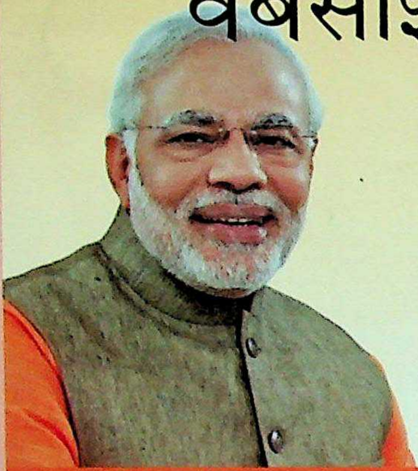

श्री नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

प्रधानमंत्री द्वारा समर्पित जीवन एवं दुर्घटना बीमा योजना, जन सुरक्षा के हित में

- प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना
- अटल पेंशन योजना
- प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना

बीमा अवधि, वार्षिक : 1 जून - 31 मई

- प्रीमियम की राशि खाताधारक के बचत खाते से बैंक द्वारा 'ऑटो डेबिट' सुविधा के माध्यम से.
- कोई भी व्यक्ति केवल एक बचत खाता द्वारा ही इन योजनाओं के लिए पात्र होगा.

तत्काल अपनी नज़दीकी बैंक शाखा या बैंक मित्र/बीमा एजेंट से संपर्क करें और आयोजित कैम्पों में जाएं एवं फार्म भरें और इस योजना का लाभ उठाएं

अधिक जानकारी के लिए टोल फ्री नंबर 1800 180 1111 पर कॉल करें या www.jansuraksha.gov.in/www.financialservices.gov.in पर जाएं.

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रकाशक : कैलाशचन्द्र पंत, मंत्री संचालक, म.प्र.रा.भा.प्र.स. एवं पं. रविशंकर शुक्ल हिन्दी भवन न्यास
मुद्रक : प्रियंका ऑफसेट, 25-ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, एम.पी.नगर जोन-I, भोपाल (म.प्र.)